मूल्य 20 रुपये

चौथी दुनिया

दिल्ली रविवार 19 जुलाई 2009

हिन्दी का पहला साप्ताहिक अखबार

भीतर

4 कानपुर में लड़कियों का भी जनेऊ

5 वक़्त के साथ चुनौतियां भी बदलीं : गृह सचिव

6 राजूखेड़ी दिखाता है गांवों के विकास का रास्ता

संसद, सर्वोच्च न्यायालय और सबसे बड़ी सेक्स मंडी

संतोष भारतीय

पिछले डेढ़ सौ सालों के इतिहास पर नज़र डालें, तो केवल छह केस अब तक धारा 377 के तहत चले. इनमें से भी केवल एक में 1935 में अदालत ने सज़ा सुनाई. दरअसल जिस धारा के तहत डेढ़ सौ सालों में केवल एक सज़ा सुनाई गई है, उसे हटाने के लिए मचे हाय-तौबा की असली कहानी कुछ और है.

सन साठ के दशक में अमेरिका में कई नई बातें हुईं, जिनमें एक था वहां पर ड्रग्स का फैलाव. इसने तेज़ी से नौजवानों को अपने जाल में जकड़ना शुरू किया. ड्रग्स, यानी नशीली दवाओं के कई प्रकार सामने आए. लेकिन नौजवान इसमें उतनी तेज़ी से नहीं फंसे, जितनी तेज़ी से वहां पर बना ताक़तवार ड्रग्स माफिया चाहता था. सरकार भी चेती और उसने सख्ती कर दी, परिणामस्वरूप ड्रग्स का फैलाव थोड़ा धीमा हो गया.

ड्रग्स का विरोध करने के लिए वहां कई सामाजिक संगठन खड़े हो गए. सेमीनार होने लगे, जिनमें बताया जाने लगा कि नशीली दवाएं ख़तरनाक हैं, इन्हें लेने वाला सपनों की दुनिया में चला जाता है, थोड़ी देर के लिए वह अपने वर्तमान से कट जाता है तथा संपूर्ण मुक्ति की अवस्था में वह पहुंच जाता है. ऐसी भाषा इस्तेमाल की जाने लगी कि सामाजिक व्यवस्था से विद्रोह करने के नाम पर नशीली दवाएं लेना सही रास्ता नहीं है. कई जगह यह भी बताया जाता था कि नशे की गोली या इंजेक्शन लेने पर लगता कैसा है. गोलियों और इंजेक्शनों को लेना किस मात्रा में ज़्यादा ख़तरनाक है, यह भी ड्रग्स विरोधी आंदोलनकारी बताते थे. सारा अमेरिका और यूरोप इन सेमीनारों, सभा, सम्मेलनों आदि के ज़रिए ड्रग्स के दुष्परिणामों से परिचित हो गया.

लेकिन सन पच्चासी में आकर एक नया खुलासा हुआ. चूंकि ड्रग्स माफिया ने एनजीओ खड़े कर दिए, सभाओं, सेमीनारों के लिए फंड करना शुरू कर दिया, इसलिए उसने ड्रग्स का विरोध करने के नाम पर ड्रग्स का प्रचार शुरू करवा दिया और अमेरिका और यूरोप में सफलतापूर्वक अपना धंधा तीन सौ गुना ज़्यादा बढ़ा लिया. सरकार समझ ही नहीं पाई कि उसकी नाक के नीचे इतना बड़ा ग़ैरक़ानूनी धंधा बढ़ गया जिसने वहां की राजनीति तक में अपना प्रभाव बढ़ा लिया. पुलिस, प्रशासन, राजनीति सभी इन माफिया ग्रुपों से डरने लगे. आज अमेरिका और यूरोप में सरकार के बाद की बड़ी ताक़त यही माफिया है, जिस पर हाथ डालना वहां की सरकारों के बस में भी नहीं रह गया है.

इससे मिलता-जुलता क़िस्सा हमारे देश में भी दोहराया जा रहा है, लेकिन यह ड्रग्स या नशीली दवाओं से जुड़ा नहीं है. हमारे देश में बड़ी मांग सालों पहले उठी कि हमारे यहां वेश्यावृत्ति को क़ानूनी दर्जा दे दिया जाए, वेश्याओं को लाइसेंस दिए जाएं ताकि वे टैक्स दें, अपने स्वास्थ्य की जांच कराएं और चोरी छुपे धंधा कर समाज का स्वास्थ्य न चौपट करें. यह अभियान सफल नहीं हो पाया, क्योंकि भारत की बड़ी आबादी के संस्कारों के कारण अभियान केवल सभा सेमीनारों तक ही सीमित रह गया, इसे जन समर्थन नहीं मिल पाया. भारत में एक क़ानून है, तीन सौ सतहत्तर. यह क़ानून कहता है कि कोई भी अप्राकृतिक यौन संबंध बनाए, चाहे वह पुरुष करे, महिला करे या कोई पशुओं के साथ करे, उसे क़ानूनन आजीवन कारावास तक का दंड दिया जा सकता है. चाहे यह काम खुले रूप में हो या किसी बंद कमरे में, दंड एक ही होगा. दस साल पहले देश में कुछ संस्थाओं ने आवाज़ उठाई कि यह क़ानून होमो सेक्सुअल लोगों की आज़ादी में बाधा डालता है. बंद कमरे में सैकड़ों सालों से बहुत कम लोग यह काम करते रहे हैं, चाहे वे पुरुष हों या स्त्री. बच्चे जब बड़े होने लगते हैं तो उनमें अपने विकसित होते अंगों को लेकर उत्सुकता होती है और वे आपस में आकर्षित हो जाते हैं. लेकिन सोलह साल आते-आते उनमें समझ आ जाती है. बहुत-सी जगहों पर, जहां वयस्कों को स्त्री के पास जाने का अवसर नहीं मिलता, वहां भी एक बहुत छोटी संख्या अप्राकृतिक यौन संबंध अस्थाई तौर बना लेती है. अभी भी सौ करोड़ के मुल्क में अंगुलियों पर भी गिने जाने लायक लोग नहीं हैं जो कहें कि उन्हें अप्राकृतिक यौन संबंध बनाने का अधिकार दिया जाए.

इसके बावजूद देश में ऐसे एनजीओ बनने लगे जो इन संबंधों की वकालत करने लगे. इनमें से कुछ ने कहा कि अप्राकृतिक यौन संबंधों की वजह से एड्स के फैलने का ख़तरा ज़्यादा है, इसलिए ऐसे लोगों का समूह हाई रिस्क ग्रुप है. और चूंकि तीन सौ सतहत्तर धारा की वजह से ये लोग सामने नहीं आते तो हम उनका इलाज और काउंसिलिंग नहीं कर पाते. इसलिए यह धारा समाप्त होनी चाहिए. जब हम अप्राकृतिक यौन संबंध की बात या होमो सेक्सुअल की बात कहते हैं तो इसे पुरुष और पुरुष के बीच का सेक्स संबंध मानना चाहिए, क्योंकि अभी तक स्त्री और स्त्री के बीच का सेक्स संबंध एड्स के कारणों के फैलाव में नहीं गिना जा रहा. मज़े की बात यह कि सरकार के पास न कोई अध्ययन रिपोर्ट है और न सरकारी आंकड़ा है कि पुरुष से पुरुष के सेक्स संबंध से कितनों में एड्स का फैलाव हुआ और उनमें अब तक कितने मरे. इतना ही नहीं, एड्स की जांच में औरतों की संख्या और पुरुषों की संख्या अलग-अलग आई है तथा यह पता चला कि जिस औरत को एड्स है उससे संपर्क रखने वाले पुरुष को एड्स हुआ और उस पुरुष ने जिस औरत से आगे संपर्क किया उसे एड्स हो गया. पर कोई सबूत नहीं है कि दो स्वस्थ पुरुष आपस में संपर्क करें, या सेक्स करें और उन्हें एड्स हो जाए. इस बात का हिंदुस्तान में प्रचार बहुत ज़्यादा किया गया, जबकि इसका न सरकारी सबूत है और न ही वैज्ञानिक अध्ययन. बिल्कुल उसी तरह जैसे पिछड़े इलाक़े में किसी को डायन घोषित कर उसे मार डाला जाए.

अब धारा तीन सौ सतहत्तर पर एक नज़र डाली जाए. इस धारा को ख़त्म करने की मांग को लेकर उन्नीस सौ छियानवे से सारे देश में सेमीनारों की एक श्रृंखला प्रारंभ हुई और उसका प्रचार कुछ ऐसा था कि इस धारा की वजह से देश में होमो सेक्सुएलटी छुपे तौर पर बढ़ रही है, जिससे एड्स बढ़ रहा है, और यदि इस बीमारी का सामना करना है तो इस धारा को हटाना चाहिए अन्यथा होमोसेक्सुअल सामने नहीं आएंगे और उनका उत्पीड़न बढ़ेगा. इसका सबसे मज़ेदार पहलू है कि आज़ादी के बाद देश में एक भी ऐसा केस सामने नहीं आया, जिसे धारा तीन सौ सतहत्तर के अंतर्गत अदालत ने सुन कर सज़ा सुनाई हो.

और पीछे चलते हैं और पिछले डेढ़ सौ सालों के इतिहास पर नज़र डालते हैं. केवल छह केस अब तक इस क़ानून के तहत चले, जिनमें केवल एक केस में 1935 में अदालत ने सज़ा सुनाई. जिस धारा के तहत डेढ़ सौ सालों में केवल एक सज़ा सुनाई गई हो, उसे हटाने के लिए करोड़ों ख़र्च कर देश में सेमीनारों की श्रृंखला शुरू करवा दी गई. सन दो हज़ार में दिल्ली में एक बड़ा सेमीनार हुआ जिसमें क़ानून के क्षेत्र से रिश्ता रखने वाले अधिकांश व्यक्तियों को शामिल करने की सफल कोशिश की गई. यह सेमीनार एक बड़े पांच सितारा होटल में हुआ, जिसमें मौजूदा और रिटायर हो चुके न्यायाधीश तथा सोली सोराबजी जैसे वकील शामिल हुए. सेमीनार से ध्वनि निकली कि अगर कोई एनजीओ आगे आए तो देश की न्यायपालिका इस केस पर विचार करने को तैयार है.

इसके बाद ही दिल्ली हाई कोर्ट में इस धारा को हटाने के लिए याचिका एक एनजीओ ने दाख़िल की, जिसे हाई कोर्ट ने 2004 में डिसमिस कर दिया. इसके बाद रिव्यू पिटीशन डाली गई, उसे भी हाई कोर्ट ने रिजेक्ट कर दिया. तब वह एनजीओ सुप्रीम कोर्ट गया, जहां सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि वे इसे नहीं सुनेंगे और हाई कोर्ट से कहा कि वह इस केस को सुने और तमाम पहलुओं को, जिन्हें याचिकाकर्ता मानता है कि ध्यान नहीं दिया गया है, सुने और फ़ैसला दे. अब दिल्ली हाई कोर्ट का फ़ैसला आया है कि जब तक देश की संसद इस पर अपनी राय नहीं देती, तब तक धारा तीन सौ सतहत्तर के तहत प्राइवेट में अप्राकृतिक सेक्स की परिभाषा के तहत आने वाले केस स्थगित रहेंगे और प्राइवेट में आपसी सहमति से मैन टु मैन यानी पुरुष से पुरुष संपर्क हो सकता है और इसे ग़ैर क़ानूनी नहीं माना जाएगा.

देश में इसका स्वागत इस तरह किया गया है मानो पूरा देश होमो सेक्सुअल मानसिकता का है और उसे अब खुल कर संबंध बनाने की आज़ादी मिल गई है. भारतीय मीडिया का उत्साह विश्व में काफी उत्सुकता से देखा गया और लगभग बड़े अख़बारों और टी.वी. चैनलों ने इसे भारत का समर्थन करना बताया.

(शेष पृष्ठ 2 पर)

फोटो – प्रभात पाण्डेय

देश में समलैंगिकता का स्वागत इस तरह किया गया है मानो पूरा देश होमो सेक्सुअल मानसिकता का है और उसे अब खुल कर संबंध बनाने की आज़ादी मिल गई है. भारतीय मीडिया का उत्साह विश्व में काफी उत्सुकता से देखा गया और लगभग बड़े अख़बारों और टी.वी. चैनलों ने इसे भारत का समर्थन करना बताया. हम फिर ध्यान दिला दें कि भारत में समलैंगिकता या पुरुष से पुरुष संपर्क को सामाजिक मान्यता तो दूर, स्वयं पुरुष वर्ग में काफी घृणा की दृष्टि से देखा जाता है. तब आख़िर इस फ़ैसले का मतलब क्या है और इसका अर्थ क्या निकलता है, इसे जानना चाहिए.

दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

बाबुओं की बल्ले-बल्ले

बाबुओं के लिए सरकार छठे केंद्रीय वेतन आयोग की एक और सिफ़ारिश लागू कर रही है. ऐसा वह समयबद्ध तरक्की की नीति में सुधार लाकर कर रही है. करियर में निश्चित तौर पर प्रगति (एसीपी) की सिफ़ारिश पांचवें वेतन आयोग ने की थी. इसके तहत समूह ए के बाबुओं के लिए तीन बार समयबद्ध तरक़्क़ी की, जबकि ग्रुप बी, सी और डी के लिए दो बार समयबद्ध तरक़्क़ी देने की व्यवस्था की गई थी. हालांकि बाबुओं ने इसका स्वागत भी किया था. फिर भी इसमें कुछ कमी रह गई, जिसे सरकार अब सुधारने की कोशिश कर रही है. सूत्रों के मुताबिक इस योजना के तहत जो बाबू अधिक मध्यवर्ती पदों वाले संस्थानों में काम करते थे, उनको

नुक़सान हुआ. इसकी वजह यह थी कि उनकी तरक़्क़ी दूसरे संस्थानों के उनके सहकर्मियों की तुलना में उन्हें कम आय मुहैया कराती थी.

सूत्रों के अनुसार सरकार ने इस अव्यवस्था को आख़िरकार दूर करने की कोशिश की है. सरकार ने ग्रुप ए, बी और सी बाबुओं को तीन बार समयबद्ध तरक़्क़ी देने की योजना बनाई है. प्रशिक्षण समाप्त करने के बाद ग्रुप डी वालों को ग्रुप सी में ले लिया जाएगा. सरकार ज़ाहिर तौर पर बाबुओं को ख़ुश करने के लिए यह क़दम उठा रही है, लेकिन क्या बाबू लोग भी सरकार को पहले सौ दिनों के एजेंडे को पूरा करने में मदद देंगे?

कॉरपोरेट पद्धति

अब गुजरात शिक्षा विभाग कॉरपोरेट पद्धति को अपनाने की योजना बना रहा है, कम से कम बाबुओं के काम की समीक्षा के मामले में. सरकार ने प्रायोगिक तौर पर काम का पूरा जायज़ा लेने के लिए अहमदाबाद के मानव-संपदा कंसल्टेंट को भाड़े पर लिया है.

इस तरीक़े से बाबू अपने वरिष्ठों, अधीनस्थों, सहयोगियों से फीड बैक ले सकेंगे. पहले, गुजरात में बाबुओं के काम का फ़ैसला बड़े अधिकारी ही करते थे. अब फ़ैसला करने वालों के वर्ग बढ़ने से बाबुओं के पास इसके अलावा कोई चारा नहीं कि वे सबसे बेहतर संबंध बनाएं रखें.

राज्य सरकार इसी तरह की योजना सरकारी स्कूलों के प्रिंसिपल और शिक्षकों के लिए भी बनाना चाहती है. इससे पहले जयंती रवि, जो राज्य शिक्षा विभाग में कमिश्नर रहे थे, इस तरह की व्यवस्था का सुझाव दे चुके हैं, ताकि विद्यार्थी ही अपने शिक्षक का मूल्यांकन कर सके.

साउथ ब्लॉक
अंजुम ए ज़ैदी

जेएस माथुर बने संयुक्त सचिव

जेएस माथुर (मध्य प्रदेश काडर के 1982 बैच के आईएएस अधिकारी) की नियुक्ति पेयजल (सप्लाई) विभाग में संयुक्त सचिव के पद पर हुई है. वह अमिताभ भट्टाचार्य (गुजरात काडर के 1980 बैच के आईएएस अधिकारी) का स्थान लेंगे. पांच सितंबर 2009 को कार्यकाल समाप्त होने के बाद अमिताभ को नया कार्यभार सौंपा जाएगा.

उपमा का स्थान गर्ग लेंगे

सुभाष चंद्र गर्ग- जो राजस्थान काडर के 1983 बैच के आईएएस अधिकारी हैं-की कृषि विभाग और सहयोग में संयुक्त सचिव के पद पर नियुक्ति हो सकती है. गर्ग, उपमा श्रीवास्तव का स्थान लेंगे जो सिक्किम काडर के 1983 बैच के आईएएस अधिकारी हैं. उपमा श्रीवास्तव एक जुलाई से एपीपीए कोर्स में चली गई हैं.

बीएस मीणा किसी अन्य मंत्रालय में

बीएस मीणा महाराष्ट्र काडर के 1974 बैच के आईएएस अधिकारी हैं. वर्तमान में वह स्टील मंत्रालय में विशेष सचिव हैं. हाल में उनके नाम को सचिवों की सूची में शामिल किया गया है. संभावना यह थी कि उनका तबादला कृषि मंत्रालय के पशुपालन, डेयरी एंड फिशरिज डिपार्टमेंट में सचिव के पद पर होगा. लेकिन अब उन्हें किसी अन्य मंत्रालय में भेजा जा सकता है.

दंगे में विदेशी हाथ मान रहा है चीन

चीन के जिंजियांग प्रांत में भड़की सांप्रदायिक हिंसा ने पड़ोसी मुल्कों को भी चिंता में डाल दिया है. बीते रविवार को अल्पसंख्यक उइगरों का हुआ विरोध प्रदर्शन इतना विकराल रूप भी ले सकता है, यह किसी ने सोचा भी न था. दरअसल वे दो उइगर कर्मचारियों की मौत का विरोध कर रहे थे. इन दो उइगर कर्मचारियों की मौत 26 जून को गुआंगदोंग प्रांत की एक खिलौना फैक्टरी में हुए विवाद में हुई थी.

ग़ौरतलब है कि मुस्लिम उइगर चीन से आज़ादी चाहते हैं. लगभग एक दर्जन उइगर गुआंटानामो बे में अमेरिका की क़ैद में हैं. अमेरिका का कहना है कि वे रिहाई केयोग्य हैं, लेकिन समस्या यह है कि उनको किस देश को सौंपा जाए. अमेरिका ने उत्पीड़न के भय से उइगर क़ैदियों को वापस लौटाने की चीन की मांग ठुकरा दी है. वैसे चीन का यह इलाक़ा पहले भी दंगे का गवाह बनता रहा है.

पिछले साल अगस्त में भी दंगे से यह क्षेत्र दहल गया था. दरअसल पिछले साल चार अगस्त को काशगर में पुलिस के 17 जवानों की मौत हो गई थी, जिसे चीन ने आतंकी हमला कहा था. शिनजियांग में मुस्लिम समुदाय की संख्या लगभग 80 लाख है,

फोटो- *पीटीआई*

जो सरकार पर अपने अधिकारों के दमन का आरोप लगाते हैं.

वहां उइगर दरअसल तुर्की के मूल के मुसलमान हैं. जिस इलाक़े में दंगा भड़का, उसमें इस समुदाय की आबादी 45 प्रतिशत है, जबकि हान चीनी लोगों की संख्या 40 प्रतिशत है. ग़ौरतलब है कि पूर्वी तुर्किस्तान पर चीन ने 1949 में दोबारा क़ब्ज़ा जमा लिया. इसके बाद वहां बड़ी संख्या में हान चीनी बसने लगे हैं. उइगर लोग अपनी पारंपरिक संस्कृति को लेकर बहुत चिंतित रहते हैं.

चीन की कम्युनिस्ट सरकार का मानना है कि यह हिंसा सोच-समझकर की गई और यह संगठित अपराध था. चीन सरकार इसे विदेश से उकसाया तथा निर्देशित किया गया मान रही है. इस बीच, अमेरिका में उइगर कांग्रेस ने प्रत्यक्षदर्शियों के हवाले से कहा है कि पुलिस ने बहुत से उइगरों को गोलियों से भून डाला है. संगठन ने 800 से ज़्यादा लोगों के मारे जाने का दावा किया है. चीन में हुए इस दंगे को लेकर अमेरिका ने भी लोगों को संयम बरतने को कहा है. व्हाइट हाउस के प्रवक्ता रॉबर्ट गिब्स ने एक बयान जारी कर दोनों पक्षों से संयम बरतने की अपील की है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

संसद, सर्वोच्च न्यायालय और सबसे बड़ी सेक्स मंडी

पृष्ठ एक का शेष

हम फिर ध्यान दिला दें कि भारत में समलैंगिकता या पुरुष से पुरुष संपर्क को सामाजिक मान्यता तो दूर, स्वयं पुरुष वर्ग में काफी घृणा की दृष्टि से देखा जाता है. तब आख़िर इस फ़ैसले का मतलब क्या है और इसका अर्थ क्या निकलता है, इसे जानना चाहिए. हाई कोर्ट के इस फ़ैसले ने भारत के इक्कीसवीं शताब्दी में जाने के रास्ते खोल दिए हैं. और वह रास्ता जाता है दुनिया की तीसरी सबसे ताक़तवर इंडस्ट्री-सेक्स इंडस्ट्री-के द्वारा देश को अमेरिका और यूरोप से बड़े सेक्स हब में बदलने का. एक मोटे अनुमान के अनुसार अमेरिकी माफ़िया द्वारा नियंत्रित सेक्स इंडस्ट्री तीन ट्रीलियन डॉलर की है, अर्थात इसका टर्नओवर तीन ट्रीलियन डॉलर है. अमेरिकी फार्मा इंडस्ट्री, ड्रग्स इंडस्ट्री, आर्म्स इंडस्ट्री और सेक्स इंडस्ट्री ये चार ताक़तवर उद्योग हैं जो सारी दुनिया को अपने क़ब्ज़े में लेने की योजना बना रहे हैं. जहां-जहां इनकी जड़ें मज़बूत होती हैं वहां की सरकारें, राजनीति, उद्योग, न्यायव्यवस्था सभी इनके इर्द-गिर्द घूमने लगती हैं. अमेरिका और यूरोप के किसी भी देश में जाइए, आपको इसके खुले स्वरूप देखने को मिल जाएंगे. वहां गे पार्लर हैं, गे क्लब हैं, फ्रैंडशिप क्लब हैं, एस्कोर्ट सर्विस हैं. एक समानांतर सरकार सेक्स इंडस्ट्री द्वारा नियंत्रित होती है. उनकी अपनी पुलिस है, न्याय व्यवस्था है, सरकार है जो संवैधानिक व्यवस्था को जब चाहे अपनी तरफ़ से तोड़-मरोड़ कर अपना अस्तित्व दिखाती रहती है.

इस ताक़तवर सेक्स इंडस्ट्री ने अमेरिका और यूरोप से बाहर मैक्सिको, ब्राज़ील,

फोटो- *प्रभात पाण्डेय*

फिलीपींस और थाईलैंड को विश्व के आकर्षक सेक्स केंद्रों में बदल दिया है, जहां दुनिया भर के लोग सेक्स टूरिज़्म के लिए जाते हैं. सन अस्सी के बाद से विश्व सेक्स माफ़िया की निगाह भारत पर थी, क्योंकि भारत ही एशिया में सबसे आसान निशाना है. पाकिस्तान सहित इस्लामिक देशों में सेक्स हब बनाने की कोशिश तक नहीं की जा सकती थी. लंका, नेपाल छोटे देश हैं. हालांकि नेपाली लड़कियों का बाज़ार छोटे माफिया गिरोहों ने भारत में खोल दिया है. चीन कम्युनिस्ट देश है, जहां अभी यह संभव नहीं है. पूर्वी यूरोप के देशों में अमेरिकी माफिया ने सेक्स की छोटी-छोटी मंडियां ज़रूर बनाई हैं, पर उनका सपना तो एक बड़े बाज़ार का था. भारत से बेहतर यह जगह हो ही नहीं सकती थी.

इसके लिए एड्स के हाई रिस्क ग्रुप की कहानी भारत में हक़ीक़त बनाई गई और बिना आधार के होमोसेक्सुअल को हाई रिस्क ग्रुप में डाल दिया गया. जिन्होंने तीन सौ सतहत्तर का विरोध किया, उन्हें इतने बड़े पैमाने पर अभियान चलाने के लिए फंड कहां से आया? इस फंड के स्रोत का कभी पता नहीं चल पाएगा. दिल्ली में जीबी रोड पर 2500 के क़रीब सेक्स वर्कर हैं. यहां से एचआईवी के फैलने का ख़तरा सबसे ज़्यादा है, लेकिन यहां तो कोई एनजीओ कारगर काम कर नहीं रहा. उसी तरह दिल्ली में पचास हज़ार से ज़्यादा महिलाएं सेक्स के धंधे में शामिल हैं जो अच्छी कॉलोनियों में रहती हैं और कहीं भी उपलब्ध हो जाती हैं, उनके बीच भी कोई एनजीओ एड्स को लेकर काम नहीं कर रहा. धारा तीन सौ सतहत्तर एक बांध की तरह थी, जिसे उन ताक़तों ने तोड़ दिया जो देश को एक बड़े सेक्स बाज़ार में बदलना चाहती हैं.

अब होमो सेक्सुअल के गे क्लब और गे पार्लर बनेंगे, जिन्हें हम जल्दी ही दिल्ली, मुंबई, कोलकाता, चेन्नई और बेंगलुरु में देखेंगे. धारा तीन सौ सतहत्तर के अप्रभावी हो जाने से इनके निर्माण में कोई बाधा नहीं रह गई है. इसकी अगली कड़ी वेश्यावृति को क़ानूनी दर्जा दिलाने की होगी, क्योंकि बिना उसके एड्स नियंत्रण का कार्यक्रम प्रभावी रूप से चलाया नहीं जा सकता. यह तर्क भी हमारे ज़्यादा सोचने-समझने वाले निर्णायकों को पसंद आएगा और तब हम देखेंगे देश को एक बड़े सेक्स बाज़ार के रूप में. ग़रीबी की आग में जलता देश अंतरराष्ट्रीय माफिया के लिए आदर्श जगह है, जहां से दुनिया के दूसरे हिस्से में भी गर्म गोश्त सप्लाई हो सकता है. अब लिबरलाइज़ेशन का ज़माना है. विश्व बाज़ार की चौथे नंबर की टर्नओवर वाली सेक्स इंडस्ट्री का भारतीय हिस्सा 50 बिलियन डॉलर के आसपास आंका जा रहा है. यहीं सवाल खड़ा करना चाहिए कि भारत की संसद और भारत का सर्वोच्च न्यायालय क्या अपनी आंख, नाक, कान बंद किए हुए हैं? क्या उन्हें नहीं दिखाई देता कि एक फ़ैसला भारत को दुनिया के सबसे बड़े सेक्स बाज़ार में बदल देगा और हम मैक्सिको, फिलीपींस, थाईलैंड और ब्राज़ील से भी बड़े गर्म गोश्त के हब बन जाएंगे? सुप्रीम कोर्ट को तत्काल अपनी तरफ़ से दखल देना चाहिए. संसद को संज्ञान लेना चाहिए. क्या दो जज एक फ़ैसले से भारत की क़िस्मत लिख सकते हैं? हमारी न्यायप्रणाली कहती है कि जजों से भी चूक हो सकती है, इसलिए सुप्रीम कोर्ट को तुरंत हस्तक्षेप करना चाहिए. हमारा विश्वास है कि भारत का सर्वोच्च न्यायालय और भारत की संसद अमेरिकी माफिया के दबाव में अभी नहीं है, इसलिए वह हिंदुस्तान की बुनियादी संस्कृति और संविधान निर्माताओं की मंशा को ध्यान में रख कर फ़ैसला लेगी. हम उस क्षण का बेसब्री से इंतज़ार कर रहे हैं, जब सर्वोच्च न्यायालय और भारत की संसद की आंख खुलेगी.

editor.chauthiduniya@gmail.com

चौथी दुनिया
हिन्दी का पहला साप्ताहिक अख़बार

आर एन आई रजि.न.45843/86

वर्ष 23 अंक 18, 13-19 जुलाई 2009

प्रधान संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के-2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनाट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के-2, गैनन
चौधरी बिल्डिंग
कनाट प्लेस
नई दिल्ली 110001

फोन न.
संपादकीय +91 011 47149999
विज्ञापन +91 011 47149916
प्रसार +91 011 47149905
फैक्स न. +91 011 47149906

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

दुनिया

बजट कम, बाज़ीगरी अधिक

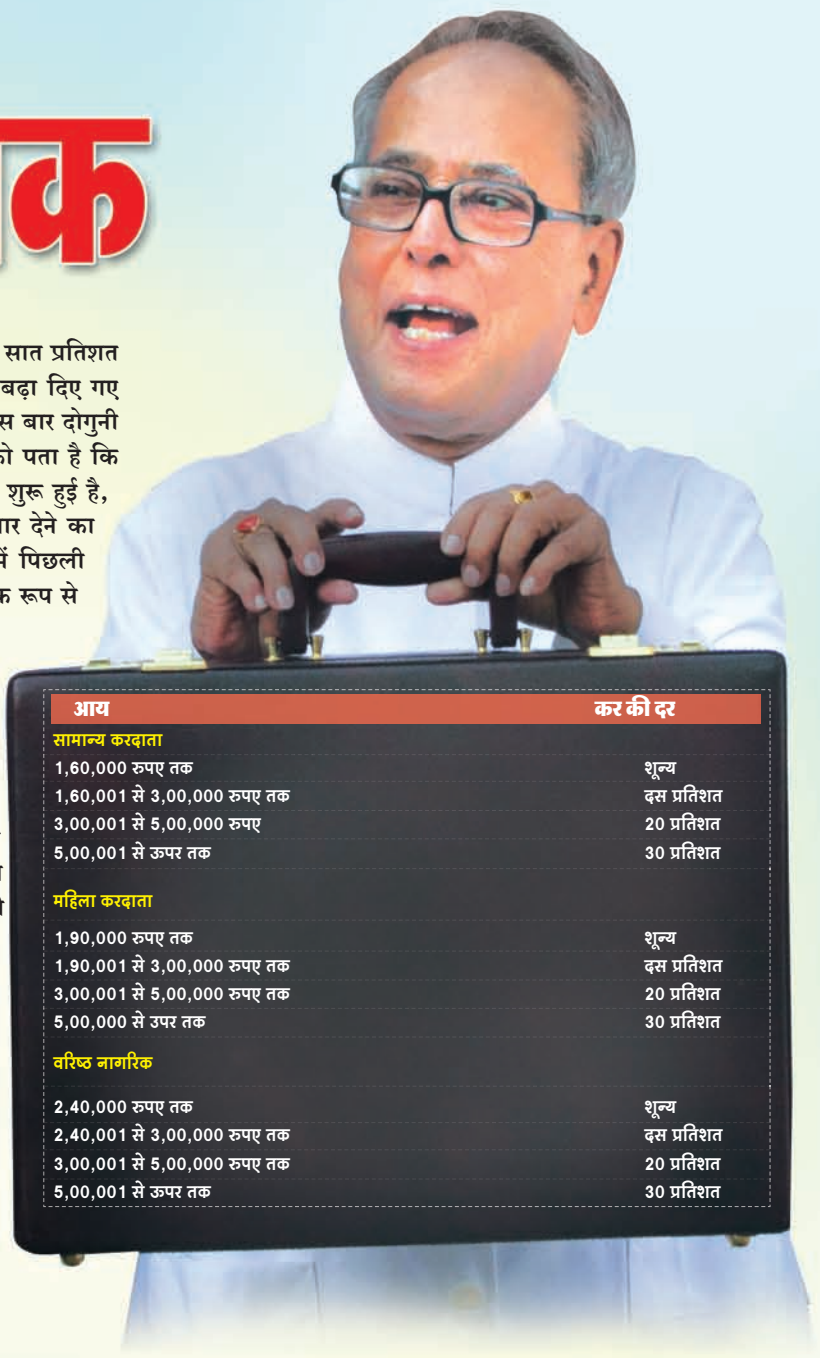

ख़ास बातें

युवाओं के लिए

- आईटी और एनआईटी संस्थानों केलिए 2113 करोड़ रुपये दिए गए
- अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी के मुर्शिदाबाद (प. बंगाल) और मल्लपुरम (केरल) कैंपस को 25 करोड़ रुपये
- पंजाब यूनिवर्सिटी चंडीगढ़ को 50 करोड़ रुपये की ग्रांट
- एजुकेशन लोन पर सब्सिडी देने का ऐलान
- महिला शिक्षा के लिए राष्ट्रीय मिशन बनेगा
- हर साल 1 करोड़ 20 लाख नौकरियां

शहरी ग़रीबों और बीपीएल के लिए

- शहरी ग़रीबों के लिए आवास और बुनियादी सहूलियतों केलिए बजट बढ़ाया गया
- गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों को स्वास्थ्य सेवा केलिए बायोमेट्रिक स्मार्ट कार्ड
- सबके लिए आई-कार्ड योजना की शुरुआत
- हर नागरिक को बायोमेट्रिक आइडेंडिटी कार्ड मिलेगा
- दूरदराज केइलाक़ों में बैंक खोलने के लिए 100 करोड़ रुपये
- गरीबी रेखा से नीचे ज़िंदगी बसर कर रहे 46 लाख परिवार हेल्थ इंश्योरेंस स्कीम में आएंगे

आम आदमी और योजनाएं

- छोटी कंपनियों केविकास केलिए सिडबी को ज़्यादा फंड दिया जाएगा. खाद्य सुरक्षा क़ानून जल्द से जल्द लाने की योजना
- खाद्य सुरक्षा क़ानून केतहत ग़रीबों को चावल और गेहूं तीन रुपये प्रति किलोग्राम मुहैया कराए जाएंगे
- लड़कियों की शिक्षा को लेकर नेशनल मिशन शुरू होगा
- एक्सपोर्ट क्रेडिट गारंटी स्कीम मार्च 2010 तक बढ़ाई गई

पहली नज़र में बजट देश के विकास दर को बढ़ाने के उद्देश्य से बनाया गया लगता है. लेकिन ऐसा कोई असाधारण क़दम इस बजट में नज़र नहीं आता, जिससे बहुत बड़ी उम्मीद की जा सके. सच पूछिए तो यह बजट आर्थिक सुधारों का दूसरा दौर शुरू करने वाला कतई नहीं लगता. इसलिए कि इसमें कई विषयों को गोल कर दिया गया है. जैसे, बैंकिंग और श्रम सुधारों पर वित्त मंत्री प्रणव मुखर्जी चुप रह गए हैं. विनिवेश के बारे में उन्होंने कुछ ख़ास नहीं कहा. तेल क्षेत्र में क़ीमतों का मसला सुलझाने के बारे में बस एक समिति बनाने की बात कह दी. विदेशी निवेश पर कोई लाइन नज़र नहीं आती. वित्त मंत्री ने नौ प्रतिशत विकास दर के लक्ष्य को फिर से पाने का संकल्प दोहराया है, पर उनके बजट में उस तक पहुंचने का रास्ता नहीं दिखता. वैसे बुनियादी ढांचे पर ख़र्च को बढ़ाना और 2014 तक इसे जीडीपी के नौ प्रतिशत पर लाने का ऐलान यह जताता है कि सरकार बुनियादी ढांचे को अपनी प्राथमिकता सूची में ऊपर रखेगी. साथ ही, इसमें सरकारी-निजी साझेदारी (पीपीपी) के मॉडल पर ज़ोर भी दिया जाएगा, जो अच्छी बात है. लेकिन राजकोषीय घाटे का पिछले 18 सालों के उच्चतम स्तर तक पहुंचना ठीक नहीं है. इस बजट ने देश के राजकोषीय घाटे को अनुमानित 2.7 प्रतिशत से बढ़ाकर लगभग सात प्रतिशत कर दिया है. आर्थिक मंदी को छिपाने के लिए सरकारी ख़र्च बढ़ा दिए गए हैं. राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी अधिनियम (नरेगा) के लिए इस बार दोगुनी से भी ज़्यादा (144% अधिक) रक़म दी गई है. पर यह सबको पता है कि सरकार द्वारा आवंटित पैसे का क्या होता है. जब से यह स्कीम शुरू हुई है, तब से आज तक किसी भी राज्य ने अपने यहां सौ दिन रोज़गार देने का लक्ष्य हासिल नहीं किया है. सबसे अच्छा रिकार्ड राजस्थान में पिछली वसुंधरा राजे सरकार के दौरान रहा-77 दिनों का. आश्चर्यजनक रूप से सर्वहारा की राजनीति करने वाले वाम मोर्चे के शासन वाले राज्य पश्चिम बंगाल में यह आंकड़ा मात्र 14 दिनों का ही है. यह दुखद है कि ग्रामीण विकास के नाम पर हर साल हज़ारों करोड़ रुपये ख़र्च किए जाते हैं, लेकिन गांवों की दशा में कोई विशेष परिवर्तन देखने को नहीं मिलता. आम जनता को लक्ष्य कर लगातार बढ़ाई जाती सब्सिडी का लाभ भी लक्ष्य तक नहीं पहुंचता. बजट दस्तावेज के अनुसार साल 2000-01 में कुल 26,838 करोड़ रुपये की सब्सिडी सरकार देती थी, जो साल 2009-10 में बढ़कर 1,11,276 करोड़ रुपये हो जाएगा. यानी पिछले 10 सालों में सब्सिडी बढ़कर पांच गुणा हो गई है.

आय	कर की दर
सामान्य करदाता	
1,60,000 रुपए तक	शून्य
1,60,001 से 3,00,000 रुपए तक	दस प्रतिशत
3,00,001 से 5,00,000 रुपए	20 प्रतिशत
5,00,001 से ऊपर तक	30 प्रतिशत
महिला करदाता	
1,90,000 रुपए तक	शून्य
1,90,001 से 3,00,000 रुपए तक	दस प्रतिशत
3,00,001 से 5,00,000 रुपए तक	20 प्रतिशत
5,00,000 से उपर तक	30 प्रतिशत
वरिष्ठ नागरिक	
2,40,000 रुपए तक	शून्य
2,40,001 से 3,00,000 रुपए तक	दस प्रतिशत
3,00,001 से 5,00,000 रुपए तक	20 प्रतिशत
5,00,001 से ऊपर तक	30 प्रतिशत

सस्ता

एलसीडी टीवी, दस जीवनरक्षक दवाएं, मोबाइल फोन, वाटर प्यूरीफायर, मकान, बॉयोडीजल, कंबल, कालीन, सीएलएफ बल्ब, प्रेशर कुकर, ट्यूबलाइट, कंप्यूटर सॉफ्टवेयर.

महंगा

सेट टॉप बॉक्स, सोने और चांदी का आयात, कपड़े, काग़ज़, गत्ते, कॉटन, किचन एप्लाएंसेस

कर और राहत

- कमोडिटी ट्रांजेक्शन टैक्स ख़त्म किया गया
- कॉरपोरेट टैक्स में कोई बदलाव नहीं
- टेक्सेशन की प्रक्रिया को आसान बनाने के लिए सरल-2 फॉर्म
- आयकर पर लगने वाला 10 प्रतिशत का सरचार्ज ख़त्म. आम नागरिकों की आयकर छूट की सीमा 10,000 रुपये और बढ़ी
- महिलाओं की इनकम टैक्स छूट की लिमिट में भी 15000 की बढ़ोतरी. सीनियर सिटिजन की टैक्स छूट की सीमा में 15,000 रुपये की बढ़ोतरी.
- डॉक्टरों, वकीलों पर सर्विस टैक्स लगाया गया
- मालगाड़ी से सामान भेजने पर सर्विस टैक्स देना होगा

सैन्य बलों के लिए तोहफा

- रिटायर्ड सैनिकों के लिए एक रैंक-एक पेंशन स्कीम लागू होगी
- अर्धसैनिक बलों केजवानों को सेना के बराबर भत्ते मिलेंगे
- अर्धसैनिक जवानों केलिए एक लाख मकान बनाए जाएंगे

ग्रामीण भारत की चिंता

- सौ गांवों में शुरू होगी प्रधानमंत्री आदर्श ग्राम योजना
- कृषि ऋण माफी स्कीम छह महीने केलिए बढ़ी
- 1000 दलित गांवों में घर बनाए जाएंगे
- किसानों को सात प्रतिशत की ब्याज दर पर कर्ज़ मिलेगा

प्लान और स्कीमों के सहारे विकास

- कॉमनवेल्थ गेम्स को 3472 करोड़ रुपये
- नेशनल गंगा प्रोजेक्ट केलिए बजट बढ़ाकर 562 करोड़ रुपये किया गया
- इंदिरा आवास योजना का बजट 63 प्रतिशत बढ़ाकर 8,883 करोड़ किया गया
- नरेगा के लिए 39100 करोड़ रुपये का प्रावधान
- अल्पसंख्यक मंत्रालय के लिए 1740 करोड़ रुपये

ठगा महसूस करता मध्यवर्ग

यह बजट एक तरफ़ जहां ग्रामीण क्षेत्र को थोड़ी राहत पहुंचाने वाला है, वहीं शहर में रहने वाले मध्यवर्ग को कोई बहुत बड़ी राहत देने वाला नहीं है. नौकरी पेशा वर्ग को राहत का झुनझुना देने की कोशिश की गई है.

अल्पसंख्यकों का ख़याल

वित्त मंत्री ने अलीगढ़ विश्वविद्यालय केपश्चिम बंगाल और केरल में जहां दो नए कैंपस खोले जाने का प्रस्ताव किया, वहीं पंजाब विश्वविद्यालय के लिए बजट निर्धारण कर आने वाले विधानसभा चुनावों का ध्यान भी रखा है.

उपेक्षित रहा सेवा क्षेत्र

सेवा क्षेत्र ने सरकार को मंदी में बढ़ी राहत दी थी और उम्मीद की जा रही थी कि इसको और मज़बूती देने के लिए कोई बड़ी घोषणा होगी. लेकिन ऐसा हो न सका.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

ममता की मेहरबानी

प्रमुख घोषणाएं

- यात्री किराए और माल भाड़े में कोई वृद्धि नहीं
- युवा ट्रेन के नाम से युवाओं के लिए ख़ास तोहफा
- 299 रुपये में 1500 किलोमीटर तक का सफ़र
- 399 रुपये में 3000 किलोमीटर का सफ़र
- तत्काल का टिकट दो दिन पहले
- 12 नॉन स्टॉप ट्रेनें चलाई जाएंगी
- नॉन स्टॉप ट्रेनें तुरंत शुरू होंगी
- नए ट्रैक केलिए 2220 करोड़ रुपये
- कोलकाता मेट्रो का विस्तार होगा
- आदर्श स्टेशनों पर शॉपिंग मॉल, पार्किंग और बुक स्टॉल की सुविधा
- खाद्य पदार्थों को सुरक्षित रखने के लिए कोल्ड स्टोरेज
- ट्रेन में खाना, पानी और शौचालय जैसी बुनियादी सुविधाओं पर ध्यान
- देश के50 रेलवे स्टेशन अंतरराष्ट्रीय स्तर के बनेंगे
- वित्त पोषण के लिए नई समिति का गठन होगा
- रोज़गार के अवसर देना पहली प्राथमिकता
- रेलवे की ज़मीन का उद्योग के लिए इस्तेमाल
- बंगाल के काचरापाड़ा में एक नई कोच फैक्टरी
- एसएमएस के ज़रिए वेटिंग टिकट की स्थिति की जानकारी
- चेन्नई के कारखाने में बनेंगे डिब्बे
- इज़्ज़त के नाम से ग़रीबों के लिए नई योजना
- इसमें 25 रुपये में 100 किलोमीटर का मासिक पास
- 1500 रुपये प्रतिमाह आय वाले पास
- डीएम की सिफ़ारिश पर मिलेगा पास
- पत्रकारों के लिए किराए में 50 फीसदी की छूट
- पत्रकारों की पत्नी को भी छूट
- कोलकाता, चेन्नई और दिल्ली में लेडीज स्पेशल ट्रेन
- सभी ट्रेनों में ग्रीन टॉयलेट की सुविधा
- 200 नए शहरों में आरक्षण केंद्र बनेंगे
- देश में 309 आदर्श स्टेशन बनेंगे
- रायबरेली आदर्श स्टेशन बनेगा
- 200 रेलवे स्टेशनों पर यात्री निवास बनाए जाएंगे
- सफाई के लिए नया पायलट प्रोजेक्ट
- दस नए सूचना केंद्र बनाए जाएंगे
- लंबी दूरी की हर ट्रेन में डॉक्टर की सुविधा होगी
- राजधानी, शताब्दी में मनोरंजन की सुविधा
- 200 स्टेशनों पर ऑटोमेटिक टिकट
- इंटरसिटी ट्रेनों में डबल डेकर कोच की शुरुआत होगी
- डबल डेकर कोच एसी वाले होंगे
- रेल सुरक्षा पर लगातार ज़ोर रहेगा
- रेलवे के लिए कमांडो बटालियन की स्थापना
- रेलवे सुरक्षा में महिला कमांडो की नियुक्ति होगी
- रेलवे भर्ती बोर्ड की समीक्षा होगी
- माल ढुलाई में निजी भागीदारी होगी
- रेलवे में खेल कोटे से नियुक्तियां होंगी
- एससी, एसटी, विकलांग कोटे में नियुक्तियां शीघ्र
- 18000 रेलवे वैगन ख़रीदे जाएंगे
- ऑप्टिकल फाइबर नेटवर्क का विकास
- रेलवे स्टेशनों पर मल्टी फंक्शनल कॉम्प्लेक्स बनाए जाएंगे
- विकलांगों और बुजुर्गों केलिए स्पेशल कोच की व्यवस्था
- रेलवे में भ्रष्टाचार ख़त्म करने पर ज़ोर
- सात नए नर्सिंग कॉलेज खोलने की योजना

वैसे तो ममता बनर्जी ने पंद्रहवीं लोकसभा का पहला रेल बजट पेश किया है. लेकिन आज़ादी के बाद से अब तक पेश होने वाला यह रेल बजट भी पंद्रहवां ही है. जहां तक रेल मंत्रियों की बात है, तो अब तक देश में कुल 30 रेल मंत्री हुए हैं. ममता बनर्जी ने अपने इस रेल बजट को दो साल बाद पश्चिम बंगाल में होने वाले विधानसभा चुनाव को ध्यान में रख कर तैयार किया है. इसलिए लोकलुभावनी बातों की इसमें भरमार रही. वाहवाही लूटने के लिए पैंतरे जमकर दिखाए गए हैं, भले ही मैदान में लड़ी जा रही जंग हाथ से निकल ही क्यों न जाए. रेल बजट में 57 नई ट्रेनें दी गईं, ग़रीबों के लिए 25 रुपये के मासिक पास और रेल कर्मचारियों के कल्याण के लिए नई योजनाओं की घोषणा की गई. ऐसा करते हुए पश्चिम बंगाल उनकी नज़रों के सामने बराबर बना रहा. उन्होंने अपने गृह राज्य के लिए एक नई कोच फैक्टरी, नॉन स्टॉप ट्रेनों के साथ-साथ कोलकाता मेट्रो में छात्रों के लिए छूट जैसे तोहफों की घोषणा भी की. ऊपर से यह रेल बजट जितना भी अच्छा लगे, लेकिन हक़ीक़त यह है कि इस बजट से रेलवे की वित्तीय व्यवस्था में बड़े सुराख भी नज़र आए. इनका असर यक़ीनन नई पटरियों और लाइनों के लिए किए जाने वाले निवेश पर दिखेगा. बहरहाल, रेल बजट पर एक

सबका ख़याल

ग़रीबों को विशेष राहत दी गई है. उन्हें 25 रुपये में मासिक पास दिए जाएंगे. अमीरों को नान स्टॉप ट्रेनों का तोहफा मिला है. आरक्षण की दिक़्क़तें दूर करने के लिए मोबाइल टिकट वेंडिंग वैन होंगे. रेलयात्रियों को कम पैसे में जनता खाना फिर से मिलेगा. बोगियों में सफाई और साफ-सुथरे कंबल-चादर पर है. रास्ते में बुख़ार और चोट की स्थिति में यात्रियों का इलाज ट्रेन में ही हो जाएगा, क्योंकि डाक्टर साहब ट्रेन में ही मिल जाएंगे.

तत्काल योजना में सुधार

तत्काल योजना के तहत अग्रिम बुकिंग की अवधि पांच दिन से घटाकर दो दिन कर दी गई है. साथ ही तत्काल टिकट एक सिरे से दूसरे सिरे तक के बजाय गंतव्य के अनुसार उपलब्ध कराए जाएंगे. इससे यात्रियों पर वित्तीय भार में कमी आएगी. तत्काल प्रभार अब किराए के प्रतिशत के रूप में लिया जाएगा, जो मौजूदा 150 रुपये न्यूनतम के बजाय सौ रुपये न्यूनतम होगा

फोटो- प्रभात पाण्डेय

महिलाओं का ध्यान

महिलाओं को अब रेलवे पर गुस्सा कम आएगा. उनके लिए स्टेशनों पर अलग शौचालय तथा डार्मिटरी की सुविधा होगी. उनके लिए लोकल ट्रेनों में शौचायल की व्यवस्था की जाएगी. साथ ही ट्रेनों में विशेष महिला रेल सुरक्षा दस्ते भी चला करेंगे.

कर्मचारियों का कल्याण

कर्मचारियों के लिए कई योजनाएं बनाई गई हैं. साढ़े छह हज़ार से अधिक क्वाटर के अलावा कई इनडोर स्टेडियम भी बनाए जाएंगे. ग्रुप-डी कर्मचारियों की लड़कियों को शिक्षा में छात्रवृत्ति मिलेगी, जबकि रेलवे अस्पतालों में मरीज़ों के साथ आने वालों के लिए डार्मिटरी का इंतज़ाम होगा.

नई गाड़ियां

1. विशाखापत्तनम -सिकंदराबाद-मुंबई सुपरफास्ट, सप्ताह में दो दिन
2. श्रीगंगानगर-दिल्ली -नांदेड़ सुपरफास्ट, साप्ताहिक
3. न्यू जलपाईगुड़ी-सियालदह-नांदेड़ सुपरफास्ट, सप्ताह में तीन दिन
4. बेंगलुरू-हुबली-शोलापुर सुपरफास्ट. सप्ताह में तीन दिन
5. हावड़ा-बेंगलुरू सुपरफास्ट, साप्ताहिक
6. पुणे-शोलापुर सुपरफास्ट, प्रतिदिन
7. रांची-हावड़ा इंटरसिटी, तीन दिन वाया घाटशिला-खड़गपुर और तीन दिन वाया आसनसोल
8. कामख्या-पुरी एक्सप्रेस, साप्ताहिक
9. जबलपुर-अंबिकापुर एक्सप्रेस, सप्ताह में तीन दिन
10. गांधीधाम-हावड़ा सुपरफास्ट, साप्ताहिक
11. दिल्ली-सादुलपुर एक्सप्रेस, सप्ताह में तीन दिन
12. अजमेर-भोपाल एक्सप्रेस, प्रतिदिन
13. बिलासपुर-तिरून्नवेली-तिरुवनंतपुरम सुपरफास्ट, साप्ताहिक
14. मुंबई-कारवार सुपरफास्ट, सप्ताह में तीन दिन
15. दुर्ग-जयपुर एक्सप्रेस, साप्ताहिक
16. डिब्रूगढ़ टाउन-चंडीगढ़ एक्सप्रेस, साप्ताहिक
17. दिल्ली-फरक्का एक्सप्रेस, सप्ताह में दो दिन
18. निज़ामुद्दीन-बेंगलुरू राजधानी एक्सप्रेस, वाया काचेगुड़ा-सप्ताह में तीन दिन
19. न्यू जलपाईगुड़ी-दिल्ली एक्सप्रेस, वाया बरौनी- सप्ताह में दो दिन
20. मुंबई-वाराणसी सुपरफास्ट, प्रतिदिन
21. मैसूर-यशवंतपुर एक्सप्रेस, प्रतिदिन
22. कोरापुट- राउरकेला एक्सप्रेस, वाया रायगढ़ा, प्रतिदिन
23. आगरा-अजमेर इंटरसिटी सुपरफास्ट, प्रतिदिन
24. मुंबई-जोधपुर-बीकानेर सुपरफास्ट, सप्ताह में दो दिन
25. आगरा-लखनऊ इंटरसिटी, प्रतिदिन
26. हापा तिरुन्नवेली सुपरफास्ट, वाया तिरुवनंतपुरम-सप्ताह में दो दिन
27. ग्वालियर-भोपाल इंटरसिटी एक्सप्रेस, सप्ताह में पांच दिन-वाया गुणा
28. कन्याकुमारी-रामेश्वरम एक्सप्रेस, सप्ताह में पांच दिन-वाया मदुरै
29. हावड़ा-हरिद्धार सुपरफास्ट, सप्ताह में पांच दिन
30. वाराणसी-जम्मूतवी सुपरफास्ट-प्रतिदिन
31. गोरखपुर-मुंबई सुपरफास्ट, प्रतिदिन
32. नई दिल्ली-गुवाहाटी राजधानी एक्सप्रेस, साप्ताहिक-वाया मुजफ्फरपुर
33. बीरावाल-मुंबई लिंक एक्सप्रेस, प्रतिदिन
34. रांची पटना जनशताब्दी एक्सप्रेस, प्रतिदिन
35. झांसी-छिंदवाड़ा एक्सप्रेस, सप्ताह में दो दिन-वाया बीना, भोपाल
36. मुंबई-जोधपुर एक्सप्रेस, साप्ताहिक
37. जमालपुर-गया पैसेंजर, प्रतिदिन
38. झाझा-पटना एमईएमयू, प्रतिदिन
39. कानपुर-नई दिल्ली शताब्दी एक्सप्रेस, सप्ताह में छह दिन
40. भोपाल-लखनऊ-प्रतापगढ़ सुपरफास्ट, साप्ताहिक
41. लखनऊ-रायबरेली-बेंगलुरू सुपरफास्ट, साप्ताहिक
42. शिमोगा-बेंगलूर इंटरसिटी एक्सप्रेस, प्रतिदिन
43. मदुरै-चैन्नई, सप्ताह में दो दिन
44. गुवाहाटी-न्यू कूचबिहार इंटरसिटी एक्सप्रेस, प्रतिदिन
45. बेलूरघाट-न्यू जलपाईगुड़ी एक्सप्रेस, प्रतिदिन-वाया किशनगंज
46. अलीपुरद्धार-न्यू जलपाईगुड़ी इंटरसिटी एक्सप्रेस, प्रतिदिन-वाया सिलीगुड़ी
47. धर्मनगर-अगरतला फास्ट पैसेंजर, प्रतिदिन
48. रेवाड़ी-फुलेरा पैसेंजर, प्रतिदिन-वाया रिंगस
49. शोरानूर-नीलांबूर रोड पैसेंजर, प्रतिदिन
50. कोयंबटूर-शोरानूर पैसेंजर, प्रतिदिन
51. मथुरा-कासगंज पैसेंजर, प्रतिदिन
52. फरक्का- कटवा-अजीमगंज-नवद्धीपधाम एक्सप्रेस, प्रतिदिन
53. बेंगलुरू-कुप्पीवेली सुपरफास्ट, साप्ताहिक
54. कोलकता-रामपुर हाट एक्सप्रेस, प्रतिदिन
55. न्यू जलपाईगुड़ी-दीघा एक्सप्रेस, साप्ताहिक
56. पुरुलिया-हावड़ा एक्सप्रेस, सप्ताह में दो दिन
57. कोलकता-बीकानेर एक्सप्रेस, साप्ताहिक-वाया नागौर

दुनिया

रुक नहीं रही है ममता की आंधी

पालिका चुनावों ने भी वाममोर्चे को दिखाया रेड सिगनल

फोटो– देबज्योति चक्रवर्ती

कोलकाता के पास मध्यमग्राम में धांधली करने वाले एक कैडर को पकड़ कर ले जाती पुलिस.

बिमल राय

देश के दूसरे राज्यों की तरह इस साल पश्चिम बंगाल में भी पानी भरी मानसूनी हवाओं ने इंतज़ार करवाया. थोड़ी बेइमानी भी की. उत्तर बंगाल में सूखे जैसा सीन था तो दक्षिण बंगाल में आइला की तबाही. इतना पानी कि लोगों तक राहत पहुंचाने को लेकर केंद्र से राज्य तक अच्छी–खासी राजनीति भी हो गई. पर बंगाल में एक हवा जो सालों से उत्तर से दक्षिण तक एक ही रफ़्तार से बह रही है, वह है बदलाव की हवा. इस हवा ने वामपंथियों को बेचैन कर दिया है तो ममता बनर्जी को सपने जैसी दिखती आ रही मुख्यमंत्री की कुर्सी को सिर्फ़ दो हाथ दूर ला खड़ा किया है. और अगर यह हवा इसी तरह और डेढ़ दो साल बहे, तो बंगाल में 34 साल बाद विपक्षी खेमे में बसंत आएगा.

पहले पंचायत चुनाव, फिर लोकसभा और इस बार नगरपालिका और नगर निगम चुनाव. 1 जुलाई को राज्य के 10 जिलों की 16 पालिका व नगर निगम चुनावों के परिणामों से भी इस हवा के नब्ज़ का पता चला. 16 में से 13 पर तृणमूल और कांग्रेस का क़ब्ज़ा हो गया. वाममोर्चा को सिर्फ़ 3 पर जीत हासिल हुई. 1989 में गठन के बाद से ही त्रिस्तरीय सिलीगुड़ी महकुमा परिषद पर वाममोर्चा का क़ब्ज़ा था, पर वहां की कुल सात सीटों में से तीन सीटें जीतकर कांग्रेस ने ज़बर्दस्त झटका दिया. 2004 के चुनावों में इन 16 पालिकाओं में से वाममोर्चे ने 10 पर जीत का झंडा गाड़ा था. कांग्रेस ने चार और तृणमूल के खाते में एक एकरा नगरपालिका थी. अब तक लाल दुर्ग रहा बर्दवान जिले ने भी ख़ासकर माकपा का साथ छोड़ दिया. 50 सदस्यीय आसनसोल नगर निगम के चुनाव में तृणमूल को 18 और कांग्रेस को 11 सीटें मिलीं, जबकि वाममोर्चा को केवल 20 का सांत्वना पुरस्कार मिला. 2004 में इस निगम की 39 सीटें वामदलों की झोली में थीं. आसनसोल के क़रीब कुल्टी नगरपालिका और हाल में बनी डानकुनी नगरपालिका पर भी तृणमूल का क़ब्ज़ा हो गया. माकपा के मज़बूत संगठन का काफी ढोल पीटा जाता है, पर कोलकाता से सटे दमदम और दक्षिण दमदम नगरपालिकाओं के हाथ से जाने से मज़बूती की भी पोल भी खुल गई है. 40 साल बाद इन पर विपक्ष का क़ब्ज़ा हुआ है. दमदम में वामदलों को 9 और तृणमूल को 13 सीटें मिलीं, जबकि यहां पर कभी खाता न खोलनेवाली कांग्रेस ने पांच सीटें जीत ली हैं. दक्षिण दमदम में पिछली बार 33 सीटें जीतने वाले वाममोर्चे को केवल 11 सीटों से संतोष करना पड़ा है, जबकि एक सीट वाली तृणमूल ने 18 सीटें जीतकर बोर्ड पर क़ब्ज़ा कर लिया है.

पिछले आम चुनावों में वाममोर्चे को 43.3 प्रतिशत वोट मिले, जो 2004 की तुलना में 7.42 प्रतिशत कम थे. इसमें माकपा को अगर अलग किया जाए तो उसे 5.5 प्रतिशत का नुक़सान हुआ है. 2004 में उसे 33 प्रतिशत मत मिले थे. माकपा के अपने आकलन के मुताबिक वाममोर्चा विधानसभा की 294 सीटों में 195 पर पिछड़ गया था, जबकि 2006 के विधानसभा चुनावों में उसने 235 सीटें जीती थीं. 2006 के विधानसभा चुनावों की तुलना में भी वाममोर्चे को 6.88 प्रतिशत कम वोट मिले हैं. इसी तरह राज्य में तृणमूल और एसयूसीआई गठबंधन ने 45.67 प्रतिशत और भाजपा ने 6.14 प्रतिशत वोट हासिल कर ख़तरे की घंटी बजा दी है. लोकसभा चुनावों के परिणामों ने बताया है कि तृणमूल–कांग्रेस गठजोड़ ने कुल 294 विधानसभा क्षेत्रों में से 182 पर बढ़त हासिल की. ग़ौर करने की बात है कि जिन 99 सीटों पर वाममोर्चे को बढ़त हासिल हुई है, उनमें से मात्र 41 पर ही उसे 50 प्रतिशत से ज़्यादा वोट मिले.

विपक्ष की यह कामयाबी एक और अर्थ में अहम है. नगरपालिका चुनावों के लिए इस बार कांग्रेस और तृणमूल के बीच औपचारिक समझौता नहीं हुआ था, अगर लोकसभा चुनावों की रणनीति अपनाई गई होती तो विपक्षी खेमे को उत्तर बंगाल की माल नगरपालिका भी हासिल हो सकती थी. दरअसल, ममता कांग्रेस को केवल उत्तरबंगाल और मध्य बंगाल के उसे प्रभाव वाले क्षेत्रों तक ही सीमित रखना चाहती हैं. कुछ ऐसा ही इरादा कांग्रेस का भी है. पिछली बार लाख नाक रगड़ने के बावजूद ममता ने कांग्रेस को दक्षिण बंगाल की एक भी सीट नहीं दी. इसे लेकर दोनों दलों के बीच कुछ समय तक गतिरोध भी बना रहा. सांप्रदायिक ताक़तों को दूर रखने के लिए कांग्रेस मजबूरन वामदलों का सहयोग लेती रही है, जबकि ममता इसके सख्त ख़िलाफ़ हैं. यही वजह है कि गंठबंधन भी वे अपनी शर्तों पर करती हैं. वैसे इस बार भी तहे दिल से दोनों दल मिले होते तो कम से कम एक और मान नगरपालिका इनके खाते में आ सकती थी और वामदलों को 16 में से केवल दो पर संतोष करना पड़ता.

परिणामों पर सत्ताधारी दल के नेताओं के रोचक बयान आए हैं. माकपा के राज्य सचिव विमान बोस ने माना है कि लोकसभा चुनावों के समय का वोटिंग पैटर्न नहीं बदला है, पर वे अपने एक बयान को भूल गए. हार की झेंप मिटाने के लिए उन्होंने कहा था कि लोगों ने केंद्र में एक स्थिर सरकार के लिए वोट डाला है, क्योंकि माकपा की अगुआई वाले तीसरे मोर्चे और भाजपा की सांप्रदायिक राजनीति पर उसका भरोसा नहीं था. अब उनसे कौन पूछे कि क्या पालिका चुनावों में भी वही राष्ट्रीय मुद्दे काम कर रहे थे? वैसे, वाम नेता चेहरे पर घबराहट के लक्षण नहीं आने दे रहे. उनमें ग़ज़ब की साफगोई भी दिख रही है. जैसा कि राज्य के परिवहन मंत्री सुभाष चक्रवर्ती ने कहा कि हमें झटका लगा है, पर इससे उबरने में समय लगेगा, क्योंकि लोग अगर आपको नहीं चाहते तो आप कैसे सत्ता में रहेंगे? हालांकि उन्होंने उम्मीद ज़ाहिर की कि 2001 के विधानसभा चुनावों तक इस बदलाव की हवा का रुख़ बदल देंगे. अगले साल कोलकाता नगर निगम के चुनावों से भी उनके दावे की हक़ीक़त की एक झलक देखने को मिल सकती है. 2005 के चुनावों में माकपा ने कोलकाता की कुर्सी तृणमूल से छीन ली थी. उस समय कहा जाता था कि तृणमूल का प्रभाव केवल कोलकाता तक ही सीमित है और ममता बनर्जी सिर्फ़ कोलकाता की नेता हैं, पूरे बंगाल की नहीं. ज़ाहिर है सिंगूर और नंदीग्राम के आंदोलनों का ही असर है कि कमज़ोर संगठन के बावजूद उन्हें पूरे राज्य में शानदार कामयाबी मिल रही है. ममता के सामने इस बढ़त को बरकरार रखने की चुनौती है. वैसे रेल बजट में बंगाल के लिए ढेर सारी घोषणाएं कर ममता ने अपना इरादा जता दिया है. वह दिल्ली से ज़्यादा समय कोलकाता में बिता रही हैं. अपने मंत्रियों को भी उन्होंने ऐसा ही आदेश दिया है.

इधर, वाम खेमे की गांवों में घटते जनाधार को रोकने की कोशिशें नाकाफी साबित हो रही हैं. कभी भूमि सुधारों के ज़रिए कृषि क्रांति लाने का दावा करने वाले कॉमरेडों के राज में किसानों को कालाबाज़ार से खाद ख़रीदनी पड़ रही है. खाद तस्करी के ज़रिए बांग्लादेश चला जा रहा है और सीमा पर बीएसएफ इसे रोकने में कामयाब नहीं हो पा रही है. गेहूं, दाल और तिलहन के उत्पादन में राज्य लगातार पिछड़ रहा है. पिछले साल झुलसा रोग के कारण आलू की फ़सल झुलस गई. इस वजह से आलू बाज़ार में आग लगी है. बंगाली मध्यवर्ग भी खीझा हुआ है. हाल में हुगली जिले के चुंचुड़ा गए मुख्यमंत्री ने ख़ुद माना कि राज्य में बीज का उत्पादन मांग के अनुरूप नहीं हो रहा है. हाल में विधानसभा में राज्य के बजट पर हो रही बहस में कांग्रेस के विधायक असित माल ने एक मार्के का सुझाव दिया कि सिंगूर में कार फैक्टरी की जगह अगर खाद का कारखाना लगाने की पहल होती तो किसानों का ज़्यादा भला होता .

भूमि सुधारों वाली दुधारी गाय सूख गई है. ज़मींदारों का एक वर्ग गया तो 32 साल से बिल्डरी और सरकारी ठेके का माल खा रहे कॉमरेडों का एक नया मालदार वर्ग तैयार हो गया है. हिस्सेदारी को लेकर असंतोष है. यह क्या स्वाभाविक नहीं है कि केवल छाछ पीकर रहने वाले कॉमरेड चुनाव जैसे मौके पर अपनी नाराज़गी ज़ाहिर करें? माकपा के संगठन में आई दरार की सबसे बड़ी वजह यही है. सबसे पहले माकपा को कैडरों के बीच के इस असंतोष को दूर कर फिर जनता की असली तकलीफ़ों का इलाज करना होगा. कुछ वैसा भी करना होगा, तो कभी आंध्र में रामराव ने किया था और अभी तमिलनाडु में करुणानिधि और छत्तीसगढ़ में रमन सिंह कर रहे हैं.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

कानपुर में लड़कियों का भी जनेऊ

कानपुर कभी देश के चुनिंदा औद्योगिक शहरों में शुमार होता था. आज यह महिला सशक्तीकरण में अग्रणी भूमिका निभाने की ओर अग्रसर हो रहा है. यूं तो माता–पिता को बेटियों द्वारा मुखाग्नि दिए जाने के उदाहरण अब लगभग पूरे देश में ही देखने को मिलने लगे हैं. लेकिन कानपुर की लड़कियां इससे भी आगे निकल जनेऊ तक कराने लगी हैं.

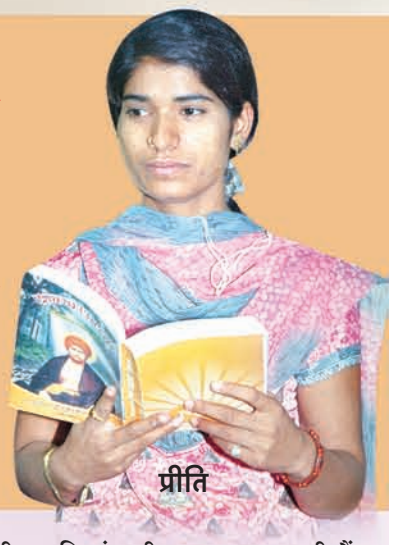

प्रीति

कृतिका

हमारे आसपास की दुनिया तेज़ी से बदल रही है. इस बात का अहसास कई बार हमें देर से होता है. उत्तर प्रदेश में कानपुर शहर भी इन दिनों कई तरह के बदलावों से गुज़र रहा है. कभी यह शहर देश के चुनिंदा औद्योगिक शहरों में शुमार होता था. आज यह महिला सशक्तीकरण में अग्रणी भूमिका निभाने की ओर अग्रसर हो रहा है. यूं तो माता–पिता को बेटियों द्वारा मुखाग्नि दिए जाने के उदाहरण अब लगभग पूरे देश में देखने को मिलने लगे हैं. लेकिन कानपुर की लड़कियां इससे भी एक क़दम आगे निकलतीं हुईं जनेऊ तक कराने लगी हैं.

अपने पिता की अंतिम इच्छा को पूरी कर उनकी चिता को मुखाग्नि देने वाली विनीता और जनेऊ धारण कर गायत्री मंत्र का जाप करने वाली प्रीति शुक्ला जैसी लड़कियां इस बदलाव का प्रतीक बन रही हैं. देश की आधी आबादी अपने को हर मोर्चे पर साबित करने के लिए बेताब ही नहीं है, बल्कि उन परंपराओं को तोड़ देने के लिए भी बेचैन है जिनके नाम पर उसे अब तक बेड़ियों में बांधकर रखा गया है. आम तौर पर बेहद परंपरावादी माने जाने वाले कानपुर के समाज में पिछले दिनों घटी घटनाएं इसी ओर इशारा करती हैं. पिछले दिनों एक अवकाश प्राप्त रेलवे कर्मचारी की बेटी ने अपने पिता की चिता को मुखाग्नि देकर समाज की पुरानी सोच को चुनौती दे डाली थी. ग़ौरतलब है कि हिंदू धर्म में बेटे को ही पिता की अर्थी को कंधा देने का अधिकारी समझा जाता रहा है. बीपीटी की पढ़ाई कर रही विनीता तीन बहनें है. उनके पिता को यक़ीन था कि बेटियां बेटों का फ़र्ज़ अदा करेंगी. विनीता ने न सिर्फ़ अपने पिता की अंतिम इच्छा को पूरा किया, बल्कि उनके यक़ीन को भी सच साबित कर दिखाया. देखने लायक बात यह होगी उस पिता का यक़ीन देश में और कितनों को इस बात के लिए प्रेरित कर पाता है.

बदलाव की प्रतीक बनी विनीता

जहां तक बात प्रेरणा की है, तो बदलाव की बयार सिर्फ़ विनीता तक आकर नहीं रुकी है. प्रीति शुक्ला जैसी लड़कियां उसे आगे बढ़ा रही हैं. वह गायित्री मंत्र और जनेऊ ही धारण नहीं करती, बल्कि अंतिम संस्कार तक करा रही हैं. संस्कारों की नई परिभाषा गढ़ने वाली लड़कियों में से ज़्यादातर कानपुर के विद्यामंदिर कॉलेज की स्टूडेंट हैं. यहां सिर्फ़ लिंगभेद की दीवारें नहीं टूट रहीं, बल्कि जाति के बंधन भी टूट रहे हैं. प्रीति इस कॉलेज में वोकेशनल संस्कृत पढ़ाती हैं. यहां की कम से कम 40 से अधिक छात्राएं जनेऊ धारण करती हैं. प्रिंसिपल आशारानी राय ख़ुद भी जनेऊ पहनती हैं. वह इन दिनों एक उत्सव की तैयारी में जुटी हुई हैं. वह अक्टूबर में कॉलेज की सिल्वर जुबली को बड़े पैमाने पर मनाने की तैयारी कर रही हैं. इससे भी आगे वह इस मौके पर छात्राओं का सामूहिक उपनयन संस्कार कराने की तैयारी भी कर रही हैं. संस्कारों की नई परिभाषा गढ़ने को बेताब प्रीति जैसी लड़कियों की राह आसान नहीं है. ख़ुद उसे पहली बार कर्मकांड की पढ़ाई और उसके बाद उसे व्यवहार में उतारने में परिवार और समाज की बंदिशों को झेलना पड़ा. समय के साथ न केवल उसके परिवार की सोच बदली है, बल्कि और भी लड़कियां उसी राह पर चल पड़ी हैं. रूढ़ियां टूटने के लिए बनी हैं, यह यक़ीन लगातार मज़बूत हो रहा है. बात सिर्फ़ बनी बनाई परंपराओं के टूटने तक सीमित नहीं है. पढ़ाई के क्षेत्र में लड़कियां ख़ुद को लगातार लड़कों से आगे साबित करती आई हैं. इसी शहर की एक लड़की आईआईटी जेईई की परीक्षा में गर्ल्स टॉपर बनी. डॉक्टर दंपति की संतान कृतिका सेंगर ने जहां उस परीक्षा में अखिल भारतीय स्तर पर 56वीं रैंक हासिल कर अपने माता–पिता को ग़ौरवान्वित किया, वहीं लड़कियों के वर्ग में सबसे ऊपर भी रहीं. इतना ही नहीं, इसी शहर में जगह–जगह खुले मार्शल आर्ट स्कूलों में जूडो–कराटे से लेकर ताइक्वांडों की ट्रेनिंग लेती लड़कियां आधी आबादी के बढ़ते आत्मविश्वास को भी दर्शा रही हैं. हाल के दिनों में झपटमारों से ख़ुद निपटने का जज़्बा महिलाओं ने ख़ूब दिखाया है. इन सबसे शहर की संस्कृति में एक अलग तरह की सकारात्मक ऊर्जा का प्रवाह साफ महसूसा जा सकता है. संक्षेप में कहा जा सकता है कि वक़्त भले लगता हो, लेकिन बेड़ियों को तोड़ना कठिन नहीं है.

एन. नाथ

feedback.chauthiduniya@gmail.com

वक़्त के साथ चुनौतियां भी बदलीं : गृह सचिव

भारतीय प्रशासनिक सेवा में गोपाल कृष्ण पिल्लई ने परिवार की तीसरी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व किया है. वह 1972 में इस सेवा के लिए चयनित हुए. उनके दादा त्रावणकोर राज्य में राजस्व सचिव रहे है, जबकि पिता स्वास्थ्य मंत्रालय में सचिव रहे. ग़ौरतलब है कि पिल्लई के ननिहाल पक्ष की पृष्ठभूमि भी प्रशासनिक सेवा की ही है. प्रशासनिक शक्ति को इतने क़रीब से देखने वाले पिल्लई आज गृह सचिव के रूप में देश की सबसे शक्तिशाली प्रशासनिक कुर्सी पर इतनी शालीनता से बैठे है जिसका अंदाज़ा उनसे पहली मुलाक़ात में ही लग जाता है. आज प्रशासन से सीधे तौर पर उनका जुड़ाव सैंतीस सालों का हो चुका है. जी केपिल्लई एक कर्मठ अधिकारी हैं. उनका सेवाकाल शानदार रहा है. किताबें, जीवनी पढ़ने के प्रति उनमें दीवानापन है. संगीत और फिल्म में भी वह ख़ूब रुचि लेते हैं. इन सब के बीच वह अपने शौक़ को पूरा करने के साथ-साथ अपने काम को भी बख़ूबी अंजाम देते हैं. अंजुम ए. ज़ैदी से उनकी एक मुलाक़ात में ऐसे तमाम मुद्दों पर चर्चा हुई, जो उनके जीवन के व्यक्तिगत पहलुओं को दर्शाते हैं :

अपने नए ऑफिस में आपको कैसा लग रहा है?

स्वाभाविक है, अच्छा लग रहा है. मंत्रालय का विस्तार हो रहा है. समय के साथ-साथ बड़े होते इस मंत्रालय में चुनौतियां भी काफी बढ़ चुकी हैं. पहले जब मैं संयुक्त सचिव नॉर्थ-ईस्ट के पद पर था, तब मैं अकेले ही सब कुछ संभाला करता था, आज उस काम को करने के लिए कई और लोग हैं. इसकी वजह है कि काम बहुत बढ़ चुका है.

आप एक ऐसे परिवार से हैं, जिसकी तीन पीढ़ियां प्रशासनिक सेवा में रहीं, आप ख़ुद पिछले कई सालों से प्रशासन का हिस्सा हैं. इतने लंबे अनुभव में आपने प्रशासन में क्या-क्या बदलाव देखे हैं?

यह सही है कि मेरी मां और पिता दोनों ही पक्ष के लोग प्रशासनिक सेवा में रहे हैं. मेरे पिता के समय में प्रशासनिक अमला बहुत छोटा हुआ करता था. बचपन में मैं पिता के साथ रायसीना हिल जाया करता था, उस समय वह स्वास्थ्य सचिव थे (1952-57). उन दिनों, सभी मंत्रालय नॉर्थ और साउथ ब्लॉक में ही थे. मंत्रालयों में महज़ एक सचिव, एक संयुक्त सचिव और एक उप-सचिव हुआ करते थे. उन दिनों सचिवों का कार्यकाल लंबा हुआ करता था और चालीस साल की उम्र तक वे सचिव बन जाया करते थे. उनके पास विभाग को सही दिशा देने के लिए अधिक वक़्त हुआ करता था. देश को नई-नई आज़ादी मिली थी, और सभी राष्ट्र निर्माण की नींव डालने में लगे थे. नई संस्थाएं बनाई जा रही थीं, नए मेडिकल कॉलेज खोले जा रहे थे, चंडीगढ़ में पीजीआई बन रहा था. प्रशासन में एक उत्साह था कि देश निर्माण को एक सही और सुनियोजित दिशा दी जाए. कम उम्र में सचिव बनने का अपना ही फ़ायदा होता है. किसी को भी 6-7 साल का समय मिलता है, किसी विभाग या महकमे का संचालन करने का. साठ के दशक में हमने देखा है कि किस तरह से श्री एल.पी. सिंह ने लंबी समयावधि का फ़ायदा उठाते हुए विभाग के लिए बेहतरीन काम किया. आज भी पूरा प्रशासन उनके किए कामों को याद करता है. वहीं आजकल कार्यकाल के अंतिम छणों में महज 2-3 साल के लिए लोग सचिव बनते हैं.

क्या आपको लगता है कि आज के दौर में ज़्यादा चुनौतियां हैं और चुनौती कुछ नया करने की भी है?

साठ के दशक में भी नक्सलवाद था, लेकिन उसकी शक्ल आज जैसी नहीं थी. आज नक्सलवाद भी आतंकवाद बन चुका है. यहां तक कि जम्मू-कश्मीर में आज जैसे हालात नहीं थे. जम्मू-कश्मीर समस्या अस्सी के दशक की उपज है. आज ख़तरा काफी ज़्यादा है. मुझे आज भी लगता है कि कश्मीर समस्या का हल प्रभावी प्रशासन के ज़रिए किया जा सकता है. शांति के समय में मैं गुलमर्ग और पहलगाम गया हूं. उस समय सुरक्षा की कोई ज़रूरत नहीं थी. माहौल में थोड़ा तनाव ज़रूर होता था, लेकिन कोई भी असुरक्षित महसूस नहीं करता था. अमेरिका में हुए हमले के बाद से भारत में भी परिस्थिति बदली है. पहले अमेरिका के लिए आतंकवाद मुद्दा नहीं था लेकिन 9/11 हादसे के बाद उसका रुख़ बदल चुका है. पहले इसे आज़ादी की लड़ाई समझा जाता था, लेकिन अब ऐसा नहीं है. आज यही वजह है कि लिट्टे का सफाया हुआ है. ज़्यादातर देशों ने या तो लिट्टे पर प्रतिबंध लगा दिया था या फिर उसे किसी तरह की मदद देने से इंकार कर दिया था.

नक्सलवाद से किस तरह के ख़तरे की आशंका है?

नक्सलवाद एक बड़ी समस्या है. समस्याएं बहुआयामी है. सबसे अहम बात यह है कि नक्सलवाद क़ानून-व्यवस्था की समस्या है. इसके साथ ही जनजातियों का मामला इससे जुड़ा है, ज़मीन पर अधिकार का मामला इससे जुड़ा है और इस तरह के कई मामले इस समस्या से सीधे तौर पर जुड़े हैं.

क्या आपको बुद्धदेव भट्टाचार्य और प्रकाश करात के विपरीत बयानों में किसी तरह के संवाद की आशंका दिखती है?

आप उन्हें नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते हैं और उनसे बात करनी भी ज़रूरी है. सभी को शांति और ख़ुशहाली की ज़िंदगी पसंद है. कोई नहीं चाहता कि उसे उसके अधिकारों से वंचित रखा जाए और तरक़्क़ी से दूर किया जाए. जंगलों में बंदूकों के साथ जीना किसी को पसंद नहीं है.

आप अपने ख़ाली वक़्त में क्या करते हैं?

मैं पढ़ना पसंद करता हूं. हर महीने ख़ान मार्केट से एक किताब ज़रूर ख़रीदता हूं. मैं वैसे तो सबकुछ पढ़ता हूं, लेकिन जीवनी पढ़ने में मेरी कुछ विशेष रुचि है.

आपकी सबसे पसंदीदा किताब कौन सी है?

लियो टॉल्सटॉय की *वॉर एंड पीस* मेरी पसंदीदा किताब है, क्योंकि वह इंसानी रिश्तों के हर पहलू को टटोलती है. इसके अलावा मैं शेक्सपीयर भी पढ़ता हूं.

क्या आपने कुछ लिखने की भी कोशिश की है?

फ़िलहाल नहीं. रिटायरमेंट के बाद शायद लिखना शुरू करूं.

आप अपनी शैक्षणिक योग्यता के बारे में बताएं?

मैं विज्ञान का छात्र रहा, लेकिन आईएएस परीक्षा के लिए समाजशास्त्र को चुना. मुझे उन लोगों से ज़्यादा अंक मिले जिन्होंने समाजशास्त्र में स्नातकोत्तर किया था (ठहाका लगाते हैं). मुझे लगता है कि इस उपलब्धि के पीछे की वजह यह है कि वे लोग काट-छांट कर पढ़ा करते थे, जबकि मैंने ज़्यादातर मूल लेखकों की किताबें पढ़ीं.

अपनी पत्नी से आपकी मुलाक़ात कहां हुई?

आईएएस अकादमी में पहली मुलाक़ात हुई और वहीं हमने शादी भी कर ली.

आपकी पसंदीदा हिंदी फिल्म कौन सी है?

गाइड और *मुगले-आज़म* मेरी पसंदीदा फिल्म है.

क्या आपने फिल्म स्लमडॉग मिलिनियर देखी है?

हां, देखी है लेकिन मुझे कुछ खास पसंद नहीं आई.

क्या आपको संगीत पसंद है?

जी हां, ख़ास तौर पर 50 और 60 के दशक के हिंदी गाने. फिल्में देखने के लिए हम ज़्यादातर प्रगति मैदान के शाकुंतलम थिएटर जाते हैं. वहीं हमने कई अच्छी हिंदी फिल्में देखी हैं.

आपकी पत्नी भी प्रशासनिक सेवा में हैं. क्या आप घर पर ऑफिस की बातें करते हैं?

हां, कभी-कभी करते हैं. मैं अपना काम घर ले जाता हूं, लेकिन मेरी पत्नी अपना काम घर नहीं लाती हैं. वह घर आने के पहले आसानी से कामकाज को निजी ज़िंदगी से दूर कर लेती हैं.

ऐसा क्यों है कि प्रशासनिक अधिकारियों के बच्चे नौकरशाही में अपना भविष्य नहीं देखते?

दरअसल, वे काफी नज़दीक से इस ज़िंदगी को देखते हैं और उन्हें अहसास हो जाता है कि यह ज़िंदगी इतनी आसान नहीं है. हमारे बच्चे इस सेवाओं में जाने की चाह बहुत कम रखते हैं. हालांकि पांचवें और छठे वेतन आयोग के बाद हालात बदल रहे हैं.

क्या आप पेंटिंग में रुचि रखते हैं?

हां. गृह मंत्रालय के अपने नए ऑफिस में जाने के बाद मैं अपनी पत्नी की एक पेंटिंग लगाने की सोच रहा हूं.

नई पीढ़ी का रुझान नौकरशाही की तरफ़ क्यों नहीं हो रहा है?

नई पीढ़ी को ज़िंदगी में जल्द नतीजों की चाह रहती है. उनमें इस नौकरी को पाने के लिए ज़रूरी सब्र नहीं है. इसलिए वे दूसरी नौकरियों में अपना भविष्य देख रहे हैं.

क्या आप भविष्य में वेतन आयोग में और भी सुधार की संभावना देख रहे हैं?

पांचवें और छठे वेतन आयोग ने हमारे लिए थोड़ा-बहुत फ़ायदा किया है. हम आज एक बेहतर ज़िंदगी जी सकते हैं. 1982 तक एक संयुक्त सचिव को महज़ 2000 रुपए की बेसिक सैलरी मिलती थी. उस समय तो डीए भी नहीं मिलता था, लेकिन पैसा कभी भी हमारी प्राथमिकता नहीं रहा. मैंने बीस साल की नौकरी करने के बाद 1992 में अपना मकान बनाया. मुझे याद है कि उस समय गुड़गांव के डीएलएफ में मकान की बुकिंग कराने के लिए दस हज़ार रुपयों की ज़रूरत थी और हमारे पास उतने पैसे नहीं थे. आज की पीढ़ी सब कुछ जल्दी करना चाहती है. उन्हें मकान, कार और सभी ज़रूरी सामान नौकरी के पहले दिन ही चाहिए.

बाबरी मस्जिद पर अब तो बंद हो बहानेबाज़ी

आख़िरकार लिबरहान आयोग की बहुप्रतीक्षित रिपोर्ट आ ही गई. इस हाई प्रोफाइल केस की जांच रिपोर्ट आने में ही कुल जमा 17 वर्ष लग गए. ज़ाहिर है कि ऐसी गति से तो सज़ा सुनाए जाने में 17 सौ साल लग जाएंगे. वह भी तब, जब मुक़दमा कायम होगा. इन सबके परे बहस का विषय यह है कि क्या इस आधार पर दोषियों को माफ कर दिया जाए कि सज़ा होने में कई साल लग जाएंगे? बहरहाल इस रिपोर्ट पर राजनीति शुरू हो गई है और हर कोई अपने हिसाब से कार्रवाई चाहता है. लिबरहान आयोग ने भाजपा समेत कई बड़े दलों को पसोपेश में डाल दिया है. अनुमान लगाया जा रहा है कि जो रिपोर्ट जस्टिस लिबरहान ने दी है, उसका हश्र भी पहले बन चुके अन्य आयोगों की तरह होगा. इनमें से कई की रिपोर्ट बस्ते में से निकलने के लिए तड़पड़ा रही हैं और कई की रिपोर्ट पर आज तक कोई कार्रवाई नहीं हुई. कहा जा रहा है कि इस रिपोर्ट ने मरती हुई भाजपा के लिए संजीवनी का काम किया है और भाजपा चाहती है कि सरकार इस रिपोर्ट पर कार्रवाई करे, ताकि वह एक बार फिर इंसानों की लाशों की राजनीति करके दिल्ली की सल्तनत पर पहुंचने का सपना साकार कर सके. लेकिन अब भाजपा के ये सपने साकार नहीं होंगे. अगर मान भी लिया जाए कि इससे भाजपा को पांच साल बाद होने वाले चुनाव में कोई फ़ायदा होगा, तो क्या इस अंदेशे के कारण बाबरी मस्जिद तोड़ने वालों को खुला छोड़ दिया जाए? हालांकि यह कल्पित भय है और ऐसा भी नहीं है कि हमेशा ऐसी घटनाओं में सांप्रदायिक ताक़तों को फ़ायदा ही होता हो. बाल ठाकरे का मतदान का अधिकार छीन लिया गया तो उससे शिवसेना को लाभ नहीं हुआ, बल्कि वह पिछड़ गई. इसी तरह इस लोकसभा चुनाव के दौरान आडवाणी जी आतंकवाद पर बहुत चिल्लाए, मुंबई में 26/11 हुआ, लेकिन जब इसके बाद चुनाव हुए तो भाजपा बुरी तरह पिछड़ गई.

फिर अगली लोकसभा के लिए चुनाव होने में अभी पांच साल हैं. अगर सरकार रिपोर्ट पर कार्रवाई करने के प्रति वास्तव में ईमानदार है तो फास्ट ट्रैक कोर्ट बना कर हर रोज़ सुनवाई कराकर दो महीने में फ़ैसला भी करा सकती है. ऐसे में भाजपा क्या फ़ायदा उठा पाएगी? इतना ही नहीं, जब पांच साल बाद इसका लाभ उठाने का अवसर आएगा, तब तक आडवाणी जी सियासत से विदा हो चुके होंगे. कल्याण सिंह और उमा भारती भाजपा से बाहर हैं ही. बाक़ी जिन लोगों को इस केस में सज़ा हो सकती है, वे लोग राष्ट्रीय अपील नहीं हैं. इसलिए भाजपा कोई फ़ायदा नहीं उठा पाएगी.

दरअसल कांग्रेस की दिक़्क़त यह है कि शायद इस रिपोर्ट में पीवी नरसिंह राव और कांग्रेस की भूमिका पर भी सवाल उठाए गए हैं. ऐसे में क्यों कांग्रेस ईमानदारी से इस रिपोर्ट पर कार्रवाई करेगी? अचरज इस बात की है कि मुलायम सिंह के नेतृत्व वाली समाजवादी पार्टी, जो लगातार बाबरी मस्जिद की कमाई खाती रही है, इस रिपोर्ट पर चुप लगा गई है. इसका भी कारण है. सपा के नए दोस्त कल्याण सिंह भी इस कांड में दोषी हैं, जबकि मुलायम सिंह यादव चुनाव के दौरान कल्याण के गुनाहों को माफ करके घोषणा कर चुके हैं कि बाबरी मस्जिद अब मुद्दा नहीं रहा. इसका उन्हें इस चुनाव में ख़ामियाजा भी भुगतना पड़ा. अब अगर मुलायम सिंह कुछ बोलते हैं तो उनके दोस्त कल्याण सिंह के लिए मुश्किलें पैदा हो जाएंगी.

लिबरहान आयोग ने भाजपा समेत कई बड़े दलों को पसोपेश में डाल दिया है. अनुमान लगाया जा रहा है कि जो रिपोर्ट जस्टिस लिबरहान ने दी है, उसका हश्र भी पहले बन चुके अन्य आयोगों की तरह होगा. इनमें से कई की रिपोर्ट बस्ते में से निकलने के लिए तड़पड़ा रही हैं और कई की रिपोर्ट पर आज तक कोई कार्रवाई नहीं हुई.

इस मसले में जल्द से जल्द दोषियों को सज़ा मिलनी ही चाहिए. ऐसा इसलिए नहीं कि कुछ लाख गुंडों ने एक मस्जिद तोड़ दी थी. ऐसे तो हर रोज़ कहीं न कहीं मस्जिद और मंदिर तोड़े ही जाते हैं. नरेंद्र मोदी ने अभी गुजरात में कई मंदिर गिरवाए हैं. पाकिस्तान में भी कई मस्जिदें गिराई गई हैं. कश्मीर के राजा हर्ष ने तो बाक़ायदा मंदिर तोड़ने के लिए *देवोत्पतन्नायक* नाम के अधिकारी की नियुक्ति की थी. इस मामले में दोषियों को सज़ा मिलनी इसलिए ज़रूरी है, क्योंकि बाबरी मस्जिद तोड़ने वालों ने उस मस्जिद के बहाने इस देश के धर्मनिरपेक्ष संविधान पर हमला किया था, इंसानियत को तार-तार किया था. स्वयं तत्कालीन राष्ट्रपति को यह कहने के लिए मजबूर होना पड़ा था कि बाबरी मस्जिद को गिराने वाले गुंडे थे.

हालांकि कल्याण सिंह का लिबरहान आयोग में गवाही में कहना कि ऐसा करने को कोई पूर्वनियोजित कार्यक्रम नहीं था, सत्य ही है. दरअसल भाजपा बाबरी मस्जिद गिराना नहीं चाहती थी. वह केवल इसे मुद्दा बनाकर रखना चाहती थी, ताकि इस पर सियासत करती रहे और इसके ज़रिए धन जमा होता रहे. लेकिन भाजपा ने जिन कारसेवकों की फौज अयोध्या में छह दिसंबर 1992 को अयोध्या में जमा की, उस पर उसका नियंत्रण नहीं रहा. वरना महमूद गजनवी के संघी अवतार तो बाबरी मस्जिद को सोने का अंडा देने वाली मुर्ग़ी समझकर पाल रहे थे, लेकिन उनके पाले बंदरों ने ऐन मौके पर काम ख़राब कर दिया. अब अगर इन नागपुरियों ने बाबरी मस्जिद नहीं गिराई थी, तो वे इसका श्रेय क्यों लेना चाहते हैं और जब श्रेय लेना चाहते हैं तो लिबरहान की रिपोर्ट से घबरा क्यों रहे हैं?

अमलेंदु उपाध्याय

feedback.chauthiduniya@gmail.com

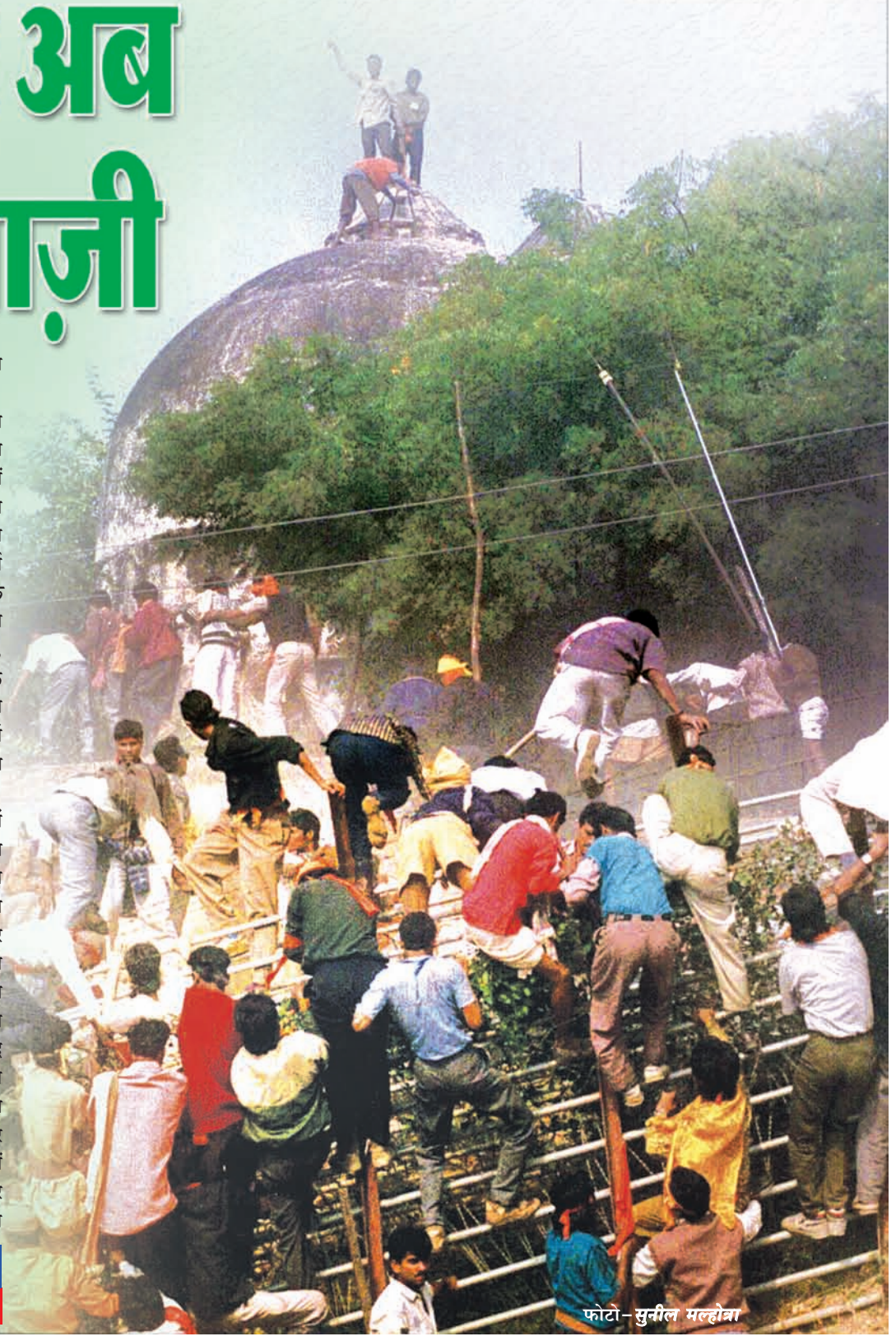

फोटो- सुनील मल्होत्रा

राजूखेड़ी दिखाता है गांवों के विकास का रास्ता

आदर्श गांव की ज़िम्मेदारी हम सब की है भागीदारी. राजूखेड़ी गांव के निवासी इस जुमले के महत्व को बख़ूबी जानते हैं. शायद यही कारण है कि जनभागीदारी के बूते राजूखेड़ी आज आदर्श एवं निर्मल ग्राम बन गया है.

मध्य प्रदेश के सीहोर जिले के राजूखेड़ी गांव का सफ़र करने के बाद राजधानी दिल्ली की नारकीय अनधिकृत बस्तियों की सुध हो आई, जहां नालियों में कूड़ा फंसा होने से गलियों में पानी भर जाता है. हद तो यह कि स्थानीय निवासी सरकारी तंत्र पर भरोसा करके इसकी सफाई की उम्मीद लगाए बैठे रहते हैं. इन बस्तियों में रहने वाले लोगों की उम्मीद का यह सिलसिला सालों से यूं ही चला आ रहा है. दूसरी ओर, राजूखेड़ी के निवासी ग़रीब और पिछड़ेपन के शिकार भले ही रहे हों, लेकिन उन्होंने किसी पर निर्भर रहने के बजाय अपने जीवन की बेहतरी का रास्ता ख़ुद तैयार किया है. ख़याल दिल्ली सरकार की भागीदारी योजना का भी आता है और अनायास ही स्मृतियां डीटीसी बसों में लिखे इस नारे की ओर दौड़ जाती हैं, जिसमें लिखा रहता है–साफ बस की ज़िम्मेदारी, हम सबकी है भागीदारी. सवाल उठता है कि क्या राजधनीवासी उस तरह की भागीदारी में अपना योगदान दे रहे हैं? बहरहाल, राजूखेड़ी को एक व्यवस्थित एवं संपन्न गांव बनाने से लेकर निर्मल पंचायत का राष्ट्रीय पुरस्कार दिलाने में जनभगीदारी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है. प्रशासन की बाट जोहने के बजाय राजूखेड़ी गांव के निवासियों ने गांव के विकास की एक व्यवस्थित रूपरेखा तैयार कर इस पर दृढ़ता से अमल करने का निश्चय किया, जिसका सीधा परिणाम लोगों के व्यवहार में भी प्रत्यक्ष नज़र आता है. वर्ष 2008 में ग़ैर सरकारी संस्था–समर्थन–के हस्तक्षेप के बाद राजूखेड़ी के विकास का एक रोडमैप तैयार किया गया. इसमें स्थानीय लोगों को किसी पर आश्रित करने के बजाय उन्हें भारतीय संविधान में वर्णित जनाधिकारों से परिचित कराया गया एवं एजेंसियों के बारे में भी ग्रामीणों को जानकारी दी गई. उतना सब कुछ जान लेने के बाद जब राजूखेड़ी के ग्रामीणों को जनता की ताक़त और अधिकारों का ज्ञान हुआ तो सबने मिलकर अपने हक़ की लड़ाई लड़ने का मन बना लिया. फिर क्या था, सिलसिला शुरू हुआ और कारवां बनता चला गया.

मेवाड़ा समुदाय बहुल राजूखेड़ी गांव के निवासियों में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता नहीं थी और निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं एवं युवाओं की भागीदारी भी नहीं थी. गांव का प्रशासनिक ढांचा छिन्न–भिन्न पड़ा था और लोगों के विकास को लेकर कोई सीधा सरोकार नहीं था. इस प्रकार की व्याधियों के चलते सरकारी योजनाओं का लाभ राजूखेड़ी के निवासियों तक नहीं पहुंच पा रहा था. राजूखेड़ी की विलेज वॉटर एंड सेनीटेशन कमेटी के अध्यक्ष चंद्रसिंह मेवाड़ा के मुताबिक, सरकार से नाउम्मीद होकर हम सबने गांव की बेहतरी के लिए साथ मिलकर काम करने का मन बना लिया. देव महाराज के चबूतरे पर बैठकर पूरे गांव ने सबसे पहले गांव की समस्याओं की पहचान की. फिर उन समस्याओं को हल करने के लिए एक विस्तृत कार्ययोजना भी तैयार कर ली गई.

मध्य प्रदेश के सीहोर जिले के राजूखेड़ी गांव का सफ़र करने के बाद राजधानी दिल्ली की नारकीय अनधिकृत बस्तियों की सुध हो आई, जहां नालियों में कूड़ा फंसा होने से गलियों में पानी भर जाता है. हद तो यह कि स्थानीय निवासी सरकारी तंत्र पर भरोसा करके इसकी सफाई की उम्मीद लगाए बैठे रहते हैं. इन बस्तियों में रहने वाले लोगों की उम्मीद का यह सिलसिला सालों से यूं ही चला आ रहा है.

बैठक में शिक्षा की गुणवत्ता, बिजली, पीने के पानी, शौचालय निर्माण, सिंचाई के लिए नहर का पानी लाने, गंदे पानी की निकासी, सड़क व खड़ंजे का निर्माण, कृषि सुधार, हाईस्कूल को मान्यता दिलाने, नियमित आंगनवाड़ी और प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार जैसी समस्याएं सामने आईं.

समस्याओं का चयन कर लेने के बाद उनके निदान के लिए निर्धारित कार्ययोजनाओं को अमल में लाने की बारी आई. सबसे पहले पूरे गांव के हर घर में शौचालय निर्माण का फ़ैसला लिया गया. गांव के लोग पहले सोचते थे कि शौचालय के निर्माण में 20 हज़ार रुपये से भी अधिक ख़र्च आता होगा. लेकिन जब समर्थन संस्था के कार्यकताओं ने शौचालय निर्माण की लागत एवं उसके लाभ के बारे में लोगों को समझाया तो लोगों के मन में बात बैठ गई. इस काम को ठीक तरीक़े से संपन्न करने के लिए ग्राम स्तर पर एक समिति बनाई गई. ढाई हज़ार रुपये की लागत से बनने वाले शौचालय के निर्माण एवं रखरखाव के लिए प्रत्येक ग्रामवासी को ट्रेनिंग भी दी गई. पांच सौ रुपये समर्थन की ओर से दिलाए गए, जबकि शेष राशि गांव वालों ने ख़ुद ख़र्च की. एक साल के भीतर राजूखेड़ी के हर घर में शौचालय निर्माण के लक्ष्य को पूरा कर लिया गया. इसके बाद बिजली की समस्या को जड़ से समाप्त करने की तैयारी शुरू कर दी गई. ट्रांसफार्मर न होने के कारण लाइट आने पर फ्यूज़ अक़्सर उड़ जाता था. इसका सबसे अधिक प्रभाव सिंचाई न हो पाने के कारण खेती–बाड़ी पर पड़ रहा था. ग्रामीणों ने सीहोर विद्युत मंडल में अपनी फरियाद सुनाई तो उन्होंने कहा कि हमारे यहां सीधे तौर पर ट्रांसफार्मर लगाने का प्रावधान नहीं है. इस पर कुल छह लाख 10 हज़ार का ख़र्च बैठता था. लेकिन गांव के लोग इतनी राशि की व्यवस्था एक साथ कर पर पाने में सक्षम नहीं थे. स्थानीय विधायक से जब लोगों ने फरियाद की तो उन्होंने दो लाख 10 हज़ार रुपये की व्यवस्था कर दी. शेष राशि लोगों ने ख़ुद जुटाकर ट्रांसफार्मर लगाने के कार्य को अंजाम दिया. नरसिंह मेवाड़ा बताते हैं कि बिजली नहीं होने से सिंचाई के लिए हर वर्ष क़रीब 80 हज़ार रुपये का डीजल ख़र्च हो जाया करता था. लेकिन अब बिजली नियमित रहने से खेती की लागत कम हो गई है.

कुछ इसी तरह की बात राजूखेड़ी के पंच हेमसिंह मेवाड़ा भी कहते हैं. बकौल हेमसिंह, हमारा जीवन ही अंधकार में डूबा हुआ था. इस अंधकार से निपटने के लिए हमने प्रति ट्यूबवैल के हिसाब से गांव भर में चंदा इकट्ठा किया और इसी का नतीजा है कि आज हम उजाले की ओर अग्रसर हैं. हेमसिंह के पास 12 एकड़ ज़मीन है. इस पर वह गेहूं, चना, सोयाबीन, लहसन और प्याज की फ़सल उगाते हैं. वह कहते हैं, पहले हम रात में बिजली आने का इंतज़ार करते थे और बिजली आने पर अधिकतर समय बिजली के खंबे के पास बिताना पड़ता था, क्योंकि ट्रांसफार्मर न होने से कनेक्शन हट जाया करता था. रात में खंबे पर चढ़कर पर तार जोड़ना पड़ता था. लेकिन अब सब ठीक हो गया है और उत्पादन भी पहले से अधिक मिलने लगा है.

उमाशंकर मिश्र

feedback.chauthiduniya@gmail.com

आरटीआई का कमाल, ग़रीब हुए मालामाल

राजूखेड़ी के लोग आरटीआई यानी सूचना के अधिकार के महत्व को बख़ूबी जानते हैं. कई मामलों में स्थानीय लोगों ने आरटीआई का उपयोग कर बड़े–बड़े अधिकारियों को भी पानी पिला दिया है. गांव में कृषि विस्तार अधिकारी और ग्रामसेवक पहले कभी दिखाई नहीं पड़ते थे. इसके कारण समस्याएं जस की तस बनी रहती थी. वर्ष 2006 में एक आरटीआई दाख़िल करके राजूखेड़ी के निवासियों ने कृषि विभाग से जानना चाहा कि कृषि से जुड़ी आगतें जैसे कीटनाशक, बीज व खाद इत्यादि गांव के कितने किसानों को और किस मात्रा में मिल रहा है?

इस तरह की पूछताछ से अधिकारी सकते में आ गए. राजूखेड़ी के निवासियों को कृषि से संबंधित सूचनाएं समय पर मिलने लगीं. यहां तक कि कृषि अधिकारी भी अब समय समय पर गांव का चक्कर लगाते हैं और मिट्टी परीक्षण के साथ–साथ लोगों को फ़सलों के रखरखाव की भी जानकारी दी जाने लगी है. इसी तरह का क़िस्सा मोहन सिंह मेवाड़ा का भी है. वे बताते हैं कि दो साल पहले उन्होंने पंजाब नेशनल बैंक की सीहोर शाखा में किसान क्रेडिट कार्ड के लिए आवेदन किया था. लेकिन आवेदन स्वीकार नहीं किया जा रहा था. उन्होंने समर्थन के कार्यकर्ता धरमप्रकाश को यह बात बताई. बाद में जब वे एक सामाजिक कार्यकर्ता को लेकर बैंक गए तो वहां देखा कि सूचना के अधिकार की जानकारी देने वाला बोर्ड तक नहीं लगा हुआ था. बैंक के अधिकारियों से बोर्ड के न होने की पूछताछ करते हुए मोहन सिंह को लोन न दिए जाने को लेकर आरटीआई के तहत कारण जानने के लिए आवेदन भी दिया गया. असर शीघ्र ही देखने को मिल गया. मोहन सिंह कहते हैं, मेरा लोन स्वीकृत हो गया और बैंक में सूचना के अधिकार को लेकर बोर्ड भी लगा दिया गया. वह कहते हैं कि आज हालात ये हैं कि बैंक मैनेजर जिन्होंने कभी मुझे लोन देने से मना कर दिया था, आज वह मेवाड़ा साहब कर बुलाते हैं. कुछ सालों से लगातार जलस्तर नीचे गिरने से पानी की समस्या भी सामने आ रही थी. नल–जल योजना के तहत पीने के पानी की समस्या को भी हल करने का काम शुरू कर दिया गया. इसके लिए दो टंकियां लगाने के अलावा सप्लाई की पाइप इत्यादि की व्यवस्था के लिए दो लाख 14 हज़ार रुपये की ज़रूरत पड़ी. समर्थन ने यहां भी लोगों की मदद की और एक लाख 60 हज़ार रुपये दिला दिए, जबकि शेष 40 हज़ार रुपये लोगों ने चंदे से जुटा लिए. बाक़ी के 14 हज़ार रुपये का सहयोग पंचायत से मिल गया. इस तरह से पीने के पानी की समस्या भी हल कर ली गई. इसी तरह से जनभागीदारी एवं परस्पर सहयोग से लोगों ने नाली एवं खड़ंजों का भी निर्माण करा लिया. स्वास्थ्य सेवाएं नियमित देने के लिए एनम पर भी दबाव बनाया गया, तो उसने समय पर आना आरंभ कर दिया. पहले लोगों को समय पर डाक नहीं मिलती थी. जब आरटीआई के माध्यम से गांव में आने वाली डाक का लेखा–जोखा मांगा गया, तो डाकिये के होश ठिकाने आ गए और समस्या का अंत हो गया. कुछ समय बाद आंगनबाड़ी भी खुल गई. रोज़गार की समस्या को हल करने के लिए अलग समूह बनाए गए. इसमें एक निर्धारित राशि प्रत्येक सदस्य जमा करता है. बाद में उन समूहों का बैंक से लिंकेज करा दिया गया. कोई छोटा–मोटा रोज़गार शुरू करना हो तो अब लोन आसानी से उपलब्ध हो जाता है. दो प्रतिशत की ब्याज दर पर समूह में जमा पैसे को भी सदस्यों को ज़रूरत के समय दे दिया जाता है.

धब्बूबाई कल्पना स्वयं सहायता समूह की कोषाध्यक्ष हैं. कुछ समय पहले तक धब्बूबाई का संसार घर–परिवार तक ही सिमटा हुआ था और बाहर कुछ भी कहने में सकुचाती थीं. लेकिन आज समूह का पूरा लेखा–जोखा वह रखती हैं. पांच हज़ार रुपये का ऋण लेकर अब उन्होंने अपनी दुकान भी बढ़ा ली है. कुछ समय पूर्व गांव में स्वच्छता अभियान चलाने वाली 40 महिलाओं में धब्बूबाई भी शामिल थीं. वह विस्तार से बताती हैं कि गांव की महिलाओं ने मिलकर किस तरह से घर–घर में गंदे पानी के निपटारे के लिए सोख्ता गड्ढे बनवाए थे. ग्रामसभा की बैठकों में भी धब्बूबाई अब जमकर गांव से जुड़े विभिन्न मुद्दों को लेकर सवाल उठाती हैं. उल्लेखनीय है कि किसी काम को अंजाम देने के लिए ग्रामसभा में गांव के 10 प्रतिशत सदस्यों की अनुमति होना ज़रूरी होता है. अधिकतर मामलों में सरपंच घर–घर जाकर लोगों से हस्ताक्षर करा लेते हैं. यही कारण है कि ग्रामीणों को ग्रामसभा के महत्व और उसके स्वरूप का ज्ञान तक नहीं हो पाता है. इसकी आड़ में भ्रष्टाचार पलता है और लोग अनभिज्ञ बने रहते हैं. लेकिन राजूखेड़ी में ऐसा नहीं है. इस गांव के लोग ग्रामसभा में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लेते हैं. धब्बूबाई बताती हैं कि हर महीने की पूर्णिमा को उनके समूह की बैठक होती है. इसमें बचत, साफ–सफाई इत्यादि पर चर्चा की जाती है और बैठक में न आने वालों पर 50 रुपये का जुर्माना भी लगाया जाता है.

विकास में सभी की भागीदारी हो, इसके लिए विभिन्न आयु वर्ग के लोगों के अलग–अलग समूह व ग्राम निगरानी समितियां राजूखेड़ी में गठित की गई हैं. गांव में एक युवा मंडल, एक बाल समूह, तीन महिला समूह, एक विलेज वॉटर एंड सेनीटेशन कमेटी, एक निर्माण समिति और एक किशोरी समूह है. इन सभी समूहों ने कुछ न कुछ बचत राशि भी एकत्र की है. निर्माण समिति की देखरेख में 50 लाख रुपये की अनुमानित लागत से मंदिर एवं धर्मशाला निर्माण का कार्य फ़िलहाल चल रहा है. 2004 में एक चर्चा के दौरान बात सामने आई कि राजूखेड़ी को निर्मल पंचायत का पुरस्कार मिल सकता है. इस पंचायत के तीन गांवों से राजूखेड़ी एवं सेमली तो निर्मल पंचायत के मापदंडों पर खरे उतरने के लिए तो तैयार थे, लेकिन जाखाखेड़ी गांव में अभी कसर थी. राजूखेड़ी गांव के लोगों ने अपनी पंचायत को निर्मल पंचायत का पुरस्कार दिलाने के लिए जाखाखेड़ी में जाकर हर घर में शौचालय निर्माण के काम को पूरा किया. इस तरह से राजूखेड़ी को निर्मल पंचायत का पुरस्कार भी मिल गया. गांव की व्यवस्था को यथावत बनाए रखने और ढांचागत सुविधाओं के विकास व निर्माण कार्यों के लिए विभिन्न प्रकार के कर ग्रामीणों पर लगाए जाने का प्रावधान यहां किया गया है. निर्माण कर, जल कर, सफाई कर जैसे टैक्स इसमें शामिल हैं. जबकि किसानों की जोत के आधार पर फ़सल पकने पर उनसे लगान वसूला जाता है. वहीं ट्यूबवैल की संख्या के आधार पर भी टैक्स लगाया जाता है. इस प्रकार से कर की उगाही से सार्वजनिक कार्यों के लिए धन भी मिल जाता है. इसी पैसे का उपयोग धर्मशाला के निर्माण में किया जा रहा है. वयोवृद्ध रामसिंह पटेल गांव के मुखिया हैं. वह कहते हैं, अब हर बात की सुविधा हो गई है. जब अन्य गांवों के लोग राजूखेड़ी के बारे में उनसे पूछते हैं तो उन्हें गर्व होता है. राजूखेड़ी के लोग अब अपने हक़ की लड़ाई लड़ना सीख गए हैं और अपने अधिकारों की मांग करने के लिए वे हमेशा तत्पर रहते हैं. इसी तत्परता का नतीजा है कि सिहोर जिले के आला अधिकारी भी राजूखेड़ी के लोगों की सक्रियता के चलते अपना काम बख़ूबी करने लगे हैं.

यू मिश्रा

feedback.chauthiduniya@gmail.com

शासन में नागरिकों की भूमिका

प्रतिभागी लोकशाही (पार्टिसिपेटरी डेमोक्रेसी) का विचार हमारे लिए कुछ नया नहीं है. यह तो पुराने भारतीय क़ानून और इस्लामी क़ानून में भी उल्लिखित है. कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी कहा गया है–प्रजासुखे सुखम राज्ञा, प्रजानाम तु प्रियम हितम, यानी शासक को यह जानना चाहिए कि प्रजा का हित किसमें है. पवित्र क़ुरान में भी *वा अमरुहम शूरा बैनाहुम* का आदर्श बताया गया है, जिसका मतलब हुआ कि वे अपने मामले आपसी सहमति से सुलझाते हैं. हमें इन सारी पवित्र बातों से उन विदेशी व्यापारियों ने महरूम कर दिया, जिन्होंने इस मुल्क की राजनीतिक ताक़त को हथिया लिया और हम पर लगभग 350 वर्षों तक शासन किया. यह उनके तानाशाही शासन के आख़िरी 50 वर्षों में ही संभव हुआ कि काफी हीले-हवाले के बाद उन्होंने हमें अपने प्यारे मुल्क के शासन में कुछ हद तक शिरकत करने की छूट दी. 1892 के इंडियन काउंसिल एक्ट से लेकर 1935 के गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट तक का सफ़र बेहद लंबा और मानीख़ेज़ रहा. आख़िरकार हमने 1857 से छेड़ी गई आज़ादी की लड़ाई का सफ़र 1947 में पूरा किया. इसके ठीक दो साल बाद–हम, भारत के लोगों–ने एक होकर और सामूहिक तौर पर अपने इतिहास में एक नया मील का पत्थर लिखा, जब हमने एक नया और शानदार संविधान अपनाया, लागू किया और उसे ख़ुद को दिया. इस संविधान से हमने दुनिया की सबसे बड़ी लोकशाही को पैदा किया. इसकी बुनियाद संप्रभुता, समाजवाद और धर्मनिरपेक्षता पर रखी गई. धर्मनिरपेक्षता का सिद्धांत वह वरदान है, जो नागरिकों को शासन में भागीदारी का अधिकार देता है. ग़ौर करने वाली बात यह है कि आठ सार्क (दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन) देशों में से छह में एक न एक धर्म को राजकीय धर्म घोषित किया गया है. भूटान और श्रीलंका में बौद्ध धर्म, अफ़ग़ानिस्तान, बांग्लादेश, पाकिस्तान और मालदीव में इस्लाम, नेपाल में हाल-हाल तक हिंदू धर्म राज्य का धर्म था. भारत ने ही अपने संविधान के तहत ख़ुद को धर्मनिरपेक्ष राज्य घोषित किया हुआ है. ज़ाहिर तौर पर भारत, पश्चिमी देशों के राजनीतिक धर्मनिरपेक्षता सिद्धांत को नहीं मानता, बल्कि वर्षों के सफ़र के दौरान इसने अपना अनूठा तरीक़ा विकसित किया है. हिंदुस्तान में हमेशा से ही कई सारे आध्यात्मिक और धार्मिक मतों की बहुतायत रही है, जिनकी परंपराओं और विश्वासों से राज्य अछूता नहीं रह सकता. इस ज़मीनी सच्चाई ने हमेशा ही देश के क़ानून और विधान पर प्रभाव डाला है. यही बात हमारे समय के साथ भी लागू होती है.

संविधान के मुताबिक हिंदुस्तान का कोई भी एक धर्म राजकीय नहीं है. यह साफ तौर पर राज्य को धर्मनिरपेक्ष घोषित करता है. इसके बाद भी भारत में राज्य और धर्म के बीच कोई साफ विभाजक रेखा नहीं है. न तो किसी धर्म को सार्वजनिक जीवन और राजकीय प्रक्रिया से हटाया जाता है, न ही राज्य किसी धर्म के मामलों में दख़ल देता है. बात बस इतनी सी है कि मुल्क के सारे मज़हब राज्य की नज़रों में एक हैं और सभी धार्मिक समुदाय एक समान अधिकारों के हक़दार हैं. यह धर्मनिरपेक्षता की भारतीय व्याख्या है और यह राज्य के तीनों अंगों–विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका–की नीतियों और व्यवहार में दिखता है.

हिंदुस्तान की धार्मिक-सांस्कृतिक सच्चाई को देखते हुए 1950 में लागू संविधान मुल्क के हरेक क्षेत्र की धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं के साथ ही उस इलाक़े की ख़ास संस्कृति, भाषा और लिपि को बचाने का निर्देश देता है. इसके साथ ही सभी नागरिकों का यह मूल कर्तव्य भी है कि वे हमारी सामाजिक संस्कृति और शानदार विरासत का सम्मान करें. संविधान सभी व्यक्तियों और समुदायों को धार्मिक स्वतंत्रता देता है. सभी नागरिकों को उनके धर्म को मानने, व्यवहार में लाने और उसका प्रचार करने की पूरी आज़ादी है. इसी तरह हरेक धार्मिक समुदाय को अधिकार है कि वह मज़हब के मामले में अपना व्यवहार ख़ुद चुनने को स्वतंत्र है. साथ ही वह धार्मिक और दान के मक़सद से संस्थान बना सकते हैं और हरेक तरह की संपत्ति का मालिकाना हक़ रखने, अधिग्रहण करने और उनका प्रशासन चला सकते हैं. हालांकि, आगे चलकर यह भी साफ कर दिया गया है कि धार्मिक अधिकारों को दी गई संवैधानिक सुरक्षा का मतलब यह नहीं है कि राज्य किसी आर्थिक, वित्तीय, राजनीतिक या फिर सेकुलर गतिविधि–जो धर्म से संबंधित हो–का नियमन और नियंत्रण नहीं कर सकती. इस तरह संविधान ने बेहद ख़ूबसूरत संतुलन किया है, ताकि लोगों को धार्मिक स्वतंत्रता देने के साथ ही राज्य सुधारों का काम भी कर सके.

लोकशाही पुराने समय से आज तक एक विकासशील प्रक्रिया है. प्रजातांत्रिक आदर्शों के सिद्धांत और व्यवहार हरेक राज्य और अख्तियार के मुताबिक बदलते रहते हैं. लोकशाही के सिद्धांत बहुतेरे हैं, क्योंकि सामाजिक विचारकों और राजनीतिक विज्ञानियों ने सदियों से इसके बारे में लिखा है.

लोकशाही पुराने समय से आज तक एक विकासशील प्रक्रिया है. प्रजातांत्रिक आदर्शों के सिद्धांत और व्यवहार हरेक राज्य और अख्तियार के मुताबिक बदलते रहते हैं. लोकशाही के सिद्धांत बहुतेरे हैं, क्योंकि सामाजिक विचारकों और राजनीतिक विज्ञानियों ने सदियों से इसके बारे में लिखा है. इसी वजह से प्रजातंत्र के भी कई प्रकार हैं, जैसे–प्रातिनिधिक लोकशाही, प्रतिभागी प्रजातंत्र, विचारात्मक लोकतंत्र और प्रत्यक्ष प्रजातंत्र.

प्रातिनिधिक लोकतंत्र में एक प्रजातांत्रिक इच्छाशक्ति के ज़रिए निम्न और निर्भर वर्गों को अधिकार दिए जाते हैं ताकि वे स्वतंत्र तरीक़े से काम कर सकें. आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक संसाधनों पर हक़ जमाए लोगों से बराबरी के स्तर पर बात कर सकें. इस तरह की व्यवस्था में नागरिकता का विचार उस गारंटी पर आधारित होता है कि देश के हरेक नागरिक को समान क़ानूनी और राजनीतिक अधिकार प्राप्त हैं. भले ही, उनकी सामाजिक, धार्मिक या नस्लीय बैकग्राउंड कुछ भी हो. यह विचार एक ज़िम्मेदार नागरिक की हदें भी तय करता है. यह तीन मूल और अपरिहार्य विचारों की कल्पना करता है. पहला तो यह कि सरकारी पदों के लिए व्यक्तियों और पार्टियों के बीच प्रतियोगिता का विचार. दूसरा–स्वतंत्र, साफ-सुथरे और निश्चित अंतराल पर नगरिकों के बीच पार्टियों और प्रतिनिधियों के चुनाव की कल्पना और तीसरे बोलने, छापने, इकट्ठा होने और संगठित होने की हरेक तरह की नागरिक और राजनीतिक स्वतंत्रता को सुनिश्चित करना. साथ ही वह आवश्यक हालात पैदा करने का भी संवैधानिक प्रावधान है, जिसके तहत प्रभावी प्रतियोगिता और ज़रूरी प्रतिनिधित्व भी हरेक नागरिक को हासिल हो सके. इन तीनों विचारों में सबसे पहला नागरिकों को अधिकार देता है कि वे वैकल्पिक उम्मीदवारों में से किसी एक का चुनाव कर सकें. दूसरा विचार, एक ख़ास अंतराल पर चुनाव की भूमिका तैयार करता है जिससे पारदर्शिता को बढ़ावा मिल सके और जनप्रतिनिधियों को उनके कामों के लिए ज़िम्मेदार समझा जा सके. अपने मुल्क के शासन में नागरिकों की वैधानिक हिस्सेदारी हो सके, इसके लिए 1948 के यूनिवर्सल डिक्लरेशन ऑफ ह्युमन राइट्स के अनुच्छेद 21 और 1966 ईस्वी में नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर हुए अंतरराष्ट्रीय सेमिनार में मानव अधिकार को परिभाषित किया गया है. महसूस किया गया कि लोकशाही में संख्या बल का खेल चलता है और इसी वजह से अल्पसंख्यकों के मानवाधिकारों की ख़ास तौर पर सुरक्षा होनी चाहिए. 1992 में इसी को ध्यान में रखते हुए संयुक्त राष्ट्र ने राष्ट्रीय या नस्लीय, धार्मिक या भाषाई आधार पर अल्पसंख्यकों के अधिकार को परिभाषित किया. इसमें कहा गया है कि किसी भी आधार पर जो भी अल्पसंख्यक हैं, उनको अपने-अपने देश में सभी स्तरों पर फ़ैसला लेने की प्रक्रिया में शामिल होने का हक़ है.

भारत के संविधान में भी मुल्क के शासन में हिस्सेदारी करने को मूलभूत अधिकार का दर्जा दिया गया है. हमने 1950 में शासन का जो घोषणापत्र अपनाया था, वह प्रतिभागी लोकशाही के प्रावधानों और सिद्धांतों से भरा हुआ है. इसकी प्रस्तावना, मूलभूत अधिकारों से जुड़े अध्याय, राज्यों के नीति-निर्देशक तत्व, नागरिकों के मूलभूत कर्तव्य, विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के चुनाव और प्रक्रिया, नौकरशाही और स्थानीय स्वशासन वगैरह कुल मिलाकर एक ख़ज़ाने की तरह हैं, जो अगर उचित तरीक़े से लागू किया जाए, तो हमारा मुल्क एक ऐसी लोकशाही में बदल सकता है, जो प्रजातंत्र के सभी स्वरूपों को सही मायने में लागू कर सकते हैं. ताकि शासन के सभी स्तरों पर प्रतिनिधित्व, प्रतिभागिता, विचारात्मक और प्रत्यक्ष लोकतंत्र लागू किया जा सके. 1950 के संविधान का बृहत प्रजातांत्रिक दृष्टिकोण वर्षों तक विकासशील रहा, जो धीरे-धीरे और मज़बूत हुआ है. सूचना का अधिकार क़ानून, उपभोक्ता अधिकारों के नए आयाम, जनहित याचिका के मौके मिलना, लोकपाल और लोकायुक्त जैसे पदों का बनना और अल्पसंख्यक आयोग व मानवाधिकार आयोग जैसी संस्थाओं के गठन ने ज़ाहिर तौर पर एक ऐसी प्रजातांत्रिक व्यवस्था के निर्माण में योगदान दिया है, जिसमें नागरिक एक बेहद प्रभावी और महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं.

ताहिर महमूद

(लेखक राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग के पूर्व अध्यक्ष और क़ानून आयोग के सदस्य हैं.)

feedback.chauthiduniya@gmail.com

फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

अभी बाक़ी है नागरिकों का पूरा विश्वास पाना

हमारे देश के प्रजातंत्र के बारे में अहम सवाल यह है कि क्या हमने वह लक्ष्य सचमुच पा लिया है, जो हमने संविधान को अपनाते समय और उसके बाद की समयावधि में तय किए थे? इस सवाल का जवाब एक ज़ोरदार हां के अलावा कुछ नहीं हो सकता. हाल के वर्षों में सरकारी अधिकारियों के प्रति जनता में एक तरह की निराशा छा गई है. इस निराशावाद के पीछे के कारण गहरे और बहुतेरे हैं.

इसमें सबसे अधिक योगदान तो सरकार के आंतरिक क्रियाकलाप के बारे में जानकारी न होने से है. सरकारी अधिकारी बड़ी इमारतों और पूरी तरह बंद माहौल में बैठे रहते हैं, और सार्वजनिक सेवाओं में लापरवाही और ढीला रवैया ज़ोर पर रहता है. नौकरशाही के कस-बस कसने के लिए देश में बहुत अधिक योजनाएं नहीं हैं. न ही इसकी परवाह कि सरकार के कामों को और उसके तरीक़ों को जनता तक पहुंचाया जाए. सार्वजनिक राजनीति के विकास के लिए लोगों को सहभागी बनाया जाए, इस दिशा में बहुत कुछ करना बाक़ी है. तो, हमें क्या करने की ज़रूरत है? मेरे हिसाब से तो ऐसे कार्यक्रम चलाने चाहिए जिससे सरकारी निकायों में जनता का विश्वास फिर जमने लगे. ऐसा जनता को साथ लेकर चलाने वाले कार्यक्रमों के माध्यम से किया जा सकता है.

ऐसी सरकारी मशीनरी प्रभावी ढंग से नागरिकों को सूचना दे सकती है, उनको सहभागी बना सकती है. ऐसा काम कड़ी मेहनत और हमारे समर्पण के माध्यम से ही हो सकता है. उसमें भी समाज के कई हिस्सों को काम करने की ज़रूरत होगी, न कि केवल सरकार या विधायिका यह काम कर सकती है. सच पूछिए तो विधायी निकाय तो किसी भी बदलाव का विरोध सबसे अधिक करता है.

हमारा कोई भी आगे की ओर उठाया गया क़दम चुने हुए अधिकारियों, सार्वजनिक निकायों के अधिकारियों और ख़ुद जनता में बदलाव लाएगी. हां, यह एक मुश्किल संक्रमण है, क्योंकि पारंपरिक तौर पर अधिकतर प्रजातांत्रिक सरकारें तो नए नियमों को बनाने या पुरानों को संशोधित करने, जन-नीति और कार्यपालिका के नियमों को बनाने के लिए विशेषज्ञों, विद्वानों और लाभकर्ता समूहों पर निर्भर करते हैं. प्रभावी बदलाव लाने के लिए–जिसमें नागरिकों को पूरी प्रक्रिया में अधिक अहम भूमिका मिल सके–हमें अपना एटीट्यूड बदलना होगा.

एक अहम सवाल यह भी है कि क्या नागरिक सचमुच अपनी भागीदारी चाहते हैं, या वह समय-समय पर बस अपने विचार सुनाना चाहते हैं? अगर सरकार नागरिकों को गंभीर मसलों पर भागीदार बनाना चाहे, तो वे कितनी बार शिरकत करें? इसको सरल करने की क्या नीति होगी? कितनी बार जनमत सर्वेक्षण कराया जाए और किन विषयों को सर्वेक्षण के लायक माना जाए? सरकार के अंदर किन संस्थानों को ई-डेमोक्रेसी के अधिक इस्तेमाल के लिए चुना जाए, जो ई-वोटिंग और ऑनलाइन मशविरे से आगे का काम कर सकें?

दरअसल ये उन कुछ सवालों में से हैं, जिनसे हमें दो-चार होना पड़ेगा, अगर हम लोकतांत्रिक भागीदारी को हर पांच वर्षों बाद बस आम चुनावों में हिस्सेदारी से अधिक कहीं ले जाना चाहते हैं.

हमें इस पर भी सोचना चाहिए कि किस तरह नई तकनीक का इस्तेमाल कर अधिक सक्रिय और प्रतिभागी नागरिकता विकसित की जा सकती है. कई व्यक्ति और समूह ऑनलाइन तकनीकों का इस्तेमाल कर अपनी बात सरकार तक पहुंचा भी रहे हैं और उसे सुना भी रहे हैं. अपने समूह में भी अधिक लोकतांत्रिक होने के लिए वह ई-तकनीक का इस्तेमाल कर रहे हैं. इस तरह हम सरकारी दफ़्तरों और घरों से आगे पारंपरिक लोकशाही को एक अलग तरीक़े से विकसित होते भी देखते हैं.

सरकारें पारंपरिक तौर पर रूढ़िवादी होती हैं और किसी भी बदलाव के लिए बेहद धीमे क़दम उठाती हैं. इसकी वजह उनके संगठनों की प्रकृति और समाज के हरेक वर्ग के हित का ध्यान रखने की मजबूरी है. अगले कुछ वर्षों में सरकारों के सामने चुनौती यह होगी कि वह फ़ैसला लेने की प्रक्रिया में अधिक से अधिक जनता की भागीदारी सुनिश्चित करे. इससे भी अहम बात यह कि सरकारें, ख़ास तौर से निर्वाचित निकायों को तो इस मामले में पहल कर जनता के बीच बहस करानी ही चाहिए कि कंप्यूटर और इंटरनेट तकनीक का इस्तेमाल कैसे किया जा सकता है और उससे हमारी लोकशाही के वर्तमान स्वरूप को कैसे बदला जा सकता है? हम सभी को इस बहस में हिस्सा लेना चाहिए कि बदलती हुई दुनिया में हमारी लोकशाही की प्रकृति क्या हो? सरकारें चिंतित हैं कि उनके संस्थानों की तरफ़ से जनता की निराशा बढ़ी है.

ज़ाहिर तौर पर ऐसे साधन मुहैया हैं, जो कि इस प्रवृत्ति को पलट सकते हैं. सवाल तो केवल यह है कि हम इन संसाधनों का इस्तेमाल किस तरह करते हैं, ताकि बदलाव लाया जा सके. सरकारी कार्यालयों में किसी भी बात के लिए सबसे नीचे से सबसे ऊपर तक सलाह की प्रक्रिया चलती है. फाइलें सबसे बड़े अधिकारी से लेकर नीचे तक–कृपया ध्यान दें, के नोट के साथ घूमती हैं. यही बात इसके उलट भी है. निचले अधिकारी से लेकर सर्वोच्च अधिकारी तक फाइलें इसी तरह अंतहीन चक्कर लगाती रहती हैं. इस प्रक्रिया की कठिनाई और परेशानी को देखते हुए ही किसी उर्दू शायर ने लिखा है–

हैं अफ़सर बहुत सारे दफ़्तर में मेरे
और इनमें बड़े साहब-ए-ग़ौर भी हैं
अभी चंद मेज़ों से गुज़री हैं फाइलें
मुक़ामात-ए-आह-ओ-फ़ुग़ और भी हैं...

कभी-कभार अगर संसद में सवाल पूछा जाता है या फिर सूचना के अधिकार के तहत जानकारी मांगी जाती है, तो हम यही सुनते हैं कि मामले पर सरकार विचार कर रही है. इसी बात पर पूर्व मुख्य न्यायाधीश स्वर्गीय मोहम्मद हिदायतुल्लाह ने एक बार कहा था कि इसका मतलब यही होता है कि फाइल की तलाश की जा रही है.

ज़ाहिर तौर पर यह बात तब बेहद अहम हो जाती है कि हम साध्य और साधनों के बारे में क्या सोचते हैं और किस तरह आम जनता को सूचना पहुंचाने का काम बिना किसी बाधा के हो और वह सरकार से सीधा संवाद कर सकें?

मेरा मानना है कि जल्दी या देरी से नागरिक समाज के सभी वर्ग किसी भेदभाव के बिना देश के शासन में अपनी भागीदारी तय कर सकेंगे.

आख़िरकार, फ़ैज़ के लफ़्ज़ों में–

लाज़िम है कि हम भी देखेंगे, वो दिन
कि जिस का वादा है
जब राज करेगी खल्क़-ए-ख़ुदा, जो मैं
भी हूं और तुम भी हो...

टी. महमूद

feedback.chauthiduniya@gmail.com

दुनिया

प्रेम प्रसंग की देन है फ़र्ज़ी मुठभेड़

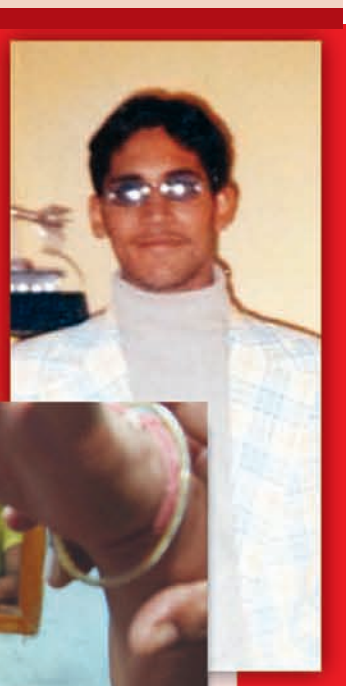

राजकुमार शर्मा

जब राष्ट्रपति प्रतिभा देवी सिंह पाटिल अपने तीन दिवसीय उत्तराखंड यात्रा के दौरान लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासनिक अकादमी में प्रशिक्षु अधिकारियों को अच्छे व्यवहार के लिए नसीहत दे रही थीं, उसी समय उत्तराखंड की पुलिस एक फ़र्ज़ी मुठभेड़ में एक पूर्व सैनिक के पुत्र के सीने को गोलियों से छलनी कर रही थी. मारा गया युवक उत्तर प्रदेश के गाजियाबाद के पूर्व सैनिक रवींद्र पाल सिंह का पुत्र रणवीर सिंह था. उत्तराखंड के मुख्यमंत्री रमेश पोखरियाल निशंक ने रणवीर प्रकरण की सीबी-सीआईडी की जांच के आदेश दे दिए हैं और निष्पक्ष जांच का भरोसा दिलाया है. इस बीच, एसएसपी अमिताभ सिन्हा का तबादला करते हुए इस घटना में शामिल सभी पुलिस कर्मियों को लाइन हाज़िर कर दिया गया है. साथ ही इस कांड में शामिल 14 पुलिस कर्मियों के ख़िलाफ़ हत्या का मामला भी दर्ज़ करा दिया गया है. लेकिन रणवीर के परिजन राज्य पुलिस से न्याय की इम्मीद न होने के कारण सीबीआई जांच से कम पर मानने को तैयार नहीं हैं.

उत्तराखंड पुलिस के हाथों मारे गए रणवीर के पिता रवींद्र पाल और भाई संदीप ने बताया कि वह पहली और अंतिम बार देहरादून आया था. रणवीर की किसी पुलिस वाले से कोई अदावत भी नहीं थी. लेकिन पुलिस ने झूठी वाहवाही लूटने के लिए तीन जुलाई को रणवीर को ढेर कर दिया. रणवीर के ख़िलाफ़ कोई आपराधिक मुक़दमा या फ़साद की कोई प्राथमिकी भी कहीं दर्ज़ नहीं थी. उसने इसी जून में एफआईटी मेरठ से एमबीए पूरा किया. इसके बाद कैंपस सेलेक्शन के ज़रिए उसे कोडक महेंद्रा कंपनी में नौकरी मिल गई थी, लेकिन मंदी के कारण उसे ज्वाइनिंग नहीं मिल पाई थी. वह इसी नौकरी के सिलसिले में जानकारी पाने के लिए दून आया था. लेकिन उत्तराखंड पुलिस ने इसे अपराधी बताकर मार डाला. यहां आने के बाद वह जैन धर्मशाला में ठहरा था. बाद में पुलिस धर्मशाला के इस कमरे के ताले को तोड़ सारा सामान ले गई, जिसमें रणवीर ठहरा था. धर्मशाला के मैनेजर द्वारा ठहरने वाले यात्री की सही आईडी प्रस्तुत करने के बावजूद पुलिस ने क्यों तोड़फोड़ की, यह समझ में नहीं आ रहा है. बहरहाल, दे-हरादून पुलिस द्वारा किए गए फर्जी एनकाउंटर की परतें खुलती जा रही हैं. दरअसल यह पूरा प्रकरण प्रेम प्रसंग की देन है. सूत्रों के मुताबिक रणवीर का अपने साथ पढ़ने वाली एक लड़की से प्रेम हो गया था. इस संबंध को लड़की के घरवाले स्वीकार करने को तैयार नहीं हुए. उन्होंने रणवीर को लड़की से दूर रहने को भी कहा था. इस सिलसिले में जिस लड़की का नाम सामने आ रहा है, वह मेरठ की रहने वाली है. उसके पिता मेरठ विकास प्राधिकरण में अभियंता बताए जा रहे हैं. सूत्रों की मानें तो जांच में काफी हद तक तस्वीर साफ हो चुकी है. आरोप है कि अभियंता की शह पर ही फ़र्ज़ी एनकाउंटर का जाल बुना गया. इसके लिए देहरादून स्थित आराघर पुलिस चौकी में तैनात एसआई जी.डी.भट्ट से सांठगांठ की गई. सूत्र तो यहां तक बता रहे हैं कि इस हत्याकांड को अंजाम देने के लिए भट्ट ने जो ताना-बाना बुना, उसकी जानकारी डालनवाला थाने के इंचार्ज जायसवाल को भी थी. पुलिस ने गिरफ़्तारी के बाद ही रणवीर पर थर्ड डिग्री का प्रयोग शुरू कर दिया था. पीट-पीट कर उसे अधमरा कर दिया गया था. मारने से पहले यातना दिए जाने की पुष्टि पोस्टमार्टम रिपोर्ट ने भी की है. दारोगा भट्ट ने रणवीर की पिटाई थानाध्यक्ष की मौजूदगी में की. राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल का तीन दिन का उत्तराखंड दौरा रणवीर की जान के पीछे लगे लोगों के लिए वरदान बन गया. राष्ट्रपति की सुरक्षा में सेंध के नाम पर मुठभेड़ का नाटक रचा गया और उसे अंजाम भी दे दिया गया. इस सिलसिले में जिस अभियंता का नाम आ रहा है, उसके बारे में भी कई हैरतअंगेज जानकारी मिल रही है. बताया जा रहा है कि वह सरकारी सेवा में रहते हुए भी बिल्डर का काम करता है. मेरठ प्राधिकरण के सचिव अनुराग पटेल की अगर मानें तो वह कई माह से बिना सरकारी सेवा किए वेतन ले रहा है. आरोप है कि उसने अब तक सरकार की सेवा कम, अपनी सेवा ज़्यादा की है. प्रधिकारण में उसका ख़ौफ़ रहता है. सक्षम अधिकारी भी उससे भय खाते हैं. यही कारण रहा कि वह एक अभियंता से बिल्डर बन गया.

बताया जा रहा है कि रणवीर जब मेरठ से एमबीए कर रहा था, उसी दौरान उसकी मुलाक़ात इस अभियंता की पुत्री से हुई और जल्द ही दोनों में दोस्ती भी हो गई. अभियंता ने पहले भी रणवीर के ख़िलाफ़ मेरठ पुलिस से मिल कर सबक़ सिखाने की योजना बनाई थी, लेकिन उसे कामयाबी नहीं मिली. लेकिन दून पुलिस के कुछ लोगों की मिलीभगत से उसे आख़िरकार कामयाबी मिल ही गई. पुलिस सूत्र भी बताते हैं कि इस घटना के बाद से वह अभियंता ग़ायब हो गया है. उसका कोई अता पता नहीं मिल रहा है. मामला चूंकि मेरठ से भी जुड़ रहा है, इसलिए थोड़ा गंभीर भी हो गया है. दूसरे राज्य का भी मामला हो जाने से उत्तराखंड पुलिस उस अभियंता और उसकी पुत्री से पूछताछ का साहस नहीं दिखा पा रही है. सूत्रों की मानें, तो मुख्यमंत्री निशंक का रवैया भी थोड़ा बदल गया है. यही कारण है कि पुलिस अब इस मामले में असमंजस में नज़र आ रही है.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

उत्तराखंड पुलिस के हाथों मारे गए रणवीर के पिता रवींद्र पाल और भाई संदीप ने बताया कि वह पहली और अंतिम बार देहरादून आया था. रणवीर की किसी पुलिस वाले से कोई अदावत भी नहीं थी. लेकिन पुलिस ने झूठी वाहवाही लूटने के लिए तीन जुलाई को रणवीर को ढेर कर दिया.

फोटो-प्रभात पाण्डेय

रणवीर (इनसेट) को खोने के ग़म में डूबी उसकी मां

फ़र्ज़ी मुठभेड़ में मारे गए रणवीर के परिजन.

देहरादून पुलिस की खुल गई पोल

पोस्टमार्टम रिपोर्ट से मुख्यमंत्री निशंक की आंख की पट्टी खुल गई और उन्होंने एसएसपी अमिताभ सिन्हा का तबादला करते हुए इस घटना में शामिल सभी पुलिस कर्मियों को लाइन हाज़िर कर दिया. साथ ही इस मामले से जुड़े 14 पुलिस वालों के ख़िलाफ़ रायपुर थाने में हत्या का मामला भी दर्ज़ करा दिया गया है. राज्य पुलिस के प्रमुख सुभाष जोशी ने कहा है कि किसी भी दोषी पुलिस कर्मी को छोड़ा नहीं जाएगा. ग़ौरतलब है कि जिले के एसएसपी अमित सिन्हा ने इस एनकाइंटर को न सिर्फ़ सही ठहरा दिया था, बल्कि इसके लिए अपने मातहतों की तारीफ़ भी कर दी थी. साथ ही इस घटना को अंजाम देने वाले पुलिस दल को साढ़े सात हज़ार का इनाम देने की घोषणा भी कर डाली. लेकिन चश्मदीदों के बयानों और पोस्टमार्टम रिपोर्ट से पूरी कहानी ही पलट गई.

तीन जुलाई को कथित एनकाउंटर में मारे गए रणवीर की पोस्टमार्टम रिपोर्ट ने उत्तराखंड पुलिस की पूरी पोल खोल कर रख दी है. शव पर यातना के अनगिनत निशान मिले हैं. रिपोर्ट से यह भी पता चला कि रणवीर के शरीर में नज़दीक से दर्जन भर गोलियां उतारी गईं. इस पोस्टमार्टम रिपोर्ट से मुख्यमंत्री निशंक की आंख की पट्टी खुल गई और उन्होंने एसएसपी अमिताभ सिन्हा का तबादला करते हुए इस घटना में शामिल सभी पुलिस कर्मियों को लाइन हाज़िर कर दिया. साथ ही इस मामले से जुड़े 14 पुलिस वालों के ख़िलाफ़ रायपुर थाने में हत्या का मामला भी दर्ज़ करा दिया गया है. राज्य पुलिस के प्रमुख सुभाष जोशी ने कहा है कि किसी भी दोषी पुलिस कर्मी को छोड़ा नहीं जाएगा. ग़ौरतलब है कि जिले के एसएसपी अमित सिन्हा ने इस एनकाइंटर को न सिर्फ़ सही ठहरा दिया था, बल्कि इसके लिए अपने मातहतों की तारीफ़ भी कर दी थी. साथ ही इस घटना को अंजाम देने वाले पुलिस दल को साढ़े सात हज़ार का इनाम देने की घोषणा भी कर डाली. लेकिन चश्मदीदों के बयानों और पोस्टमार्टम रिपोर्ट से पूरी कहानी ही पलट गई.

मौके पर मौजूद एक महिला आसमां के मुताबिक पुलिस ने नीली टी शर्ट वाले युवक को गिरफ़्तार किया था. बाद में पुलिस वाले इसे जीप में बैठा कर ले गए. एक अन्य गवाह सुनील वर्मा का कहना है कि जब वह सर्कुलर रोड से गुज़र रहे थे तभी पुलिस द्वारा एक युवक की पिटाई देखी थी. जिस युवक को पुलिस पीट रही थी, वही बाद में कथित मुठभेड़ में मारा गया युवक निकला. सवाल है कि राष्ट्रपति के दौरे के मद्देनज़र जब विशेष सतर्कता बरती जा रही थी, तब एक बाइक पर बैठे तीन लोगों को पहले ही क्यों नहीं रोका गया? चौकी इंचार्ज ने अकेले ही कैसे तीन युवकों से लोहा लिया, जबकि आम तौर पर चेकिंग के समय एक से अधिक सिपाही ज़रूर रहते हैं? दूसरे, सर्विस रिवॉल्वर होलेस्टर में रहता है और बेल्ट के ज़रिए बंधा रहता है. ऐसे में युवक आसानी से सर्विस रिवॉल्वर छीनने में कैसे सफल हो गए? इतना ही नहीं, चेकिंग वाली जगह और मुठभेड़ वाले स्थल में कम से कम चार किलोमीटर की दूरी है. ऐसे में एक बाइक पर सवार तीन युवक इतनी दूर तक कैसे निकल गए? बाक़ी दोनों युवक अगर घायल हैं तो कहां हैं? छोटी-मोटी घटना का भी श्रेय लेने की होड़ में लगे रहने वाले पुलिस कर्मी और अधिकारी एनकाउंटर टीम में शामिल लोगों के नाम बताने से क्यों बच रहे हैं? अगर पुलिस ने रणवीर को पकड़ लिया था तो क्या इसका अपराध इतना बड़ा था कि इसका एनकाउंटर कर दिया जाए? रणवीर और इसके कथित साथी अगर ख़तरनाक अपराधी थे तो पुलिस अब तक इनका आपराधिक इतिहास क्यों नहीं सामने ला पा रही है? सबसे अहम सवाल यह है कि यदि युवक भागते समय पुलिस दल पर फायर कर रहे थे, तो भागते युवकों के सीने में पुलिस ने गोली कैसे मारी, जबकि गोली तो पीठ में लगनी चाहिए थी ? और तो और, पहले पुलिस रणवीर के पास से तमंचा होने की बात कही थी, लेकिन बाद में मौके से यूएस मेड रिवॉल्वर बरामद होने की बात कही गई. इससे घटनास्थल ही अपने आप में संदेह पैदा करता है? इस कांड को अंजाम देने वाला दारोगा जी.डी.भट्ट इसके पहले भी अपनी हरक़तों के चलते चर्चित रहा है. खुड़बुड़ा पुलिस चौकी में तैनाती के दौरान भी वह कुख्यात हो चुका है. उसे कई बार निलंबन जैसी कार्यवाही तक झेलनी पड़ी है. इतना ही नहीं, अपने पुत्र के मुठभेड़ में मारे जाने की ख़बर सुन कर रणवीर के पिता रवींद्र पाल अपने घरवालों और रिश्तेदारों के साथ जब देहरादून शव लेने पहुंचे तो पुलिस वालों ने उनकी भी पिटाई कर दी. शवगृह के पास ड्यूटी पर तैनात सीओ अजय टम्टा ने अपने ख़ुद को ही सबसे बड़ा अधिकारी बताते हुए रणवीर की बुआ वीरमती और अन्य परिजनों के साथ बल प्रयोग किया. घरवालों के विरोध से बौखलाई पुलिस ने रणवीर के पिता रवींद्र पाल, भाई संदीप, चाचा सुरेंद्र, नरेंद्र, जितेंद्र, फूफा धन सिंह को लाठियों से बुरी तरह पीटा.

कुल मिला कर रणवीर कांड में दून की पुलिस बुरी तरह फंसती नज़र आ रही है. अफरातफरी में दून पुलिस ने जिस पाप को अंजाम दिया, वह उसके लिए भारी साबित हो रहा है. ग़ौरतलब है कि देहरादून पुलिस को लोग मित्र पुलिस के रूप में जानते हैं. लेकिन इस एक कांड से उसकी बदरंग हो गई है. प्रदेश के फौजी निजाम को बाय-बाय कहने के बाद भाजपा ने जिस तरह कट्टर हिंदूत्व वाले डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक को नया मुख्यमंत्री बना कर अपनी साख बचाने की कोशिश की थी, उसे भी इस कांड से धक्का पहुंचा है. राष्ट्रपति पाटिल के देवभूमि आने की तैयारी महीनों से चल रही थी. राष्ट्रपति के समक्ष देवभूमि की एक आदर्श छवि प्रस्तुत करने की तैयारी चल ही रही थी कि स्थानीय पुलिस ने खलनायक की तरह देहरादून की छवि बिगाड़ कर रख दी.

रा. शर्मा

feedback.chauthiduniya@gmail.com

बुज़ुर्ग कोई डस्टबिन नहीं

किरण चोपड़ा एक ऐसे परिवार से हैं, जहां उन्हें किसी तरह की चिंता करने की ज़रूरत नहीं थी. वह चाहतीं तो एक आरामदेह और बिना हलचल वाला जीवन किसी अन्य से बेहतर बिता सकती थीं. इसके उलट, उन्होंने दूसरी राह चुनी. अपना जीवन उन्होंने समाज के एक तबके की भलाई के लिए समर्पित कर दिया. वह भी उस तबके के लिए, जिसकी आमतौर पर सबसे अधिक अनदेखी की जाती है. जी हां, बात बुज़ुर्गों की हो रही है. बुज़ुर्गों को सम्मान और आत्मविश्वास दिलाने के लिए उन्होंने एक क्लब की स्थापना की. इस क्लब का नाम *वरिष्ठ नागरिक केसरी क्लब* है. जीवन की सांझ में बच्चों की अनदेखी से आहत बुज़ुर्गों में वापस आत्मविश्वास लाने और ज़िंदादिली से जीने के लिए यह संस्थान बख़ूबी प्रेरित करता है. पेश है, *किरण चोपड़ा* से *व्यालोक* की लंबी बातचीत के अंश :–

आप एक धनाढ्य परिवार से हैं. चाहतीं तो आरामदेह ज़िंदगी बिता सकती थीं. फिर भी आपने अपने लिए अनूठा कर्मक्षेत्र क्यों चुना?

देखिए, हमारा अख़बार (पंजाब केसरी) एक मिशन है. आपको तो पता ही होगा, हमारे परिवार के दो लोग आतंकवाद की बलि चढ़ गए. आतंकवाद ने हमारे ददिया श्वसुर लाला जगतनारायण और श्वसुर श्री रमेशचंद्र की जान ले ली. हमारे पति को भी रोज़ ही धमकियां मिलती हैं. कई हमले हो भी चुके हैं. उन्हें अब भी जेड+ सिक्योरिटी मिली हुई है.

हमारे बच्चे भी संगीनों के साए में रहते हैं. इसके साथ ही, मुझमें धार्मिक और पारिवारिक संस्कार गहरी जड़ें जमाए हुए हैं. इस वजह से मुझे अपने पति का साथ तो देना ही था. इसके अलावा मेरे अपने अनुभवों ने भी मुझे इस क्षेत्र में आने को प्रेरित किया. देखिए, बुज़ुर्गों का तबका ऐसा है, जिसकी सबसे अधिक अनदेखी होती है.

बच्चों और लड़कियों के लिए काम करने वाले बहुतेरे लोग और बहुतेरी संस्थाएं हैं, पर वरिष्ठ नागरिकों की तरफ़ कोई ध्यान नहीं देता. वह महज़ एक डस्टबिन या बेकार फर्नीचर बनकर अपने घरों में रहते हैं. मैंने व्यक्तिगत तौर पर अनुभव किया है कि बुज़ुर्गों को देखभाल और मदद की सबसे अधिक ज़रूरत है. इसीलिए मैंने यह काम शुरू किया. *वरिष्ठ नागरिक केसरी क्लब* के पीछे भी हमारा यही मक़सद था.

इसकी शुरुआत कब और कैसे हुई?

शुरुआत की जहां तक बात है, तो इसके लिए मैंने अपनी ज़िंदगी से सबक़ लिए. मैंने देखा कि सुंदरता को तो सब पसंद करते हैं, लेकिन कमज़ोरी, बीमारी और सौंदर्यहीनता को कोई पसंद नहीं करता. बुज़ुर्गों के चेहरे पर झुर्रियां पड़ जाती हैं, उनका सौंदर्य ढलान पर रहता है और उन्हें कई तरह की बीमारियां भी हो जाती हैं. रिटायरमेंट के बाद वे वैसे भी बोझ बनकर रह जाते हैं. वही आदमी जब तक कुर्सी पर रहता है, नौकरी में अधिकारी बनकर रहता है, तब तक तो वह सबका प्रिय रहता है. लेकिन, नौकरी से रिटायर होते ही वही बोझ बन जाता है. इन्हीं लोगों को आत्मविश्वास देने के लिए और ज़िंदादिली से जीने के लिए मैंने इस क्लब की शुरुआत की. मैं बूढ़ों को बेचारगी का अहसास नहीं कराना चाहती थी, इसीलिए इसे क्लब का नाम दिया. यह क्लब के प्रचलित मायनों से भी अलग है (मुस्कुराती हैं). मेरे हिसाब से क्लब का अर्थ है–गठन. सामूहिकता. साथ ही हमारे क्लब में तीनों वर्ग के लोग हैं. ज़रूरतमंद भी, मध्यवर्ग के भी और उच्च वर्ग के भी. सबसे अधिक संख्या ज़रूरतमंदों की है. मैंने क्लब इसलिए भी बनाया कि मैं वृद्धाश्रम के ख़िलाफ़ हूं. वृद्धाश्रम से अकेलापन, बहिष्कार और बेचारगी का भाव आता है. हम तो बुज़ुर्गों को सम्मान और आत्मविश्वास देना चाहते थे.

इसी वजह से हमने यह क्लब शुरू किया. काम 2004 में शुरू किया, जो आज काफी बढ़ गया है. हमारी कई शाखाएं हैं. हमने अपना फंड भी शुरू किया. हमें कोई दस रुपये भी देता है, तो हम उसे रसीद देते हैं. पूरा मामला पारदर्शी है. हमारे क्लब की लोकप्रियता तो इतनी बढ़ गई है कि गर्मी की वजह से अगर हम गतिविधियां बंद भी करते हैं, तो बुज़ुर्ग लोग उसको जारी रखने का आग्रह करते हैं.

आप तो बुज़ुर्गों के साथ काफी वक़्त गुज़ारती हैं. आपके हिसाब से उनकी मुख्य समस्याएं क्या हैं?

समस्याएं तीन हैं. पहली तो स्वास्थ्य की समस्या है. उम्र बढ़ने पर बीमारियां तो होंगी ही. तो, इसके लिए हमने उनके मुफ़्त मेडिकल जांच की व्यवस्था की है. हमने डॉक्टरों की भागीदारी भी सुनिश्चित की है. वह भी सबसे बेहतर अस्पतालों के बेहतरीन विशेषज्ञ. तो, हम कोई चलताऊ ढंग से काम नहीं कर रहे. दूसरी समस्या है, घर से मिली उपेक्षा और अनदेखी. आजकल के बच्चे बर्दाश्त नहीं करते. तीसरी समस्या अकेलेपन की है.

बच्चे अपने कामों में व्यस्त रहते हैं और इसी वजह से बुज़ुर्ग बिल्कुल अलग–थलग पड़ जाते हैं. सच पूछिए तो, बूढ़े और बच्चे एकसमान होते हैं. वे अपने लिए इज़्ज़त और प्यार चाहते हैं.

सभी फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

आपके यहां आम तौर पर क्या गतिविधि होती है?

सब कुछ. हम अपने क्लब में अभिनय से लेकर डांस और स्किट तक करते हैं. बुज़ुर्ग ख़ुद समूह गान बनाते हैं और गाते भी हैं. उनकी जो भी पसंद होती है, वही करते हैं. हम बस उनको यह यक़ीन दिलाना चाहते हैं कि वे जो कुछ चाहें, कर सकते हैं. अभी तो हमने कुछ महीने पहले बुज़ुर्गों का फैशन–शो भी कराया. वह भी कोई ऐसे–वैसे नहीं. पोशाकें रितु बेरी ने डिज़ाइन कीं, तो शो की जगह ललित होटल थी. हमने सबसे सहयोग लिया और सबने बाख़ुशी हमारे काम में हाथ बंटाया. हम बुज़ुर्गों को यह बताना चाहते हैं कि वे कूड़ेदान नहीं हैं. वे जो चाहें, कर सकते हैं.

आपके पास ऐसे भी वरिष्ठ नागरिक आते होंगे, जिनको बच्चों ने निकाल दिया है?

हां, क्यों नहीं. बिल्कुल आते हैं. हम दोनों पक्षों को साथ बिठाते हैं और उनकी काउंसिलिंग करने की कोशिश करते हैं. ख़ुशी की बात यह है कि 99 फीसदी मामलों में तो बात बन जाती है और बच्चे वापस अपने बुज़ुर्गों को साथ ले जाते हैं. दरअसल हम बहुत कोशिश करते हैं. बच्चों और बूढ़ों को अलग से भी बुलाते हैं, और साथ भी. दोनों को समझाते हैं. बुज़ुर्गों की भी समस्याएं होती हैं. वह भी बहुत अधिक टोका–टोकी करते हैं. हम उन्हें भी समझाते हैं. बच्चों को भी. कुछ जो अधिक हठी होते हैं, उनको कड़े लहजे में भी कहना पड़ता है. बाक़ी ईश्वर की कृपा से कभी–कभार ही एकाध मामले ही हाथ से निकलते हैं. बाक़ी तो सब ठीक हो जाते हैं.

अंत में, इस मुक़ाम पर आकर कैसा महसूस होता है?

अभी तो काफी काम करना है, लेकिन थोड़ा–सा सुकून ज़रूर मिलता है कि अपनी ताक़त भर कुछ करने की कोशिश कर रही हूं. समाज से जितना लिया, उसका थोड़ा–सा हिस्सा भी अगर समाज को लौटा सकें, तो बेहद ख़ुशी होगी. आख़िर यह तो ज़रूरी नहीं कि आप जिस समाज में पैदा हों, वह बेहतर हो. ज़रूरी तो यह है कि आप जिस समाज में पैदा हुए, उसे आप कुछ बेहतर कर सकें.

मीडिया वाच

बहस की आड़ में बाज़ार की वकालत

गंगेश मिश्र

भारत के उत्तर आधुनिक इतिहास में दो जुलाई 2009 को हमेशा याद रखा जाएगा. तीन कारणों से. इसलिए कि इस दिन तीन फ़ैसले लिए गए. सुबह, दिल्ली हाईकोर्ट ने धारा 377 की समीक्षा करते हुए उसे समानता के सिद्धांत के ख़िलाफ़ ठहराया. साथ ही यह भी कहा कि दो वयस्क पुरुषों या स्त्रियों में समलैंगिक संबंध अपराध नहीं हैं. दूसरे, इसके बाद भारतीय सभ्य समाज का चौथा स्तंभ समझे जाने वाले मीडिया ने फ़ैसला किया कि उसे गे और लेस्बियनों के समर्थन में आए फ़ैसले के पक्ष में खड़ा होना चाहिए. तीसरे, उस दिन का अंत सरकार ने यह फ़ैसला करते हुए किया कि छह से 14 वर्ष तक के लड़के–लड़कियों को शिक्षा का मौलिक अधिकार है और इसे क़ानूनी रूप देने के लिए बजट सत्र में ही संसद में बिल पेश कर दिया जाएगा. ग़ौरतलब है कि आज छह से 14 साल की उम्र में स्कूली शिक्षा लगभग समाप्त हो जाती है.

इन दो फ़ैसलों में से मीडिया ने आख़िरी को हाशिए पर रखा और बाक़ी का झंडाबरदार बन गया. अनुमान है कि भारत में समलैंगिक पुरुषों (गे) की संख्या लगभग 40 लाख और स्त्रियों (लेस्बियनों) की संख्या 20 लाख है. मुझे यह संख्या कुछ बढ़ा–चढ़ा कर पेश की गई लगती है. बहुत संभव है कि मैं ही ग़लत होऊं, लेकिन इससे क्या फ़र्क़ पड़ता है? फ़र्क़ तो इससे पड़ता है कि स्कूली शिक्षा को मौलिक अधिकार में लगभग शामिल कर लिया गया है. अब बस संसद से बिल पास होने की भर की देरी है. लेकिन लगता है कि समाज के स्वयंभू ठेकेदार बने मीडिया के टालू और ख़तरनाक क़िस्म की लापरवाही के चलते यह पूरा मामला कहीं फिर न पटरी से उतर जाए. इसलिए कि मीडिया ने अपनी आंखों पर जो चश्मा चढ़ा रखा है, वह गे और लेस्बियन की दुनिया से परे कुछ और देखने ही नहीं देता. इस पूरे मामले में ख़बरिया चैनलों ने अपने बौद्धिक दिवालिएपन को जिस बेशर्मी से परोसा है, उसके तमाम कारण समाज के लिए बेहद गंभीर और घातक हैं. सबसे पहले तो अदालत के फ़ैसले में यह साफ–साफ कहा गया है कि समलैंगिकता को अपराध तभी नहीं माना जाएगा जब वह दो वयस्कों के बीच हो. यहां ध्यान दिलाना चाहूंगा कि हर चीज़ की एक अनिवार्य प्रक्रिया होती है. और, हर प्रक्रिया की तरह इस रास्ते की भी बहुत–सी सीढ़ियां हैं. आप किसी भी समलैंगिक से पूछ लीजिए, कुछ अपवादों को छोड़कर किसी ने भी यह जीवन अपनी मर्ज़ी से नहीं चुना होता है. अमूमन ऐसा जीवन वे ही जीते हैं, जिनका बचपन में यौन शोषण हुआ होता है. हिंदी रंगमंच से जुड़े होने के कारण मुझे बिहार की लोककला–नटुआ–पर एक बार काम करने का मौका मिला था. मेरी जिस भी नटुआ से बात हुई, उन सबका बचपन रिश्तेदारों या पड़ोसियों ने रौंदा था. वयस्क जीवन में बचपन का यही अप्राकृतिक मैथुन उनके व्यक्तित्व का हिस्सा बन गया था. क्या इस कारण से साथ रह रहे दो वयस्कों के संबंधों को स्वस्थ मान लेना चाहिए?

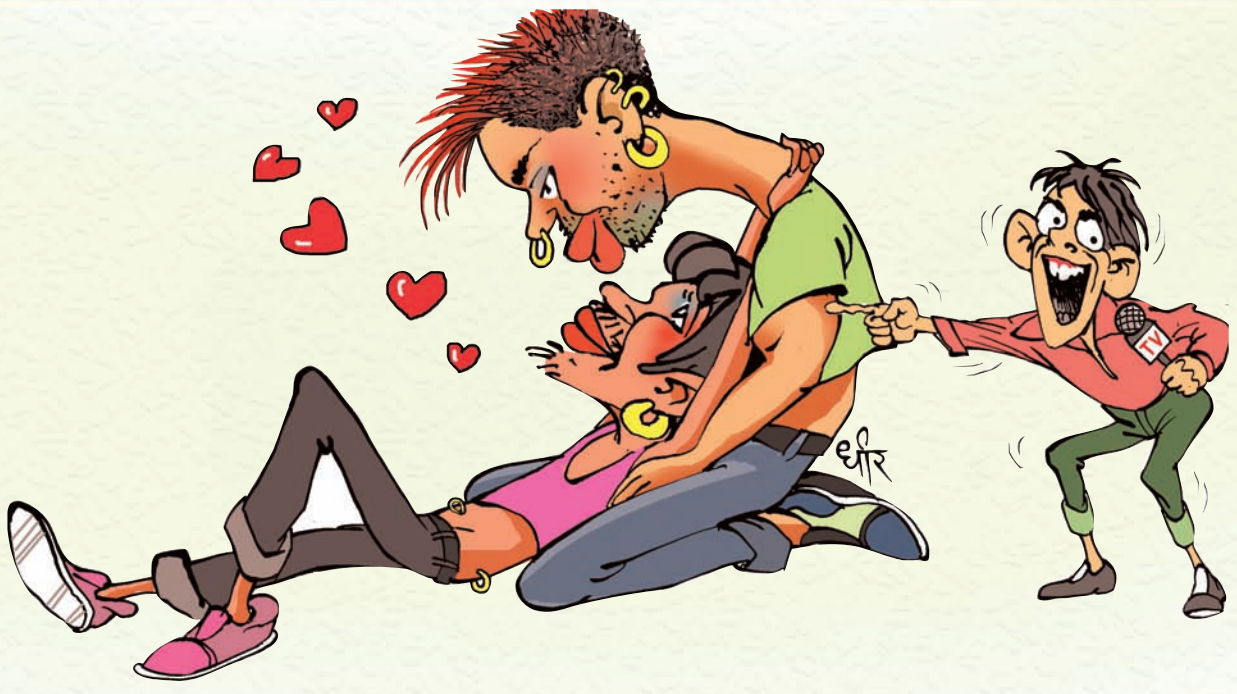

यहां एक बार फिर वही सवाल उठता है कि मीडिया का उद्देश्य क्या है? दरअसल, उसने अपने मन में एक तरह का समीकरण गढ़ लिया है, जिसे पश्चिमी देशों की तर्ज़ पर तैयार हुआ हमारा आज का बाज़ार समर्थन भी करता है. इस बाज़ार में ऐसे ही समाचार बिकते हैं. या फिर फिरोज़ाबाद में नशे में लुढ़के एक पुलिस वाले की पिटाई करा कर उस पर तैयार वीडियो बिकता है. उस पर पिटी–पिटाई दलील यह कि दर्शक जो चाहता है, हम वही दिखाते हैं. सच्चाई इसके ठीक उलट है. इन समाचारों के आगे शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाने जैसी बात नहीं बिकती. इसलिए कि पैसे वालों के बच्चे तो महंगे से महंगे स्कूलों में पढ़ ही रहे हैं, तो फिर शिक्षा का अधिकार किसे चाहिए. ग़रीबों को. ग़रीब पढ़ जाएंगे, तो मीडिया का आडंबर चकनाचूर नहीं हो जाएगा!

कई बार लगता है कि पश्चिमी शैली की आज की बाज़ारवादी व्यवस्था में मीडिया भी उसी तरह शोषित है, जिस तरह कि जनता के दूसरे हिस्से. मीडिया के लिए यह अधिक शोचनीय स्थिति इसलिए है कि इस सबके बावजूद वह भ्रांति में रहता है. ख़बरिया चैनलों के एंकरों को पता ही नहीं होता कि उनके तर्कों के मायने क्या निकल रहे हैं. जैसे, गे और लेस्बियनों को लेकर एक समझदार समझे जा रहे चैनल की समझदार समझी जाने वाली एंकर कह रही थी कि हमारी संस्कृति की कुछ प्राचीनतम साहित्यों में भी इनका वजूद मिलता है. ऐसे में कोई आज इस वर्ग को ग़लत कैसे ठहरा सकता है! ख़ास कर यह देखते हुए कि दंड संहिता तो अंग्रेजों की देन है और धारा–377 भी अंग्रेजों का बनाया हुआ है!! इसलिए हमें घड़ी की सूई को वापस घुमाते हुए प्राचीन मान्यताओं को मान लेना चाहिए!!!

एंकर ग़लत नहीं कह रही थी. वह दरअसल अपने कहे का मतलब नहीं समझ रही थी. भारतीय संस्कृति में बाल विवाह और सती प्रथा भी मौजूद रही हैं. बहुविवाह और बहुपतित्व, बहुपत्नीत्व की भी प्रथा रही है. क्या सिर्फ़ इसलिए उसे भी वापस शुरू कर देना चाहिए कि उसका ज़िक्र प्राचीन ग्रंथों में है? इससे आगे की बात और जान लीजिए. वेद में एक यम–यमी संवाद है, जहां से कई लोग नाटक की उत्पत्ति भी मानते हैं. संवाद करने वाले यम और यमी भाई–बहन हैं. दोनों नदी के किनारे घूमते हुए आपस में संबंध और उससे उत्पन्न होने वाली संतान के बुद्धिमान होने की बात करते हैं. वेद में इसके ज़िक्र पर ख़बरिया चैनल किस तरह की बहस चलाएंगे? दरअसल, इस तरह की बहस संत्रास और उबकाई पैदा करने वाली होती हैं. सच तो यह है कि गे और लेस्बियनों के संदर्भों में आप अमेरिका से अहमदाबाद तक के इस गोबर के ढेर पर फिसल आइए, आपको पश्चिमी पूंजी की खैरात हर जगह बंटती नज़र आएगी.

इस तरह ख़बरिया चैनल फिसलते हुए कितने नीचे चले गए हैं, इसके एक नहीं अनेक उदाहरण हैं. अभी हाल में ही दिल्ली के इंद्रपुरी थाने के कुछ पुलिसकर्मियों पर एक महिला से सामूहिक बलात्कार के झूठे आरोप लगा कर बवाल खड़ा करा दिया था. लोगों को भड़का कर थाने पर हमला तक करा दिया. बाद में जब महिला ने झूठ क़बूल लिया, तो उस ख़बर को ही ग़ायब कर दिया. उससे पहले दो–तीन दिनों तक ख़ूब मज़े लिए गए. उसी तरह, जैसे सिनेमाघरों में आगे की कतार में बैठे लोग अर्धनग्न हीरोइनों को देख उछल–उछल कर सिक्के फेंकने लगते हैं. ख़बरिया चैनलों की संवेदनशीलता देखनी हो, तो मुंबई के पानी संकट पर उनके रुख़ को देखिए. गंभीर से गंभीर चैनल तक ने इस ख़बर को बमुश्किल बीस सेकेंड में निपटा दिया कि मुंबई में पानी की सप्लाई में तीस फीसदी की कटौती शुरू हो गई है. शायद उन्हें यह भी नहीं पता कि अकेली मुंबई की आबादी पूरे देश में मौजूद समलैंगिकों से कहीं अधिक है. बहरहाल, जिस समय ख़बरिया चैनल बहस की आड़ में समलैंगिकों के बाज़ार को बढ़ाने में जी–जान से जुटे थे, उसी समय लंदन से एक अजीब–सी ख़बर आई. अपने यहां आम तौर पर सीनियर नए कर्मचारियों की शुरुआती परेशानी देख उपदेश देता है–नौकरी यानी ना करी. इसके पीछे एक अलग मनोवैज्ञानिक कारण है, जिस पर यहां चर्चा करना मेरा उद्देश्य नहीं है. संक्षेप में यह कि अक़्सर कठोर अनुशासन और मर्यादाओं के पालन के नाम पर दफ़्तरों के माहौल ऊबाऊ बना दिए जाते हैं. लंदन में ऐसे ही ऊबे हुए कुछ लोगों ने माहौल को ख़ुशनुमा बनाने के लिए दफ़्तर में नंगा रहना शुरू कर दिया है. जिस कंपनी के ये नंगे कर्मचारी हैं, वह है न्यूकैसल की डिज़ाइन एंड मार्केटिंग कंपनी. उसके कर्मचारी दफ़्तर पहुंचते ही नंगे हो जाते हैं. उनका मानना है कि ऐसा करना बेहतर काम करने में फ़ायदेमंद साबित हो रहा है. ऐसा करने वाले अपनी मर्ज़ी से यह सब करते हैं, जिस पर कंपनी को भी आपत्ति नहीं है. अब ज़रा फ़र्ज़ करें कि उनकी देखादेखी काफी लोग ऐसा ही करने लगें, तो? तो क्या संख्या कुछ अधिक हो जाने भर से इस तरह की मर्ज़ी को मर्ज़ नहीं कहना चाहिए? कंपनी के प्रबंध निदेशक माइक ओवेन ख़ुद कहते हैं–हम लोग या तो बहादुर हो गए हैं या फिर पागल.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

एम जे अकबर

क्या 17 वर्षों के बाद न्याय के कुछ मायने हैं?

छह दिसंबर 1992 को बाबरी मस्जिद के विध्वंस के बाद पहली जांच सात दिनों के भीतर पूरी कर ली गई. 13 दिसंबर को रविवार था. उस दिन तत्कालीन रक्षा मंत्री शरद पवार ने कुछ दोस्तों और सहयोगियों को एक साथी सांसद के घर आमंत्रित किया. उन्होंने एक फिल्म देखी- मस्जिद विध्वंस की लाइव फुटेज, जो किसी सरकारी एजेंसी की थी. शायद इंटेलिजेंस विभाग की. यह पुरानी रील अब भी कहीं सरकारी आर्काइव में पड़ी होनी चाहिए. उस फिल्म के बाद शायद ही किसी जांच आयोग की ज़रूरत थी, या कोई जांच आयोग उन सबूतों में कोई इज़ाफ़ा कर पाता. छह दिसंबर का पूरा घटनाक्रम उस फिल्म में क़ैद था, जिसमें आख़िरकार मस्जिद को ढाह दिया गया था.

इस ऐतिहासिक घटना के कारण भी पूरी तरह सबके सामने थे. लालकृष्ण आडवाणी की रथयात्रा कोई छिपी और अचानक हुई यात्रा नहीं थी. सच पूछिए तो बड़े पैमाने पर मीडिया कवरेज इसकी एक वजह रही हो, चूंकि आडवाणी अपनी राजनीतिक योजना के लिए बड़े पैमाने पर जनता की हिस्सेदारी चाहते थे. न ही यह कोई छिपी बात रही थी, जब कांग्रेस ने 1989 के आम चुनावों के बीच राममंदिर का शिलान्यास किया था.

यह जानना मज़ेदार होगा कि लिबरहान आयोग ने क्या खुलासा किया है? आख़िर राव उस पूरे दिन क्या कर रहे थे. बाबरी मस्जिद कोई अचानक और ताक़तवर विस्फोट से नहीं गिराई गई थी. उसे पत्थर-दर-पत्थर तोड़ा गया था. कारसेवकों द्वारा.

बोफोर्स के साथ ही बाबरी मस्जिद भी उन नाटकीय चुनावों का एक अहम हिस्सा थी. 1989 में भी भाजपा में आज के वरुण गांधी के संस्करण थे और उनके नारे, उनकी आवाज़ पूरी बुलंदी पर थी. अपने नारों में वे ऐसी आलंकारिक सजावट करते थे, जिस पर बाद में प्रतिबंध लगाया गया-मंदिर वहीं बनाएंगे या मुसलमान के दो स्थान, पाकिस्तान या क़ब्रिस्तान. किसी ने कुछ नहीं छिपाया.

लोकशाही खुले में खेला जाने वाला अस्थिर खेल है. आख़िर इस खुले खेल फ़र्रूख़ाबादी में छिपा क्या था, जिसकी जांच करने की ज़रूरत थी?

एक सरकारी जांच केवल यही कर सकता था कि जानी हुई बातों पर ही पक्षपातरहित फ़ैसले की न्यायिक मुहर लगाता. यह क्या अजीब नहीं लगता कि 16 दिसंबर 1992 को नियुक्त जस्टिस लिबरहान को तीन महीने के अंदर अपनी रिपोर्ट सौंपने को कहा गया था. अगर उनको छह महीने या एक वर्ष का भी विस्तार मिला होता, तो बात समझ में आती, लेकिन उन्होंने 17 साल क्यों लिए?

सारे मुख्य किरदार जाने हुए और उपलब्ध थे. आख़िर लिबरहान ने वी पी सिंह का बयान लेने में नौ वर्षों से अधिक और पी वी नरसिंहराव के बयान के लिए साढ़े नौ वर्ष क्यों लगा दिए? ज़ाहिर तौर पर वे उनके आदेशों से बच नहीं रहे थे? आडवाणी, उमा भारती और मुरली मनोहर जोशी जैसे नेता भाजपा नेतृत्व वाली सरकार में मंत्री थे, जब उन्होंने बयान दिए. आरएसएस के पूर्व प्रमुख के एस सुदर्शन केवल एक बार छह फरवरी 2001 को उपस्थित हुए. राव ने 9 अप्रैल 2001 से पहले बहुत कुछ बता दिया होता, जब वह प्रधानमंत्री नहीं रहे थे.

क्या आयोग ने सचमुच ही अपना उद्देश्य 2001 के पहले पा लिया था. उसने राव के प्रधानमंत्री के काल के बाद भी कई वर्षों तक काम किया था. इससे यह तो तय हो गया कि इसकी जांच से राव को इस्तीफा देने की मांग का सामना न करना पड़े. नरसिंह राव छह दिसंबर 1992 के बाद भी बचे रह गए, क्योंकि उन्होंने उनको ही ख़रीद लिया, जिनसे उनको सबसे अधिक ख़तरा महसूस होता था. वे कांग्रेस के भीतर के मुसलमान थे. सरकार के अंदर मौजूद कुछ को तरक़्क़ी दी गई और बाहर के अधिकतर को 3 जनवरी 1993 को मंत्रिमंडल के पुनर्गठन में जगह दे दी गई. अंतरात्मा ख़रीद ली गई. ज़िंदगी चलती रही.

यह जानना मज़ेदार होगा कि लिबरहान आयोग ने क्या खुलासा किया है? आख़िर राव उस पूरे दिन क्या कर रहे थे? बाबरी मस्जिद कोई अचानक और ताक़तवर विस्फोट से नहीं गिराई गई थी. इसे पत्थर-दर-पत्थर तोड़ा गया था. कारसेवकों द्वारा.

तो राव इन मिनटों और घंटों के दौरान-यानी सुबह से शाम तक-क्या कर रहे थे? सो रहे थे. जैसा कि उनके व्यक्तिगत सहायक ने कई क्षुब्ध कांग्रेसियों को बताया, जो जानना चाहते थे कि आख़िर सरकार सो क्यों रही है? वे इस जवाब को सुनकर अवाक रह गए थे. यह सचमुच सरकारी जवाब था. उनका विरोध तब शांत हो गया, जब उन्हें लगा कि पार्टी को इसकी सचमुच बड़ी क़ीमत चुकानी होगी. साथ ही, ज़ाहिर तौर पर मौन का अपना महत्व है.

17 वर्षों की जांच की कोई तार्किक व्याख्या नहीं होगी, पर इसकी राजनीतिक व्याख्या है. 1992 से 2004 के बीच हरेक सरकार का निहित स्वार्थ देरी में था. एच डी देवगौड़ा और इंद्र कुमार गुजराल की अल्पमत सरकार राव-केसरी की कांग्रेस के समर्थन के बिना एक दिन भी नहीं चल सकती थी. (उस समय सोनिया गांधी पार्टी अध्यक्ष नहीं थीं). न तो देवगौड़ा और न ही गुजराल कोई ऐसी रिपोर्ट चाहते थे, जो उनको लाभ पहुंचाने वालों को नुक़सान पहुंचाए.

भाजपा नेतृत्व वाली गठबंधन सरकार छह साल तक चली और सारे दोषी इसकी आगे की पांत में ही बैठे थे. केवल उमा भारती इतनी बेबाक थीं कि उन्होंने कहा कि मस्जिद टूटते वक़्त उनको ख़ुशी हुई थी. (मैं मस्जिद टूटने की ज़िम्मेदारी लेने को तैयार हूं और इसकी एवज में फांसी पर लटकने को भी). जस्टिस लिबरहान भाजपा की अगली पंक्ति में कुछ नैतिक छिद्र तलाश सकते थे. और यही वजह थी कि एक के बाद एक जब उन्होंने विस्तार मांगा तो सार्वजनिक तौर पर चुप्पी और निजी तौर पर ख़ुशी ज़ाहिर की गई.

भले चाहे या अनचाहे, लेकिन जस्टिस लिबरहान ने दोनों ही पक्षों के नेताओं को बचाया. यहां भी एक सवाल बच जाता है. उन्होंने 2004 में अपनी रिपोर्ट क्यों नहीं दी? ज़ाहिर तौर पर डॉक्टर मनमोहन सिंह तब नरसिंह राव सरकार में वित्त मंत्री थे. हालांकि उनको बाबरी की राजनीति से कुछ लेना-देना नहीं था. जब देरी इतनी आरामदेह बन जाए, तो चिंता क्यों करे?

feedback.chauthiduniya@gmail.com

रवि किशोर

फ़ैसले को सामाजिक मूल्यों और संस्कृति के आईने में देखें

भारतीय दंड संहिता की धारा 377 के संबंध में दिल्ली हाईकोर्ट के हाल के फ़ैसले ने मीडिया में बहस छेड़ दी है. ख़ासकर उनमें जो इस फ़ैसले के पक्ष में हैं और जो नैतिकता के आधार पर इसके विरोध में हैं कि यह संस्कृति, परंपरा और भारतीय समाज के ख़िलाफ़ है.

तथ्यों को समझने के लिए हमें दिल्ली हाईकोर्ट द्वारा दिए गए फ़ैसले के आधार को समझना ज़रूरी है. एक स्वयंसेवी संस्था नाज़ फाउंडेशन ने दिल्ली हाईकोर्ट में आईपीसी की धारा 377 की मान्यता को चुनौती देते हुए एक रिट याचिका दायर की. दावे का मुख्य आधार यह था कि आईपीसी की धारा 377, दो वयस्क और सहमत लोगों के बीच यौन संबंध पर रोक लगाकर उन मौलिक अधिकारों पर ही रोक लगा रही है, जिसकी गारंटी संविधान के अनुच्छेद 14,15,19 और 21 में दी गई है. इस मामले में केंद्र सरकार को गृह मंत्रालय, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय और राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संस्थान (नाको, जो स्वास्थ्य मंत्रालय के तहत ही आता है) के ज़रिए मुख्य प्रतिवादी बनाया गया था. इसी रिट याचिका को दिल्ली हाईकोर्ट ने 2004 में इस आधार पर ख़ारिज़ कर दिया था कि याचिकाकर्ता के पक्ष में कार्रवाई का कोई आधार नहीं है और क़ानून की वैधानिकता को अकादमिक तौर पर चुनौती नहीं दी जा सकती. याचिकाकर्ता इसके बाद सुप्रीम कोर्ट चले गए, जहां सर्वोच्च न्यायालय ने तीन फरवरी 2006 को दिल्ली हाईकोर्ट के आदेश से अलग यह व्यवस्था दी कि मामले पर विचार करने की ज़रूरत है और इसे ऊपर बताए गए आधार पर ख़ारिज़ करने की ज़रूरत नहीं थी. इस तरह मामला फिर से दिल्ली हाईकोर्ट में गया और इस तरह यह ताज़ा फ़ैसला आया.

दरअसल, विवाद की जड़ में आईपीसी की धारा 377 का वह दंडात्मक प्रावधान है, जो अप्राकृतिक सेक्स को आपराधिक मानता है. वह व्याख्या कुछ इस तरह की है-

अप्राकृतिक दोष- जो भी ऐच्छिक तौर पर प्रकृति की व्यवस्था के विपरीत किसी दूसरे पुरुष, स्त्री या किसी जानवर के साथ शारीरिक संबंध बनाता है, को उम्रक़ैद या फिर दस वर्ष से अधिक की क़ैद मिलेगी और ज़ुर्माना भी देना होगा.

समय की दरिया में जितना पानी बहा है, उसके साथ ही अप्राकृतिक यौन की व्याख्या भी बदली है. यह भले ही पश्चिमी समाज में अधिक हुआ है, जो दूसरों की तुलना में ख़ुद को अधिक उदारवादी दिखाना चाहता है. भारतीय संदर्भ में इसे यौन विकृति माना जाता है और भारतीय संस्कृति और मूल्यों के विरुद्ध माना जाता है.

याचिकाकर्ता स्वयंसेवी संगठन नाज़ फाउंडेशन एचआईवी/एड्स के क्षेत्र में काम कर रहा है. याचिकाकर्ता का दावा है कि वह इस मुक़दमे को जनहित याचिका के तहत लाना चाहता था, क्योंकि एचआईवी/एड्स रोकने के प्रयास कई बार राज्यों की एजेंसियों द्वारा बाधित होते हैं, क्योंकि एजेंसियां समलैंगिकों और लिंग-रूपांतरित (ट्रांसजेंडर) लोगों के लिए भेदभाव का रवैया रखती हैं. यह काम वे आईपीसी की धारा 377 की आड़ में करतीं हैं, जिसका नतीजा होता है कि ऐसे लोग या समूह अपने अधिकारों से वंचित रह जाते हैं. उनको गाली, शोषण, सार्वजनिक भर्त्सना और निजी तौर पर अपमान का सामना करना पड़ता है. माननीय दिल्ली हाईकोर्ट ने सभी पक्षों को सुनने और लिखित दलीलों व बयानों के आधार पर अपना फ़ैसला सुनाया और विस्तार से उन सवालों पर व्यवस्था दी, जो सभी पक्षों ने उठाए थे. ख़ासकर इन संदर्भों में :-

- क़ानून का इतिहास
- स्वयंसेवी संस्था को मिली चुनौतियां
- अनुच्छेद 21- किसी व्यक्ति के जीवन, उसके सम्मान, निजता और संप्रभुता का अधिकार
- निजता का अधिकार: आईपीसी की धारा 377 व्यक्ति के सम्मान और निजता के अधिकार में उल्लंघन
- यौन और पहचान
- समलैंगिकों को अपराधी ठहराने का प्रभाव
- राज्य के बाधक हित
- सार्वजनिक स्वास्थ्य की राह में आईपीसी की धारा 377 एक बाधा
- मौलिक अधिकारों को रोकने में नैतिकता को आधार बनाना
- क्या धारा 377 संविधान के अनुच्छेद 14 के मुताबिक दिए गए समानता के अधिकार को बाधित करता है.

हाईकोर्ट ने अपने फ़ैसले में विस्तार से भारत में और विदेशों में उच्चतर न्यायालयों द्वारा दी गई व्यवस्थाओं और क़ानूनों का उल्लेख किया. भारत में कुछ मील के फ़ैसलों में मेनका गांधी का मामला, पीपल्स यूनियन ऑफ सिविल लिबर्टीज़, ए के ठाकुर और इंदिरा साहनी आदि शामिल हैं. हाईकोर्ट ने अपने फ़ैसले में कहा -

-हम घोषणा करते हैं कि धारा 377-जहां तक आपसी सहमति से दो वयस्कों के बीच निजी तौर पर यौन-संबंध को आपराधिक बताता है-संविधान के अनुच्छेद 14,15 और 21 का उल्लंघन करता है. आईपीसी की धारा 377 ग़ैर-सहमति के योनि से इतर संभोग के मामलों में लागू रहेगी ही, जिनमें अवयस्क शामिल हों. वयस्क से हमारा मतलब 18 वर्षों और उससे अधिक के सभी लोगों से है. 18 वर्षों से कम के किसी भी व्यक्ति से किसी यौन संबंध के लिए सहमति देना अपेक्षित नहीं है. यह व्याख्या तब तक मान्य है, जब तक संसद भारत के लॉ कमीशन की 172 वीं रिपोर्ट के प्रस्ताव को प्रभावी बनाने का प्रस्ताव नहीं लाती. यह प्रस्ताव काफी हद तक भ्रम को दूर करता है. दूसरी बात हम यह साफ कर देना चाहते हैं कि हमारा फ़ैसला उन मामलों को फिर से खोलने की वजह नहीं बननी चाहिए, जो धारा 377 के मुताबिक दर्ज़ हैं और अपने अंतिम चरण में पहुंच चुके हैं.

हाई कोर्ट के इस फ़ैसले ने भानुमति का पिटारा खोल दिया है, क्योंकि फ़ैसले के बाद मीडिया में इस मसले पर विचारकों की बाढ़ आ गई है. फ़ैसले के पक्ष और विपक्ष में जमकर लेख लिखे जा रहे हैं, बहसें हो रही है. इसमें संदेह नहीं कि हाईकोर्ट इस फ़ैसले पर संवैधानिक प्रावधानों और मौलिक अधिकारों पर पूरी तरह विचार करने के बाद ही पहुंचा होगा. हालांकि, काफी हद तक यह भी महसूस किया जा रहा है कि भारतीय समाज की तुलना किस तरह पश्चिमी समाज से की जा सकती है, जहां नैतिक मूल्य दिन पर दिन पतनशील हैं. हम भारतीय अपनी नैतिकता को सबसे ऊपर मानते हैं, और कुछ भी अगर प्रकृति के ख़िलाफ़ है, तो वह अनैतिक है. काफी हद तक बात सही भी है. भारतीय संदर्भ में नैतिकता की जांच बिल्कुल आसान है- क्या उस विषय पर बच्चों और अभिभावकों के बीच बिना किसी हिचक के बहस हो सकती है? अधिकतर घरों में अगर टीवी पर आमतौर पर भी यौनिकता-खासकर, समलैंगिकता-पर बहस हो रही होती है, तो या तो अभिभावक या फिर बच्चे रिमोट तलाश कर तुरंत ही किसी सुरक्षित(?) चैनल को देखने लगते हैं. इस मसले को तो जाने ही दें. टीवी पर थोड़ा-बहुत नंगापन आने पर भी हम लोग एक-दूसरे से नज़रें चुराने लगते हैं.

इन हालातों में समलैंगिकता के पूरे मसले को नैतिकता की कसौटी पर कसना होगा, न कि केवल अकादमिक और संवैधानिक स्तर पर बहस करनी होगी. सरकार को भी अपना रुख़ बहुत साफ न रखने का दोषी ठहराया जाना चाहिए. केंद्रीय सरकार का भ्रमित और विरोधाभासी रुख कोर्ट में दाख़िल इसके दो मंत्रालयों के हलफनामों से ही स्पष्ट हो जाता है. यहां तक कि हाईकोर्ट ने अपने फ़ैसले में इस बात को रेखांकित किया कि गृह और स्वास्थ्य मंत्रालयों ने परस्पर विरोधाभासी हलफनामे दायर किए. गृह मंत्रालय ने धारा 377 को लागू करने को जायज़ ठहराया, जबकि स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने इस बात पर ज़ोर दिया कि धारा 377 की वजह से एचआईवी/ एड्स रोकने की कोशिशों को चोट पहुंच रही है. गृह मंत्रालय की दलील मुख्यतः सार्वजनिक नैतिकता पर आधारित थी. संवैधानिक बाध्यता है कि सरकार इस मसले पर अपना रुख़ साफ करे और ऊहापोह की नीति न अपनाए. सरकार को जल्द से जल्द इस मसले पर एक स्वस्थ बहस शुरू करनी चाहिए, जिसमें न केवल नाज़ फाउंडेशन जैसे एनजीओ शामिल हों, बल्कि समाज के हरेक तबके जैसे-धार्मिक प्रमुखों, विद्वानों और शिक्षाशास्त्रियों आदि भी को शामिल करना चाहिए. इसके बाद ही हम एक संतुलित फ़ैसला दे सकेंगे, वरना हम ऐसे द्वंद्व में फंसेंगे जहां ऊपरी तौर पर भले हम उदारवादी दिखें, लेकिन आंतरिक तौर पर हम अपने नैतिक मूल्यों और परंपराओं को किसी भी दूसरी बात से अधिक महत्व देते हों. हाईकोर्ट ने निजी स्थलों पर वयस्कों के बीच आपसी सहमति से यौन-संबंध की अनुमति दी है, पर इस फ़ैसले के बाद हम गे और लेस्बियन के विजय-जुलूस निकलते हुए देख रहे हैं. इनके समर्थन में तथाकथित एक्टिविस्ट के लेखों और बहसों की बाढ़ आ गई है. ये कार्यकर्ता जो भूल रहे हैं, वह यह कि इस तथाकथित अल्पसंख्यक समूह-जिसे अप्राकृतिक और बीमार माना जाता है- के समर्थन में लिखकर या चिल्लाकर हम उन छोटे बच्चों के दिमाग़ को प्रदूषित कर रहे हैं, जो इस तरह के लेख या टीवी पर ऐसे विज़ुअल्स देख रहे हैं.

जैसा कि हम हमेशा कहते हैं कि हमें अपनी पारिस्थितिकी को बचाने की ज़रूरत है, ताकि हमारी आनेवाली पीढ़ी को एक स्वस्थ पर्यावरण नसीब हो, वही बात नैतिक मूल्यों के साथ भी सही है. हमें आने वाली पीढ़ी को अच्छे नैतिक मूल्य देने की भी ज़रूरत है.

(लेखक सुप्रीम कोर्ट के वकील हैं)

feedback.chauthiduniya@gmail.com

प्रिय संपादकजी,

आपके साप्ताहिक अख़बार *चौथी दुनिया* का 12 जुलाई वाला अंक मिला. पढ़ कर बहुत अच्छा लगा. विभिन्न मुद्दों और विषयों पर आपने ख़ास ध्यान दिया. सियासी, देश की ज्वलंत घटना, पूर्वोत्तर की स्टोरी, किसानों की समस्या, पानी की समस्या से लेकर विदेश, स्वास्थ्य, करियर, साहित्य, खेल और फिल्मी ख़बरें आदि बहुत ही अच्छी और रोचक लगीं. अन्य अख़बारों की तुलना में इसको पढ़ने में अलग मज़ा आता है. सियासी पन्नों पर की गई टिप्पणी और किए गए विश्लेषण बहुत सटीक और सारगर्भित होते हैं. आपके संपादकीय का तो जवाब ही नहीं.

दूसरी बात यह कि इस बार के साहित्य के पन्ने में अनंत विजय का कॉलम बहुत अच्छा लगा. साहित्य जगत में बड़े लेखकों के बारे में सूक्ष्म जानकारियां पाठकों इसी तरह पहुंचाते रहिए. राजेंद्र यादव के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं से रूबरू होना शानदार रहा.

इसके साथ ही लालगढ़ मामले को लेकर बिमल राय की खोजपरक रिपोर्ट आंखें खोल देने वाली रहीं. इस रिपोर्ट से लालगढ़ में चल रहीं तमाम गतिविधियां आईने की तरह साफ हो गईं. इसमें कोई दो राय नहीं कि आपका साप्ताहिक दिन ब दिन बेहतर होता जा रहा है. इसके लिए आपकी संपादकीय टीम को हार्दिक बधाई.

अंत में पॉप म्यूज़िक के बेताज बादशाह माइकल जैक्सन के निधन पर अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं. वैसे

आपका
ललित
शास्त्री नगर, दिल्ली

जब तोप मुक़ाबिल हो

गेंद तो राजनीतिक दलों के पाले में है

अति उत्साह में लोगों ने फ़ैसले का मतलब पढ़ने की जहमत ही नहीं उठाई. न ही सही संदर्भों और मायनों में उसकी व्याख्या की. किया तो बस गे-परेड. छापी तो बस, एक-दूसरे को चूमते समलैंगिकों की तस्वीरें. दिखाईं, तो बस रंग-बिरंगी पोशाक पहने समलैंगिकों की नाचती-गाती टोली.

पिछला लगभग पूरा सप्ताह समलैंगिकता के नाम रहा. दिल्ली हाईकोर्ट के एक फ़ैसले के बाद पूरा देश गे, लेस्बियन और ट्रांसजेंडर नामक शब्दों की व्याख्या में उलझ गया. फ़ैसले के बाद होमोसेक्स समर्थकों और उनके नाम पर काम करने वाले गैर-सरकारी संगठनों की रैली की बाढ़ सी आ गई. फिर वही हुआ, जो होता है. अति उत्साह में लोगों ने फ़ैसले का मतलब पढ़ने की जहमत ही नहीं उठाई. न ही सही संदर्भों और मायनों में उसकी व्याख्या की. किया तो बस गे-परेड. छापी तो बस, एक-दूसरे को चूमते समलैंगिकों की तस्वीरें. दिखाईं, तो बस रंग-बिरंगी पोशाक पहने समलैंगिकों की नाचती-गाती टोली.

मामला इसके ठीक उल्टा है. कोर्ट ने साफ तौर पर अपने फ़ैसले में कहा कि वह केवल दो वयस्कों (समान लिंग वाले) के बीच आपसी रजामंदी से निजी तौर पर यौन-संबंध बनाने को अपराध मानने से इंकार करता है. कोर्ट ने न इससे अधिक कहा, न ही कम. इसका मतलब कहीं से यह नहीं निकलता कि कोर्ट ने समलैंगिकता को जायज़ ठहराया, अगर जायज़ ठहराता तो ऐसी शादी को वैधता भी देता. इसके अलावा कोर्ट ने तो साफ तौर पर यह भी कहा कि अवयस्क लोगों को यौन-संबंध के लिए सहमति देने लायक नहीं माना जाना चाहिए.

इस तरह हम देखते हैं कि फ़ैसले का विरोध और समर्थन करने वाले दोनों ही पक्ष अंधेरे में हैं. समर्थन करने वालों ने भी नहीं पढ़ा कि फ़ैसले में क्या है और न ही इसके विरोधियों ने. सबसे बड़ी बात तो यह कि इस मसले को ऐसा बना दिया गया मानो यह राष्ट्रीय आपदा या महत्व का मसला है. लगभग सवा अरब लोगों की आबादी की तुलना में समलैंगिकों की संख्या तो अंगुलियों पर गिनी जा सकती है. उनके ऊपर दिए हाईकोर्ट के एक फ़ैसले को लेकर हमारी राष्ट्रीय चेतना ही उलझकर रह गई.

इसके बाद तो, धर्माचार्य और कई संगठन भी इसके पक्ष-विपक्ष में उतर गए. कई मानवाधिकार संगठनों और एनजीओ ने तो फ़ैसले पर खुल कर जश्न ही मनाना शुरू कर दिया. यहां राजनीतिक दलों की भूमिका ग़ौर करने वाली है, जिसने बेहद चतुराई से इस पूरे प्रकरण से अपना पल्ला झाड़ लिया. वह भी तब, जब हाई कोर्ट ने अंतिम निर्णय भारत की संसद और सरकार पर ही छोड़ दिया है. कोई भ्रम में न रहे, यहां अदालत ने अंतिम नहीं अंतरिम व्यवस्था भर दी है. यानी अंतिम बात संविधान संशोधन के ज़रिए बनेगी, जिसके लिए राजनीतिक दलों में कोई राय होनी ही चाहिए. तटस्थ कोई हो ही नहीं सकता. पक्ष तो लेना ही पड़ेगा, इधर या उधर.

मज़े की बात तो यह कि अक़्सर एक-दूसरे के ख़िलाफ़ तलवारें ताने रहने वाले विश्व हिंदू परिषद और जमायत-उलेमा-ए-हिंद जैसे संगठन भी इस मुद्दे पर सुर में सुर मिलाते नज़र आए. कैथोलिक बिशप्स कांफ्रेंस ऑफ इंडिया के फादर डोमिनिक इमैनुएल ने कहा कि उनका रवैया हमेशा ही स्पष्ट रहा है. उनके मुताबिक, दो रजामंद वयस्कों के बीच यौन संबंधों को अपराध नहीं मानने की उनकी नीति रही है, लेकिन चर्च इसे नैतिक और अप्राकृतिक मानता है, और इसी वजह से इसका समर्थन नहीं कर सकता.

मज़े की बात तो यह कि अक़्सर एक-दूसरे के ख़िलाफ़ तलवारें ताने रहने वाले विश्व हिंदू परिषद और जमायत-उलेमा-ए-हिंद जैसे संगठन भी इस मुद्दे पर सुर में सुर मिलाते नज़र आए. कैथोलिक बिशप्स कांफ्रेंस ऑफ इंडिया के फादर डोमिनिक इमैनुएल ने कहा कि उनका रवैया हमेशा ही स्पष्ट रहा है. उनके मुताबिक, दो रजामंद वयस्कों के बीच यौन संबंधों को अपराध नहीं मानने की उनकी नीति रही है, लेकिन चर्च इसे नैतिक और अप्राकृतिक मानता है, और इसी वजह से इसका समर्थन नहीं कर सकता.

जमायत-उलेमा-ए-हिंद के प्रवक्ता मौलाना अब्दुल हमीद नूमानी ने तो मनुस्मृति और शरिया का हवाला देते हुए इस क़ानून का पूरा समर्थन किया. उन्होंने कहा कि चंद लोगों की चंद लम्हों की ख़ुशी की ख़ातिर किसी भी बात को जायज़ नहीं ठहराया जा सकता. विहिप के प्रवक्ता सुरेंद्र जैन ने भी ठीक इसी तरह की बात करते हुए कहा कि कुछ लोगों को किसी काम में मज़ा आता है, इससे उस कर्म की वैधता नहीं तय हो जाती. कुछ लोग तो जानवर के साथ भी संबंध बना लेते हैं, तो क्या आनेवाले दिनों में उसे भी जायज़ ठहराया जाएगा?

इन सबके अलावा बाबा रामदेव से लेकर दारुल उलूम, देवबंद और जमात-ए-इस्लामी हिंद तक कोर्ट के इस फ़ैसले के विरोध में आस्तीनें चढ़ा कर खड़े हो गए हैं. कुछ हद तक उनकी बातों में दम भी है.

इस क़ानून को जो ख़त्म करवाना चाहते हैं, वे इसके भविष्य में होनेवाले दुष्परिणामों को नहीं देख पा रहे. कोई चीज़ समाज में मौजूद है, इसलिए जायज़ ही है और उसे खुले तौर पर वैधता दे देनी चाहिए, ऐसी मांगों का कोई मतलब नहीं है. इससे अगर कुछ होगा, तो अराजकता फैलेगी, समाज का ढांचा टूटेगा और पारिवारिक संबंध बिखरेंगे. सोचने की बात है कि अगर आज़ादी के नाम पर अराजकता को छूट मिली तो हमारे समाज का बिखराव होते कितनी देर लगेगी? आपको हाथ चलाने की आज़ादी है, लेकिन तभी तक जब तक उसकी सीमा में किसी की नाक न आती हो.

वैसे सोच कर यह भी देखना चाहिए कि जो धर्मगुरु या संगठनों के नेता इस फ़ैसले के ख़िलाफ़ लामबंद हुए हैं, उनकी आवाज़ सचमुच प्रभावी है, या वे भी केवल बयानबाजी के लिए बयान दे रहे हैं. यह सोच बिना किसी वजह के भी नहीं है. आख़िर क्यों इन धार्मिक नेताओं या संगठनों की आवाज़ उतनी प्रभावी नहीं होती, जो पूरे देश में गूंजे. ऐसा क्यों है कि जब इस तरह के लोग बोलने लगते हैं तो उन्हें गंभीरता से सुनने के बजाय उनका मज़ाक बना दिया जाता है ? शायद इसलिए कि देश भर में कई आश्रम और मठ भी तो इस तरह के विवादों के साए में आ चुके हैं, जिनमें यौन-शोषण से लेकर बच्चों के शोषण तक की ख़बरें होती हैं. हमने देखा है कि हमारे गुरु या धार्मिक नेता फतवा या व्यवस्था तो दे देते हैं, लेकिन उसके बाद आम लोगों के बीच आकर उस लड़ाई को आगे नहीं बढ़ाते. इसलिए जब बोलते हैं, तो प्रभावकारी नहीं होते.

संपादक

editor.chauthiduniya@gmail.com

भारत के लिए मुफ़ीद नहीं है रोज़गार सब्सिडी

एक उदारवादी कल्याणकारी राज्य की अवधारणा का अहम पहलू यह भी है कि वह विकास का समान बंटवारा सुनिश्चित करता है. इसी में एक अहम उपाय रोज़गार गारंटी योजना है, जो वंचित तबके के लिए पूर्व निर्धारित दरों पर न्यूनतम कार्य दिवसों पर रोज़गार की उपलब्धता सुनिश्चित करती है. इसी उद्देश्य के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी अधिनियम (नरेगा) देश के सभी जिलों में लांच की गई. समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम(आईआरडीपी), सामुदायिक विकास कार्यक्रम और स्वर्ण जयंती जवाहर रोज़गार योजना समेत ऐसी तमाम योजनाएं पूर्व में आ चुकी हैं, जिनमें रोज़गार या भोजन के एवज में काम का प्रावधान था. इन तमाम योजनाओं को लागू करने के दौरान जो कठिनाइयां आईं, या अनुभव हुए, उन्हीं से नरेगा पैदा हुआ. इसके बाद से तमाम विश्लेषक इस अग्रणी रोज़गार गारंटी कार्यक्रम को और ठोस बनाने के लिए तमाम सुझावों के साथ सामने आ चुके हैं. इस लेखक ने हाल ही में ऐसा एक आलेख पढ़ा, जिसमें सुझाव दिया गया था कि सरकार द्वारा रोज़गार योजनाओं के बजाय नियोक्ता को रोज़गार सब्सिडी देनी चाहिए. आलेख लिखने वाले का मानना था कि इससे ज़्यादा तेज़ी से रोज़गार के अवसर पैदा होंगे.

इस आलेख में नोबेल पुरस्कार विजेता प्रोफेसर एडमंड फेल्पस का हवाला देते हुए कहा गया था कि यूरोप और अमेरिका में भी ऐसी योजनाएं चलती हैं, लेकिन असली ग़रीब हमेशा किनारे छूट जाते हैं. हक़ीक़त यह है कि सामाजिक ख़र्च समस्या को और गंभीर बना देता है, क्योंकि यह काम के भत्ते कम करता है और निर्भरता व मूल अर्थव्यवस्था से अलगाव की संस्कृति को जन्म देते हैं. साथ ही श्रम शक्ति की भागीदारी को कमतर करता है और रोज़गार व श्रमिक की वफादारी को भी घटाता है. प्रोफेसर फेल्पस इसका एक विकल्प सुझाते हुए कहते हैं कि कम मज़दूरी वाले रोज़गार के लिए सब्सिडी एक सबसे बेहतर उपाय है. यह रोज़गार उपलब्ध कराने वाले नियोक्ता को दी जाए, जिससे रोज़गार पर कंपनी के होने वाले ख़र्च में कटौती होगी. वेतन पर ख़र्च जितना ज़्यादा होगा, सब्सिडी उतनी ही कम होती जाएगी. यह तब तक जारी रहे, जब तक शून्य की दर पर न आ जाए. वेतन से जुड़ी ऐसी सब्सिडी नियोक्ताओं के बीच में अधिक से अधिक लोगों को काम पर लेने के लिए प्रतिस्पर्धा पैदा करेगी. इससे बेरोज़गारी में गिरावट आएगी.

यह माना जाता है कि फेल्पस द्वारा सुझाई गई योजना से पैदा होने वाला रोज़गार अर्थव्यवस्था पर भार की जगह एक निधि होगी. आईआईएम के प्रोफेसर भरत झुनझुनवाला का विश्वास है कि फ़िलहाल रवैया यही है कि शहरी व्यावसायिक संस्थानों पर थोपा गया टैक्स ग्रामीण भारत पर ख़र्च किया जाता है. शहरी व्यवसायियों पर पड़ने वाले टैक्स के बोझ का फल सुदूर गांव में बैठे लोगों को मिलता है. बिज़नेस सेक्टर को ऊंचे वेतन-भत्तों का बोझ उठाना पड़ता है. गांव में रोज़गार की उपलब्धता असल में कामगारों को श्रम की अतिरिक्त उपलब्धता से श्रम की किल्लत वाले क्षेत्र में अंतर पैदा करने का काम करती है.

असल में प्रोफेसर फेल्पस द्वारा प्रस्तावित विकल्प भारतीय संदर्भों में उतना प्रभावशाली सिद्ध नहीं हो सकता. अगर शुरू से बात करें तो विकसित देशों में इस तरह की रोज़गार गारंटी योजनाओं की विफलता के बावजूद वहां की सरकारें प्रोफसर फेल्पस द्वारा सुझाई गई रोज़गार सब्सिडी जैसी कोई चीज़ लागू नहीं कर सकी हैं. हक़ीक़त यह है कि पचास साल से भी ज़्यादा समय से विकसित देशों में इस तरह की रोज़गार गारंटी योजनाएं चल रही हैं. प्रोफेसर फेल्पस का प्रस्ताव असल में ख़ामियों का पुलिंदा है और किसी की सोच से भी ज़्यादा भ्रष्टाचार को बढ़ावा दे सकता है. असल में यह रोज़गार के अवसरों में इजाफे का वादा नहीं करता. पहली और सबसे बड़ी दिक़्क़त यही है कि कोई भी फर्म फ़र्ज़ी तरीक़े से वेतन-भत्तों के नाम पर सब्सिडी हासिल कर सकती है. नियोक्ता बेईमानी पर उतर आए तो रोज़गार के नए अवसर पैदा करने की जगह धोखाधड़ी करके सब्सिडी हड़प जाएंगे. अगर हम प्राइवेट सेक्टर की कुल श्रम शक्ति का डाटाबेस तैयार भी कर लेते हैं, तब भी हमारे पुराने अनुभव बताते हैं कि इस तरह किसी भी डाटाबेस में सेंध लगाना संपन्न लोगों के लिए कितना आसान है.

नियोक्ता को सब्सिडी देकर रोज़गार पैदा करने वाली कोई भी प्रणाली बहुत जटिल होगी और इसके दिशाहीन हो जाने की पूरी आशंका बनी रहेगी. निश्चित तौर पर बड़े व्यापारिक प्रतिष्ठानों को ऊंची कर दरों में छूट देने की और कोई ज़रूरत नहीं है. क्योंकि अच्छा प्रदर्शन करने वाले संस्थानों के लिए कई योजनाएं और छूट पहले से लागू हैं. इतना कर देने के बावजूद ये संस्थान इतना मुनाफ़ा कमा रहे हैं कि मंदी के दौर में भी दुनिया भर के नामी संस्थानों का अधिग्रहण कर रहे हैं. हमारा कर और छूट का ढांचा दुनिया के सबसे बेहतरीन ढांचों में से एक है. इस तरह की आशंका भी निरर्थक है कि ऐसी रोज़गार गारंटी योजनाओं से सरकार पर निर्भरता बढ़ेगी. मौजूदा प्रणाली असल में प्रोत्साहन आधारित पारदर्शी प्रणाली है, जिसमें कोई भी ज़्यादा काम का कामगार दूसरे के मुकाबले ज़्यादा कमा सकता है. दूसरे, यह बात भी गले नहीं उतरती कि शहरों की क़ीमत पर गांवों पर पैसा लुटाया जा रहा है. शहरों में आवश्यक सेवाओं का स्तर हमेशा से अच्छा रहा है. रोज़गार गारंटी योजना न सिर्फ़ एक परिवार के एक वयस्क के लिए कम से कम सौ दिन रोज़गार उपलब्धता सुनिश्चित करती है, बल्कि ग्रामीण अंचल में आधारभूत ढांचे का निर्माण और विकास भी सुनिश्चित करती है. माना जाता है कि इस तरह के आधारभूत ढांचे का ग्रामीण इलाक़े में निर्माण लोगों का शहरों की ओर पलायन रोकेगा. इसके साथ ही ये शहरी और ग्रामीण इलाक़े के बीच बढ़ती सामाजिक और आर्थिक खाई को भी पाटेगा. यह माना जाता है कि शहरी इलाक़ों में वेतन बढ़ते रहना चाहिए, जिससे पलायन थमेगा और ग्रामीण इलाक़े के कामगारों की उपलब्धता कम होगी. जब कम लोग ज़्यादा काम के लिए प्रतिस्पर्धा करेंगे, तो शहरी इलाक़ों को फ़ायदा होगा और मांग व आपूर्ति के बदलते ढांचे के कारण कम से कम ग्रामीण लोग शहर आएंगे. यह आशंका भी निर-ाधार है कि कम मज़दूरी वाले कामगारों की घटती उपलब्धता के कारणा शहर में उद्योग बंद हो जाएंगे या उन्हें गांवों का रुख़ करना होगा. जब हम उदारीकरण और वैश्वीकरण की बात करते हैं तो इस बात का कोई कारण समझ नहीं आता कि अधिक वेतन के कारण कोई उद्योग बंद हो जाएगा. और अगर कोई उद्योग सस्ते श्रम वाले इलाक़ों का रुख़ करता है तो स्वाभाविक है कि वह कम विकसित इलाक़ा होगा. उद्योगों का यह पलायन उस इलाक़े के आधारभूत ढांचे और जीवन स्तर में सुधार में सहायक होगा. एक बार ऐसा हुआ, तो उस इलाक़े में भी वेतन में बढ़ोतरी करना मजबूरी होगी. यह चक्र तब तक चल सकता है, जब तक देश में विकास का वितरण समान न हो जाए. सरकार को उद्योगों को ऐसे इलाक़ों में पलयान के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए. मौजूदा रोज़गार गारंटी योजना को लेकर यह डर भी ग़ैरवाजिब है कि श्रम शक्ति की भागदारी को घटाएगा. पूरे देश का अनुभव बताता है कि श्रम शक्ति की भागदारी बढ़ी है और प्रति व्यक्ति आय भी बढ़ी है. यह देश के विकास के अन्य सूचकों के लिए सहायक साबित होगा. सबसे बड़ी बात यह कि रोज़गार गारंटी योजना मंदी के ख़तरों से अछूती है. अगर यह किसी नियोक्ता की बात होती तो वह मांग में कमी से उत्पादन घटाता और रोज़गार कम होता.

रोज़गार सब्सिडी योजना के तहत ज़्यादा कुशल लोगों को रोज़गार देने की बात भी ख़ासी समस्या पैदा करने वाली है. असल में यह हक़ीक़त की जगह हवाई कल्पना है. यह धारणा भी ठीक नहीं है कि रोज़गार सब्सिडी से सीधे-सादे, अनपढ़ और अकुशल लोगों को ज़्यादा बेहतर मौके मिलेंगे और वह एक उद्योग से दूसरे उद्योग का रुख़ कर सकेंगे. असल में इससे शोषण का ख़तरा पैदा हो जाएगा.

रोज़गार सब्सिडी योजना के तहत ज़्यादा कुशल लोगों को रोज़गार देने की बात भी ख़ासी समस्या पैदा करने वाली है. असल में यह हक़ीक़त की जगह हवाई कल्पना है. यह धारणा भी ठीक नहीं है कि रोज़गार सब्सिडी से सीधे-सादे, अनपढ़ और अकुशल लोगों को ज़्यादा बेहतर मौके मिलेंगे और वह एक उद्योग से दूसरे उद्योग का रुख़ कर सकेंगे. असल में इससे शोषण का ख़तरा पैदा हो जाएगा. बड़े उद्योग असहाय मज़दूरों का फ़ायदा उठाएंगे. अकुशल होने के नाम पर कम मज़दूरी देंगे. साथ ही उन्हें ख़तरनाक परिस्थितियों में काम करने पर मजबूर किया जाएगा.

अधिकतर कॉरपोरेट संस्थानों में कम से कम इतनी ज़िम्मेदारी का अहसास नहीं जागा है कि वे किसी ग़ैर अनुभवी और अकुशल श्रमिक को रोज़गार देंगे और फिर उसे पढ़ाएंगे, लिखाएंगे और ज़्यादा बेहतर मौके देंगे. ज़रूरत इस बात की है कि रोज़गार गारंटी योजनाओं का दायरा बढ़ाया जाए और इन्हें विविध क्षेत्रों में लागू किया जाए. इससे लोगों को बेहतर वेतन और मौक़े उपलब्ध होंगे.

संविधान के दिशा- निर्देशक तत्वों में काम के संवैधानिक अधिकार का भी प्रावधान किया गया है. लेकिन इसे हक़ीक़त बनाने में पांच दशक लग गए. यह हक़ीक़त है कि चुनिंदा जिलों में रोज़गार की गारंटी देने वाला नरेगा कार्यक्रम अब देश के सभी जिलों में लागू कर दिया गया है. यह बहुत बड़ी उपलब्धि है. यह धारणा भी ग़लत है कि मौजूदा योजना के मुक़ाबले सुझाया गया रोज़गार सब्सिडी वाला विकल्प भ्रष्टाचार से मुक्त है. मौजूदा योजना में जॉब कार्ड के साथ ही प्रार्थनापत्र मिलने के पंद्रह दिन के अंदर रोज़गार उपलब्ध कराने के लिए ज़िम्मेदारी तय की गई है. अगर रोज़गार या बेरोज़गारी भत्ता नहीं दिया जाता, तो सोशल ऑडिट की व्यवस्था है. जॉब कार्ड, मस्टर रोल का सार्वजनिक प्रदर्शन और सोशल व फाइनेंशियल ऑडिट योजना को ज़्यादा पारदर्शी और जवाबदेह बनाता है. सूचना के अधिकार बाक़ी ख़ामियों पर नज़र रखने के लिए काफी हैं. हां, यह सही है कि सुधार की काफी गुंजाइश है. फील्ड से मिलने वाली शिकायतों और सुझावों को ध्यान में रखकर योजना को और ज़्यादा प्रभावी बनाया जाना चाहिए. प्रोफेसर फेल्पस के सुझाव को भी पायलट प्रोजेक्ट के तौर पर कुछ चुनिंदा क्षेत्रों में लागू करके देखा जा सकता है. ज़्यादा बेहतर होगा कि दोनों में से किसी एक विकल्प पर पूरी तरह निर्भर होने के बजाय हमें दोनों के मिश्रण से ज़्यादा प्रभावी विकल्प का विकास करना चाहिए.

पूंजीवादी व्यवस्था की विफलता के बाद यह बात मानी जा चुकी है कि सामाजिक ज़िम्मेदारियों को हम पूरी तरह बाज़ार की शक्तियों के हवाले नहीं कर सकते. सरकार को पूरी तरह से सामाजिक ज़िम्मेदारियों से अलग करना कोई विकल्प नहीं है. सरकार को एक नियामक के तौर पर बने रहना होगा. उसकी ज़िम्मेदारी क़ानून-व्यवस्था, न्याय और समतापूर्ण समाज के निर्माण की होनी चाहिए. रोज़गार सब्सिडी जहां प्राइवेट सेक्टर के हवाले होगी, सिर्फ़ इस नाते उसे रोज़गार गारंटी पर तरजीह नहीं दी जा सकती है.

सौमित्र मोहन

feedback.chauthiduniya@gmail.com

ख़ुफ़िया एजेंसियों के सीक्रेट

किसी फंतासी से कम नहीं है एफबीआई

पावस नीर

दिसंबर 2001 में बिजली की सबसे बड़ी कंपनी एनरॉन ने ख़ुद को दिवालिया घोषित कर दिया. हज़ारों निवेशकों और शेयरधारकों का पैसा डूब चुका था. उसी दौरान एक अमेरिकी केंद्रीय सरकारी संस्था के लिए काम कर रहे दो लोगों को एक नया ज़िम्मा मिला. ज़िम्मा था, एनरॉन के दिवालिएपन के पीछे की वजह का पता लगाने का. कुछ दिनों में इस काम पर लगे लोगों की संख्या बढ़कर 45 हो गई थी. कुछ दिनों बाद एनरॉन के डूबने के पीछे की पूरी कहानी सामने आ गई. कंपनी के बड़े अधिकारियों की धोखाधड़ी का पूरा मामला खुल चुका था. आगे का काम कोर्ट का था.

मार्च 1924 में एक मामूली क्लर्क ने भरी अदालत में यह क़बूल किया कि ख़ौफ़नाक संगठन कु-क्लक्स-क्लान के पीछे उसी का दिमाग़ था. कु-क्लक्स-क्लान उस समय अमेरिका का सबसे बड़ा आतंकवादी संगठन था. काले लोगों और उदारवादियों के ख़िलाफ़ लूट और हत्या की कार्रवाइयों की ज़िम्मेदारी उस पर थी. एडगर यंग क्लार्क नाम का यह शख़्स दरअसल अवैध वेश्यावृत्ति के मामले में पकड़ा गया था. अपने सारे बड़े गुनाहों को छुपा कर रखने में सफल रहा एडगर यंग क्लार्क तब पकड़ा गया, जब वह अपनी प्रेमिका के साथ एक राज्य से दूसरे राज्य में जा रहा था. यह कोई बड़ा गुनाह नहीं था और इससे जुड़े क़ानून को शायद लोग भूल चुके थे, लेकिन एक केंद्रीय संस्था में काम करने वाले एक वकील ने इसी क़ानून के इस्तेमाल से उस समय के सबसे बड़े अपराधी को धर लिया. इससे पहले सारे अपराधों की जानकारी होते हुए भी उसे पकड़ना मुश्किल था, क्योंकि उसके ख़िलाफ़ कोई सबूत नहीं था. पकड़े जाने के बाद पूछताछ में उसने सारे राज़ खोल दिए.

1931 में एक अमेरिकी नागरिक अल कैपोने को वित्तीय अनियमितताओं के आरोप में गिरफ़्तार कर लिया गया. अमेरिकी अख़बारों में सुर्खियां थीं- माफिया की गिरफ़्तारी. सबूतों के अभाव में अब तक पुलिस की पकड़ से दूर रहा अल कैपोने, असल में दुनिया का सबसे बड़ा गैंगस्टर था. उसे भले ही एक केंद्रीय संस्था ने बड़ी चतुराई से टैक्स चोरी और धोखे का आरोप लगा कर पकड़ा था, लेकिन यह गिरफ़्तारी अमेरिकी संगठित अपराध के सबसे बड़े मुखिया की थी.

एफबीआई का मुख्यालय

इन मामलों और गिरफ़्तारियों के बारे में शायद आपने पहले भी पढ़ा या सुना हो. अगर ऐसा है तो आप उस संगठन के नाम से वाक़िफ़ ज़रूर होंगे जिसका ज़िक्र बार-बार इन मामलों में आया है. यह नाम दुनिया के सबसे विस्तृत, असरदार, तेज़-तर्रार केंद्रीय जांच एजेंसी का है. यह नाम है-अमेरिकी फेडरल ब्यूरो ऑफ इंवेस्टिगेशन यानी एफबीआई.

अमेरिका की संघीय जांच एजेंसी-एफबीआई- का आधिकारिक रूप से गठन तो 1935 में हुआ, लेकिन वह इससे पहले भी ब्यूरो ऑफ इंवेस्टिगेशन, डिवीजन ऑफ इंवेस्टिगेशन और यूएस ब्यूरो ऑफ इंवेस्टिगेशन के नाम से काम करता रहा था. इस जांच एजेंसी के गठन का असल मक़सद एक ऐसी संस्था का निर्माण करना था, जिसके पास सभी राज्यों में शक्ति हो. उस समय तक केवल राज्यवार पुलिस थी जिससे कभी भी अपराधी एक राज्य में अपराध कर दूसरे में बच निकलते थे. एफबीआई का असल काम अंतरराज्यीय आर्थिक अपराधों को रोकना था. धीरे-धीरे एफबीआई ने अन्य आपराधिक मामलों को भी अपनी जद में लेना शुरू कर दिया और एक संघीय जांच एजेंसी के रूप में राज्य पुलिस को सहयोग भी देने लगी. गंभीर अपराधों को हल करने में एफबीआई ने महारत हासिल कर ली और उसकी ताक़त में बढ़ोतरी होती रही.

सन 1930 में एफबीआई ने अपना वार ऑन क्राइम अभियान छेड़ा. इस अभियान के तहत उसने कई कुख्यात गैंगस्टरों, बैंक लुटेरों, हत्यारों और अपराधियों का सफाया कर दिया. 1929 की महान मंदी के बाद उभरे अपराधियों जैसे जॉन डिलींगर, लेस्टर जे गिल्स उर्फ बेबी फेस नेल्सन, जार्ज मशीन गन कैली को मौत के घाट उतार कर एफबीआई ने ख़ुद को अपराध से लड़ने वाली सबसे ताक़तवर अमेरिकी संस्था साबित कर दिया.

एडगर जे हूवर

इसी बीच कम्यूनिज़्म के उदय और अमेरिका में सोवियत जासूसों के आने से एफबीआई के निदेशक एडगर जे. हूवर को उनकी मुंहमांगी मुराद मिल गई. इसके बाद से कम्यूनिज्म के ख़तरे के नाम पर एफबीआई ने कई हस्तियों के बारे में जानकारी इकट्ठा करनी शुरू कर दी. इन जानकारियों में इन हस्तियों की निजी से निजी बातें इकट्ठा की गईं थीं. एडगर जे हूवर के समय इकट्ठा एफबीआई की इन फाइलों का रहस्य इतना गहरा था कि ये हूवर फाइल्स अमेरिकी अपराध और मनोरंजन जगत में एक मिथक बन गईं.

pawas.chauthiduniya@gmail.com

एडगर जे हूवर और द एफबीआई फाइल्स

फेडरल ब्यूरो ऑफ इंवेस्टिगेशन-एफबीआई और एडगर जे हूवर का नाम ऐसा एक साथ जुड़ा है कि उन्हें अलग करना मुश्किल है. एफबीआई के पहले निदेशक रहे एडगर जे हूवर ने ही एफबीआई के कामकाज करने के तरीक़े और पूरे ढांचे की कल्पना की थी. ब्यूरो ऑफ इंवेस्टिगेशन (बीओआई) के सह-निदेशक रहे हूवर जब एफबीआई के निदेशक बने तो उनका प्रभाव ऐसा रहा कि एफबीआई का मतलब ही एडगर हूवर माना जाने लगा. एडगर जे हूवर का प्रभाव ऐसा था कि उन्हें कई सरकारों से भी ज़्यादा ताक़तवर माना जाता था. 48 साल तक एफबीआई के निदेशक रहे हूवर के बाद एफबीआई के मुख्यालय का नाम ही एडगर हूवर बिल्डिंग कर दिया गया.

अपने कार्यकाल में जब उन्होंने कम्यूनिज़्म के ख़िलाफ़ चौकसी के नाम पर बड़े और प्रभावशाली लोगों को बारे में जानकारी इकट्ठा करनी शुरू कर दी, तो उसके लिए हर तरीक़ा अपनाया गया. फोन-टैपिंग और गोपनीय फाइलों की चोरी से लेकर सीधे पूछताछ तक के उपाय इस्तेमाल कर हूवर ने एफबीआई फाइल्स का एक संग्रह बनाया. जिन मशहूर हस्तियों की फाइल हूवर ने तैयार कराई थी उनमें चार्ली चैपलिन, एल्विस प्रेसली, जेन फोंडा, जॉन लेनन, ग्राउचो मार्क्स, बॉब डिलन जैसे नाम शामिल थे. एडगर की इन एफबीआई फाइल्स का ख़ौफ़ उसके मरने के बाद भी बना रहा, हालांकि एफबीआई इस तरह की फाइलों के होने से ही इंकार करती रही.

ज़रा हट के

अमानो आईएईए के नए निदेशक

अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (आईएईए) के नए अध्यक्ष यूकिया अमानो बनाए गए हैं. जापान के इस राजनयिक को मोहम्मद अलबरदेई की जगह चुना गया है. हालांकि अमानो को चुनने से पहले काफी खींचतान हुई. दरअसल अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी के अध्यक्ष के चुनाव में दो-तिहाई मत प्राप्त करना ज़रूरी होता है.

कई महीनों से उम्मीदवारों के बीच कड़ा मुक़ाबला जारी था. इस पद पर यूकिया अमानो और दक्षिण अफ्रीका के राजनयिक अब्दुल समद मिंटी के बीच कड़ा मुक़ाबला था. मिंटी को अनेक विकासशील देशों का समर्थन मिल रहा था. दूसरी तरफ़, पश्चिमी देश अमानो का समर्थन कर रहे थे. अमानो आईएईए के प्रधान के पद को राजनीतिक नहीं, बल्कि किसी हद तक एक प्रबंधक का पद मानते हैं. उन्होंने कहा है कि वह जांच के लिए परमाणु ऊर्जा एजेंसी के सिद्धांतों पर पूरी तरह से अमल करेंगे और संगठन के प्रबंधन में चुस्ती लाएंगे. उन्हें ईरान के साथ परमाणु विवाद में अमेरिकी रुख़ का समर्थक माना जाता है. यह भी एक कारण है कि कई विकासशील देशों को डर था कि वह इस पद पर शायद तटस्थ नहीं रह पाएंगे. इसलिए उनकी कोशिश थी कि किसी उम्मीदवार को व्यापक सहमति के आधार पर ही चुना जाए. जो सूचनाएं मिल रही हैं, उसके मुताबिक अमानो को गवर्नर बोर्ड के 35 में से 23 सदस्यों का समर्थन मिला, जबकि एक सदस्य तटस्थ रहा. उनके चुनाव को अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी में विकसित और विकासशील देशों के बीच विभाजन का सूचक माना जा रहा है. इसे पाटना उनके कार्यकाल की सबसे बड़ी चुनौती होगी. अमानो को ईरान के संवेदनशील परमाणु कार्यक्रम के अलावा सीरिया की परमाणु गतिविधियों की जांच के सवाल से भी निपटना पड़ेगा. इसके अलावा उत्तर कोरिया के परमाणु परीक्षण भी उनके पद के लिए एक चुनौती बने रहेंगे. वह यूं तो छह दौर के चुनाव के बाद इस पद पर आए हैं, लेकिन समस्याओं से निपटने के लिए उन्हें इससे कहीं अधिक दौरों की ज़रूरत होगी. इसका अहसास यूकिया अमानो को ख़ुद भी है. इसलिए चुनाव के बाद अपने पहले बयान में उन्होंने भी कि उन्हें इसके लिए पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण सभी दिशाओं के देशों की एकजुटता की ज़रूरत है.

रूस में अब नहीं जलेंगे तेज़ बल्ब

ऊर्जा की खपत आम घरों में भी कम नहीं होती. गर्मियों और सर्द दिनों में एसी व हीटर ही नहीं, रोशनी के लिए इस्तेमाल होने वाले सामान्य बल्बों में भी ऊर्जा की काफी खपत होती है. इसीलिए रूस ने ऊर्जा की खपत कम करने की ख़ातिर जब क़दम उठाए, तो इसकी शुरुआत आम घरों से ही की है.

उसने 2011 से बहुत तेज़ जलने वाले बल्बों के निर्माण और ख़रीद-बिक्री पर प्रतिबंध लगा दिया है. आर्थिक विकास मंत्री और ऊर्जा बचत टास्क फोर्स की अध्यक्ष एल्वीरिया नाबियुलिना के मुताबिक दो साल बाद सौ वाट से अधिक की क्षणता वाले बहुत तेज़ जलने वाले बल्बों का निर्माण पूरी तरह बंद कर दिया जाएगा. उनका मानना है कि इस एक क़दम से देश में 10 से 20 फीसदी बिजली की बचत होगी. ग़ौरतलब है कि रूस के राष्ट्रपति दिमित्री मेदवेदेव ने भी पिछले दिनों कहा था ऊर्जा बचत को प्रोत्साहित करने के लिए कड़े नियमों और कड़ी अनुशंसाओं की ज़रूरत है. उन्होंने कहा था कई प्रकरणों में हमें प्रतिबंध लगाने होंगे. उदाहरण के लिए बहुत तेज़ जलने वाले बल्ब. यह एक क्रांतिकारी तरीक़ा होगा. बल्बों के निर्माण पर प्रतिबंध लगाने के बाद रूस ऊर्जा संबंधी कुछ दूसरी योजनाओं पर भी काम कर रहा है.

इस बारे में शीघ्र ही एक विधेयक भी आने वाला है. नाबियुलिना को उम्मीद है कि विधेयक सर्दियों तक पारित भी हो जाएगा. लेकिन इसमें कुछ समस्याएं आ सकती हैं. ख़ास कर यह देखते हुए कि उत्पादन में कटौती का सीधा असर रोज़गार पर पड़ेगा. इससे बेरोज़गारी बढ़ेगी, जिसके कारण समाज में असंतोष पैदा हो सकता है.

गठीले गाजर और कुबड़ी ककड़ी की वापसी

यूरोप में लगभग बीस साल बाद कई बदशक्ल सब्ज़ियों के दिन लौट आए हैं. यानी गठीले हो गए गाजर और कुबड़ी ककड़ी की ख़रीद-बिक्री आराम से हो सकेगी. तरबूजे का भाग्य पलट गया है. अब तरबूजे में हरा रंग और उसकी सूरत नहीं देखी जाएगी. लेकिन सेब और टमाटर समेत दस तरह के फल और सब्ज़ियों को अब भी सुंदरता की कसौटियों पर ही कसा जाएगा. दरअसल, पूरे यूरोप में किसानों को बीमा आदि की सुविधाएं हासिल हैं, इसलिए फल-सब्ज़ियों पर कठोर नियम चल जाते हैं.

ग़ौरतलब है कि पूरे यूरोप में यूरोपीय संघ के नियम-क़ानून समान रूप से लागू होते हैं. वहां व्यक्ति के लिए ही नहीं, फ़सलों तक के लिए नियम हैं. जैसे 10 सेंटीमीटर की ककड़ी सिर्फ़ 10 मिलिमीटर ही मुड़ सकती है. इससे अधिक मुड़ने पर उसे ख़रीदा-बेचा नहीं जा सकता. इसी तरह अगर गाजर में गांठ है, तो वह खाने लायक नहीं माना जाता था. ककड़ी के लिए तो सीधी और सुडौल होने की अजीब शर्त लागू थी. सीधी-सुडौल होने की शर्त सिर्फ़ ककड़ी के लिए थी. जबकि फलों और सब्ज़ियों के लिए वज़न, रंग, आकार सबके लिए अलग नियम लागू थे. जो इस कसौटी पर खरे नहीं उतरते, उन्हें बाज़ार से ही बाहर कर दिया जाता. ऐसे में किसानों के लिए सिरदर्दी बढ़ जाती थी. लाख जतन करने पर भी काफी मात्रा में फल और सब्ज़ियों के आकार-प्रकार में अंतर आ ही जाते थे. किसान इन नियमों में संशोधन की मांग लंबे समय कर रहे थे, लेकिन कहीं कोई सुनवाई नहीं हो रही थी. अब लगभग दो दशक के बाद यूरोपीय संघ ने इन नियमों में फेरबदल कर दिया है. इससे सब्ज़ियों और फलों की 26 क़िस्मे अपने प्राकृतिक रूप में ख़रीदी और बेची जा सकेंगी. वैसे यूरोपीय संघ के सदस्य देशों ने इन नियमों में संशोधन को नवंबर में ही मंज़ूरी दे दी थी. इस तरह फलों और सब्ज़ियों के बीच भेदभाव वाले नियम-क़ानूनों से भरी सौ पन्ने की किताब से कई अध्याय हमेशा के लिए ग़ायब हो गए हैं. कड़े नियम-क़ानूनों जिन फलों और सब्ज़ियों को राहत मिली है, उनमें बैंगन, गाजर, गोभी, चेरी, ककड़ी, लहसुन, पहाड़ी बादाम, फूलगोभी, हरे प्याज, प्याज, खरबूज, मटर, आलूबुख़ारा, पालक, वालनट, तरबूज भी हैं. इनके अलावा कुछ और यूरोपीय सब्ज़ियां और फल हैं जिन्हें भारत में नहीं पहचाना जाता है. बावजूद इसके, दस तरह के फल और सब्ज़ियों अब भी ऐसे हैं जिन पर पुराने नियम-क़ानून अभी लागू ही रहेंगे.

इन दुर्भाग्यशाली फलों और सब्ज़ियों में सेब, किवी, नींबू जाति के फल, आड़ू, स्ट्रॉबैरी, अंगूर और टमाटर शामिल हैं. यूरोप में टेढ़े या जुड़वां टमाटरों की कोई इज़्ज़त नहीं है. जबकि भारतीय घरों और बाज़ारों में इस पर कभी ग़ौर भी नहीं किया जाता. बहरहाल, यूरोप में फल और सब्ज़ियों के बड़े उत्पादक देश फ्रांस और स्पेन इन नियम-क़ायदों को हटाने के ख़िलाफ़ थे. इसी कारण मानकों के समर्थकों ने यह सुनिश्चित किया कि टमाटर, सेब और नींबू प्रजाती के फल पहले की तरह ही नियम-क़ायदे से चलते रहें.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

बैतुल्लाह महसूद के हाथ लंबे हैं

विदेशी एजेंसियों के निर्देशों पर बैतुल्लाह महसूद बलूचिस्तान लिबरेशन आर्मी (बीएलए) को ताक़तवर बना रहा है ताकि पाकिस्तान के सबसे बड़े प्रांत को अस्थिर किया जा सके. बलूचिस्तान का महत्व इसके रणनीतिक और भौगोलिक स्थान की वजह से बढ़ जाता है.

वह तारीख़ थी 18 जून 2004 की. रात के 10 बजे थे. तालिबान का सैन्य कमांडर नेक मोहम्मद दक्षिणी वज़ीरिस्तान के वाना में अपने साथियों के साथ खाना खा रहा था. उसी वक़्त वह फोन पर बात भी कर रहा था, तभी सेटेलाइट निर्देशित एक मिसाइल ने उसे और उसके आतंकी साथियों को उड़ा दिया था. चश्मदीद बताते हैं कि उससे कुछ मिनट पहले ही एक जासूसी ड्रोन को उसी घर के ऊपर उड़ते हुए देखा गया था. बैतुल्लाह महसूद तहरीक-ए-तालिबान, पाकिस्तान (टीटीपी) का प्रमुख है. उसके आतंकी दक्षिणी वज़ीरिस्तान में अधिक सक्रिय हैं और अमेरिका ने उसके बारे में सूचना देने या गिरफ़्तार करवाने के लिए 50 लाख डॉलर का ईनाम रखा है. वही बैतुल्लाह मीडिया से बेहिचक बात करता है. पाकिस्तानी अवाम अब तक कयास ही लगा रही है कि श्रीलंका क्रिकेट टीम पर हुए आतंकी हमले के पीछे कौन था? हालांकि इसी तरह की एक घटना इसी साल लाहौर के मनावा में 30 मार्च को भी हो चुकी थी. अगले दिन किसी अज्ञात स्थान से बैतुल्लाह ने फोन पर बीबीसी उर्दू डॉट कॉम से बात करते हुए उस हमले की ज़िम्मेदारी ली. उसने इसी तरह के हमले लाहौर के साथ पंजाब के दूसरे हिस्सों में भी करने की ज़िम्मेदारी ली. ठीक उसी दिन पाकिस्तान के गृहमंत्री रहमान मलिक ने इस आतंकी हमले का योजनाकार बैतुल्लाह को बताया. हालांकि लगे हाथों उन्होंने विदेशी हाथ होने की भी बात कर डाली.

हाल ही में, वॉयस ऑफ अमेरिका से मोबाइल पर बातचीत करते हुए बैतुल्लाह ने पाकिस्तान के कई शहरों में हुए हाल के धमाकों की ज़िम्मेदारी ली. इसमें पेशावर में हुए धमाके के साथ पर्ल कांटीनेंटल होटल, ऊपरी दिर, कोहाट, इस्लामाबाद, नौशेरा आदि जगहों पर हुए धमाकों की ज़िम्मेदारी भी महसूद ने ली. इसी तरह के धमाकों की संख्या हाल में बढ़ी ही है. इसकी शुरुआत लाहौर में 27 मई को हुई, जब एक गोले-बारूद से लदे सुजुकी वैन से 15 मंज़िला इमारत को उड़ा दिया गया था. उसके अगले दिन यानी 28 मई को टीटीपी ने इस धमाके की ज़िम्मेदारी ली और इसका असली लक्ष्य आईएसआई की इमारत को बताया. एक ओर हमारे अधिकतर उच्चाधिकारी किसी भी बाहरी तत्व जैसे भारत की ख़ुफ़िया एजेंसी रॉ या किसी अन्य का नाम लेने से बच रहे थे, क्योंकि पाकिस्तान बुरी तरह से अमेरिकी मदद पर आश्रित है. दूसरी ओर, पंजाब के क़ानून मंत्री राणा सनाउल्लाह ने उसी दिन कहा कि इस आतंकी हमले में भारतीय हाथ होने से इंकार नहीं किया जा सकता. ग़ौर करने वाली बात है कि इसी साल 14 अप्रैल को केंद्रीय विज्ञान व तकनीकी मंत्री आज़म खान स्वाति ने खुले तौर पर कहा कि अमेरिका ही पाकिस्तान का शत्रु है और इस इलाक़े में भारत को सबसे बड़ी ताक़त बनाना चाहता है. इसी बीच पाकिस्तान के सैन्य बलों ने पश्चिम को तब चौंका दिया, जब उन्होंने कामयाबी से बुनेर से तालिबानी आतंकियों को निकालने का ऑपरेशन अंजाम दिया. इसी तरह दिर और स्वात में भी तालिबान की मज़बूत पकड़ को कमज़ोर करते हुए इसके कई हिस्सों पर क़ब्ज़ा कर लिया. सैन्य अभियान के अगले चरण में हमारी सेनाएं दक्षिणी वज़ीरिस्तान की ओर बढ़ रही हैं और बैतुल्लाह के गुप्त ठिकानों को तबाह कर रही हैं. मज़बूत जनसमर्थन के अलावा राजनीतिक और धार्मिक नेताओं ने भी इस सैन्य अभियान को सैद्धांतिक तौर पर मंज़ूरी दी है. इससे यह भी पता चला कि हमारी अधिकांश जनता तालिबानी स्टाइल के शरिया को नहीं चाहती, जो कई सारे अपराधों जैसे, आत्मघाती हमले, अपहरण और सिर काटने पर आधारित है. हालांकि ये सैन्य ऑपरेशन भारतीयों, अमेरिकियों और इज़राइलों की आंख की किरकिरी भी बन गए हैं, क्योंकि ये देश पाकिस्तान के साथ दोहरा खेल खेल रहे हैं. एक तरफ तो वाशिंगटन और नई दिल्ली इस्लामाबाद पर दबाव डाल रहे हैं कि अतिवादियों के ख़िलाफ़ अभियान पर्याप्त नहीं है, तो दूसरी तरफ़ वे पाकिस्तान के पंजाब, सीमांत प्रांत और बलूचिस्तान में बैतुल्लाह महसूद का इस्तेमाल विनाशकारी धमाकों के लिए कर रहे हैं. अपने शैतान मालिकों के पापकर्म को पूरा करने के लिए महसूद अफगानिस्तान से निर्देश पाता है, जहां पाकिस्तान विरोधी कहानी का प्लॉट सीआईए और मोसाद की मदद से रचा जा रहा है. विदेशी एजेंसियों के निर्देशों पर बैतुल्लाह महसूद बलूचिस्तान लिबरेशन आर्मी (बीएलए) को ताक़तवर बना रहा है ताकि पाकिस्तान के सबसे बड़े प्रांत को अस्थिर किया जा सके. बलूचिस्तान का महत्व इसके रणनीतिक और भौगोलिक स्थान की वजह से बढ़ जाता है. इसके अलावा बैतुल्लाह के अलगाववादी समूह जुंदोल्लाह (खुदा के लड़ाके) से भी संबंध हैं, जो पाकिस्तान के चीन और ईरान के साथ अच्छे संबंधों के ख़िलाफ़ भी काम कर रहा है. पिछले कुछ वर्षों में पाकिस्तान-विरोधी तत्वों की मदद से उसने पाकिस्तान में कई चीनी और ईरानी नागरिकों का अपहरण और हत्या कर दी है. पाकिस्तान के शीर्ष धार्मिक विद्वान अल्लामा डॉक्टर सरफराज़ नईमी अल-अज़हरी ने ख़ुले तौर पर आत्मघाती हमलों को इस्लाम के ख़िलाफ़ बताकर तालिबान को ग़ैर-इस्लामी ठहराया. इसके बाद 12 जून को लाहौर में उनकी भी आत्मघाती हमले में हत्या कर दी गई. बैतुल्लाह ने इसकी भी ज़िम्मेदारी ली. इसी तरह, जब क़ारी ज़ैनुद्दीन-जो बैतुल्लाह का प्रतिद्वंद्वी कमांडर है-ने भी घोषित किया कि इस्लाम के तहत आत्मघाती हमलों की छूट नहीं है, तो कुछ ही दिनों के अंदर उसको भी शहीद कर दिया गया. एक बार फिर बैतुल्लाह ने ज़िम्मेदारी ली. हत्या के पहले हालांकि क़ारी ज़ैनुद्दीन ने बैतुल्लाह महसूद का असली चेहरा दुनिया को दिखा दिया था. पाकिस्तान के निजी चैनल के इंटरव्यू में उन्होंने कहा कि बैतुल्लाह और उसके सशस्त्र लोग इस्लाम विरोधी काम कर रहे हैं और उसके भारत और इज़राइल के साथ गुप्त संबंध हैं. क़ारी ने कहा कि अगर आतंक का ख़ात्मा अभी नहीं किया गया तो वह अवाम और सरकार के लिए ढेर सारी समस्याएं खड़ी करेगा. ज़ैनुद्दीन ने यह भी स्वीकार किया कि उसका समूह बैतुल्लाह के साथ ही काम कर रहा था, लेकिन बैतुल्लाह की पाकिस्तान में विनाश करने की योजना की वजह से उनमें मतभेद हो गए. उसने कहा कि सच पूछिए तो तालिबान का गठन अफ़ग़ानिस्तान में विदेशी ताक़तों का मुक़ाबला करने के लिए किया गया था, लेकिन बैतुल्लाह ने इसका रुख़ पाकिस्तान की ओर मोड़ दिया. क़ारी ने यह भी कहा था कि अगर पाक सेना बैतुल्लाह के इन आतंकियों के ख़िलाफ़ अभियान चलाएगी तो उसके लोग भी उसका साथ देंगे. ज़ैनुद्दीन ने कहा कि हम उलेमा और इलाके के बड़ों के साथ खड़े रहेंगे. यह भी ग़ौर करनेवाली बात है कि लगभग एक साल पहल अफ़ग़ान तालिबान के सर्वोच्च नेता मुल्ला मुहम्मद ओमर ने टीटीपी से ख़ुद को अलग बताते हुए बयान जारी किया था. ओमर ने बैतुल्लाह की कड़े शब्दों में निंदा भी की, क्योंकि बैतुल्लाह अमेरिकी नेतृत्व वाली नाटो सेना से लड़ने के बजाय पाक सेना से लड़ रहा है.

पाकिस्तान के एक निजी चैनल से ही बातचीत में दूसरे आतंकी कमांडर हाजी तुर्किस्तान ने खुलासा किया कि वह बैतुल्लाह के साथ था, जब उसने कहा था कि बेनज़ीर भुट्टो की हत्या के लिए उसने दो को रावलपिंडी भेजा है. अहम बात यह कि पाकिस्तान के अधिकतर राजनीतिक विशेषज्ञ बेनज़ीर की हत्या को पाक के ख़िलाफ़ अंतरराष्ट्रीय षड्यंत्र बताते हैं. हाजी ने यह भी बताया कि बैतुल्लाह निर्दोष युवाओं को ग़लत राह पर ले भी जा रहा है. वह उन्हें भड़का रहा है ताकि वे मस्ज़िदों और शिक्षण संस्थानों पर हमला कर उन्हें भी नुक़सान पहुंचा सकें. तुर्किस्तान ने तो यहां तक बताया कि बैतुल्लाह महसूद एक अमेरिकी एजेंट है और यही कारण है कि अमेरिकी ड्रोन उसे निशाना नहीं बना रहे हैं. रिपोर्ट बताती है कि बैतुल्लाह महसूद डॉलरों में लोट रहा है और उसके पास अत्याधुनिक हथियार और संचार के साधन हैं. कई बार अमेरिकी कमांडरों को उसके बिल्कुल सही ठिकाने की जानकारी पाकिस्तान की ख़ुफ़िया एजेंसियों ने दी है, लेकिन सीआईए के चलाए ड्रोन उसे नुक़सान नहीं पहुंचा पा रहे, क्योंकि वही पाकिस्तान का असली दुश्मन है, जिसने इस मुल्क में लगभग हरेक आत्मघाती हमले को मास्टरमाइंड किया. सच पूछिए, तो बैतुल्लाह बाहरी मुल्कों का एजेंट है. दोहरा खेल खेलते हुए बैतुल्लाह का असली मकसद तो पाकिस्तान को अस्थिर करना है. इसी वजह से तालिबानी नेता नेक मुहम्मद तो फोन पर बात करते हुए मिसाइल के हमले में मारा जाता है, लेकिन महसूद अपने फोन का इस्तेमाल बेख़ौफ कर रहा है. यहां यह बता दें कि हाल ही ने 10 से अधिक राजनीतिक कार्यकर्ताओं की हत्या अलग घटनाओं में कर दी गई. इसके पीछे का मुख्य ध्येय यहां नागरिकों के बीच युद्ध कराना है. इसी बीच सिंध की सीआईडी पुलिस ने एक अल-क़ायदा के आतंकी को स्युसाइड जैकेट और हथियारों के साथ गिरफ़्तार किया. आख़िरकार यही कहा जा सकता है कि बैतुल्लाह महसूद के बाहरी ताक़तों के साथ संबंधों का खुलासा हो चुका है. इसी वजह से वह अपने विदेशी आकाओं की मदद से ख़ुद को छिपाने में कामयाब हो गया है, वरना या तो वह अफ़ग़ानी तालिबान के मुल्ला ओमर के नेतृत्व वाले समूह या क़ारी ज़ैनुद्दीन के समर्थकों द्वारा क़त्ल कर दिया गया होता. इसी संदर्भ में संभावना तो इस बात की भी है कि कोई विदेशी ख़ुफ़िया एजेंसी बैतुल्लाह का क़त्ल कर दे, क्योंकि उसके पास बाहरी ताक़तों के भी राज़ हैं.

पाकिस्तान से एस. शौकत

feedback.chauthiduniya@gmail.com

फिलिस्तीन का संघर्ष और ओबामा

अरब-इज़राइल संघर्ष का इतिहास आज का नहीं है. इसकी शुरुआत तो 1917 ईस्वी में ही हो गई थी. इसी साल ब्रिटेन के तत्कालीन विदेश सचिव ए जे बालफोर ने ब्रिटिश-जियोनिस्ट फेडरेशन के अध्यक्ष लॉर्ड रॉटशिल्ड को चिट्ठी लिखी थी. इस चिट्ठी में उन्होंने कहा था कि महारानी की सरकार फिलिस्तीन में यहूदियों के लिए एक अलग राज्य बनाने का समर्थन करती है और इसके लिए हर संभव कोशिश करेगी. हालांकि, इस पत्र में यह साफ कर दिया गया था कि यह बिल्कुल ज़ाहिर तौर पर समझ लिया जाए कि ऐसा कुछ भी नहीं किया जाएगा, जो फिलिस्तीन में उस समय रह रहे ग़ैर-यहूदी समुदायों के नागरिक और धार्मिक अधिकारों पर किसी किस्म का अतिक्रमण करे. यह पत्र इसके लेखक के नाम पर बालफोर घोषणा के नाम से जाना जाता है. बाद में यहूदियों ने 1919 में पेरिस शांति समझौते में एक प्रस्ताव पेश किया ताकि फिलिस्तीन के ऊपर अधिकार तय हो सके. इसके बाद फिलिस्तीन के भविष्य का फ़ैसला करने के लिए एक आयोग का गठन किया गया. आयोग ने यह अनुशंसा की कि फिलिस्तीनी जनता के ऊपर यहूदियों द्वारा अपने अधिकार की बात करना अतार्किक है और इसे गंभीरता से लेने की ज़रूरत नहीं है. यह रिपोर्ट कभी भी सार्वजनिक नहीं की गई. 25 अप्रैल 1920 को मित्र राष्ट्रों ने फिलिस्तीन ब्रिटिश सरकार को सौंप दिया. ब्रिटिश सरकार ने वहां एक यहूदी, सर हर्बर्ट सैमुएल को वहां अपना पहला उच्चायुक्त तैनात किया. उसके बाद ही सर सैमुएल ने भूमि-हस्तांतरण नीति (लैंड ट्रांसफर पॉलिसी) पर हस्ताक्षर किए. इसके बाद यहूदियों ने अपने लिए ज़मीन ख़रीदनी शुरू की और यहूदियों का प्रवास शुरू हुआ. समय के साथ-साथ यहूदियों की तादाद भी बढ़ती गई. फिलिस्तीनियों ने इसका विरोध किया और इस समस्या को सुलझाने के लिए कई आयोगों का गठन किया गया. पील आयोग ने 1939 में यह सुझाव दिया कि ब्रिटिश सरकार को दिया गया अधिकार वापस ले लिया जाए और फिलिस्तीन को यहूदियों और अरबों के बीच बांट दिया जाए. इस प्रस्ताव को अरब नेताओं ने ख़ारिज कर दिया.

14 मई 1948 को यहूदियों ने एकतरफा तौर पर इज़राइल की स्थापना की घोषणा कर दी. तीन दिनों के भीतर ही दो बड़ी ताक़तों अमेरिका और सोवियत संघ ने नवजात और ग़ैर-क़ानूनी यहूदी राज्य को मान्यता दे दी. उसके बाद से ही अरबों ने तीन बड़ी लड़ाइयां लड़ीं, ताकि उनकी ज़मीन से यहूदियों को खदेड़ा जा सके. हर बार अरबों ने मात खाई और ज़्यादा ज़मीन गंवाई.

इतिहास तो ख़ैर दोनों समुदायों के शांतिपूर्ण ढंग से एक साथ रहने की गवाही नहीं देता. हरेक कल्पनीय विचार आज़मा लिया गया है. चाहे, 1947 में बंटवारे की योजना हो, बेर्नाडोट योजना हो, फहाद योजना हो या फिर हालिया अरब पीस इनिशिएटिव हो, जिसकी शुरुआत किंग अब्दुल्ला ने की. ये सारे विचार आजमाए गए और फिर बेकार हो गए. वजह एक के बाद एक इज़राइली हुकूमतों की ज़िद. अमेरिकी राष्ट्रपति हैरी ट्रूमैन से लेकर उनके बाद के किसी राष्ट्रपति ने इस विवाद को गंभीरता से सुलझाने की कोशिश की.

ओबामा के राष्ट्रपति बनने के बाद इस विवाद के सुलटने की संभावना उभरी है. अपने पूर्ववर्ती राष्ट्रपतियों के उलट ओबामा इज़राइल का समर्थन कम करते हैं. वह बस्तियों (सेटलमेंट) के मसले पर इज़राइल के साथ कड़ा रुख़ अपनाने की कोशिश कर रहे हैं और इज़राइल और फिलिस्तीन के बीच कोई बीच का रास्ता अपनाना चाह रहे हैं. उन्होंने अपना दूत सीनेटर जॉर्ज मिशेल को बनाकर मध्यपूर्व में शांति-प्रक्रिया की नई शुरुआत करने के संकेत दिए हैं. जॉर्ज मिशेल काफी गंभीरता से इस विवाद का सही हल निकालने की कोशिश में जुटे हैं. राष्ट्रपति ओबामा ने महसूस कर लिया है कि अरब राज्यों और इज़राइल के बीच शांति बेहद ज़रूरी है, अगर उनको मध्यपूर्व की मकड़जाल जैसी राजनीति को सुलझाना है, तो.

सच तो यही है कि अब अमेरिकियों के पास इसके अलावा कोई चारा नहीं बचा है कि वे एक ऐसा समाधान निकालें, जिसको मुस्लिम जगत में समर्थन प्राप्त हो. यह समस्या एक ऐसा लेंस है, जिसकी मार्फत मुस्लिम दुनिया अमेरिका की वैश्विक भूमिका का मूल्यांकन करेगा. अपनी सरकार के गठन के बाद नेतन्याहू ने फिलिस्तिनीयों के साथ एक स्थायी संधि का वचन दिया है. उन्होंने यह भी कहा कि वह शांति की दिशा में ही काम करेंगे. उन्होंने यह भी कहा कि वह फिलिस्तीन पर क़ब्ज़ा नहीं चाहते. नेतन्याहू के मुताबिक फिलिस्तीनियों को स्वशासन का अधिकार रहेगा. अपवाद केवल वही होंगे, जो इज़राइल की सुरक्षा के लिए ख़तरा हैं. ठीक इसी समय, नेतन्याहू ग़ैर-क़ानूनी बस्तियों (सेटलमेंट) को बढ़ाने की इज़राइली नीति को भी आगे बढ़ा रहे हैं.

यह उम्मीद की जा रही है कि राष्ट्रपति ओबामा गंभीर तौर पर इस दीर्घकालीन समस्या को सुलझाने की कोशिश करेंगे और इज़राइली सरकार पर दबाव बनाएंगे. यह पहली बार है कि अमेरिका और इज़राइल के कूटनीतिक एजेंडे अलग हैं. कुछ हद तक एक-दूसरे के विरोधी भी. अमेरिका अब मानता है कि फिलिस्तीन विवाद का शांतिपूर्ण समझौता ईरान के मसले को सुलझाने के लिए बेहद ज़रूरी है.

शांति समझौते के लिए बेहतरीन तरीक़ा है कि 2002 के अरब शांति समझौते के अनुसार काम किया जाए, जहां 22 अरब राज्य इज़राइल के साथ एक समझौता करेंगे, जिससे इसकी राजनयिक पहचान को नए आयाम मिलेंगे. शर्त इतनी सी है कि इज़राइल उन अरब इलाकों को खाली करेगा, जो उसने 1967 में कब्ज़ाए थे. इससे 1948 के बाद उनके पास वेस्ट बैंक और गाजा में बची हुई ज़मीन से फिलिस्तीनियों को अपना स्वतंत्र और संप्रभु राज्य बना सकने की आज़ादी भी मिलेगी.

ओबामा इज़राइल के साथ अपने संबंधों की दिशा बदलने को तैयार दिखते हैं. वह अरब देशों के साथ अपने संबंध सुधारने पर ध्यान दे रहे हैं. अबु बेन ने अपने एक लेख में लिखा है कि अमेरिकन अधिकारियों ने डेमोक्रेटिक कांग्रेसियों को बता दिया है कि इज़राइल के साथ शांति प्रक्रिया में असहमति भी हो सकती है.

आर. असग़र

feedback.chauthiduniya@gmail.com

अध्यात्म को औज़ार बना जनकल्याण करते भय्यू जी महाराज

रूबी अरुण

मूलत: महाराष्ट्र के अकोला का, पर इंदौर में रहने वाला उदय सिंह देशमुख नाम का एक छोटा-सा बच्चा. जो सुबह-सुबह अपने आंगन में चींटियों की कतार देख ख़ुशी से झूम जाता है. चींटियों का लयबद्ध तरीक़े से चलना, बग़ैर भटके अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर रहना उसके दिलोदिमाग़ पर जादू-सा कर जाता है. वह रोज़ अपनी मां के साथ मिल कर उन्हें सत्तू खिलाता है. वह नहीं जानता कि यह प्रयोजन उसकी मां क्यों करती है. लेकिन उसे इस कृत्य से आत्मिक शांति ज़रूर महसूस होती है. वह चींटियों के पेट भरने के सुखद अहसास से पुलकित हो जाता है. लेकिन अपने इर्द-गिर्द के अराजक माहौल से उसका मन विचलित होने लगता है.

भूखे-ग़रीब लोगों की पीड़ा उसे अंदर से व्यथित कर देती है. उसके मन में एक कसमसाहट-सी उभरती है. काश, वह चींटियों की तरह ही उनके पेट भरने का भी जतन कर पाता. वक़्त के साथ उस बच्चे की हसरतें पर फैलाने लगती हैं. वह खुली आंखों से हसीन सपने बुनने लगता है. वह अपने सपनों को हक़ीक़त का जामा पहनाने में जुट जाता है. देवदूत सरीखा वह मासूम बच्चा अब तक युवावस्था की ओर अग्रसर हो चुका रहता है. आसमान को ज़मीन पर उतार लाने का प्रण कर वह मानव और राष्ट्र कल्याण के बड़े ही पाक़ीज़ा इरादों के साथ एक बेहद कठिन और मुश्किल भरे रास्ते पर क़दम रख देता है. शुरुआत में तो उसे सब कुछ धुंधला-सा दिखता है.

अंधेरे रास्ते, गुमसुम गलियां, स्याह दुनिया, स्वार्थ और मानवता पर हावी भौतिकवाद से उसका सामना होता है. लेकिन उसके क़दम डगमगाते नहीं. राह में आए झंझावात उसके हौसलों को तोड़ नहीं पाते. न ही दुश्वारियां उसे रोक पाती हैं. चेहरे पर निश्छल मुस्कुराहट लिए वह अपने मक़सद में न सिर्फ़ कामयाब होता है, बल्कि दुनिया के लिए निस्वार्थ प्रेम, राष्ट्र भक्ति और अदम्य इच्छाशक्ति की मिसाल बन जाता है. लोग उसे मसीहा मानने लगते हैं. संतों की तरह पूजने लगते हैं. उसे गुरु जी और महाराज की उपाधियों से विभूषित करते हैं. उसे भय्यू जी महाराज कहा जाने लगता है. पर ये तमाम सम्मान और अलंकरण भी उदय सिंह देशमुख को अपने पथ से विमुख नहीं कर पाते. मानवता और राष्ट्र सेवा का उनका कारवां सतत जारी रहता है.

चींटियों के करतबों से अदम्य इच्छाशक्ति और बिना डिगे अपने लक्ष्य को हासिल करने की प्रेरणा ले कर भय्यू जी महाराज ने दबे, कुचले और बेहद पिछड़े समाज के लोगों के लिए वह कर दिखाया है जो सरकार करोड़ों-अरबों ख़र्च कर अपनी बड़ी-बड़ी परियोजनाओं के ज़रिए भी नहीं कर सकी है.

बिना किसी तामझाम, बाहरी दिखावे के भय्यू जी के साथी-सेवक लोगों की सेवा में आदरभाव के साथ लीन रहते हैं. पाखंड के पैमाने से कोसों दूर सादगी, विनम्रता और अगाध स्नेह की प्रतिमूर्ति भय्यू जी की सुबह-शाम बस मानवता और देश की सेवा में ही व्यतीत होते हैं. समाज के आख़िरी व्यक्ति के आत्मसम्मान की भी परवाह रखने वाले भय्यूजी की हमेशा यही कोशिश होती है कि पूरे देश को एक सूत्र में पिरोने का हरसंभव जतन किया जाए. उनका मानना है कि इंसान अगर इंसान की क़द्र करने लगे, एक-दूसरे के सुख-दुख में शरीक हो, भावनाओं को समझे, तो देश की आधी समस्या चुटकियों में हल हो जाएगी.

इंदौर के पंडित दीन दयाल उपाध्यायनगर, सुखलिया में स्थित सर्वोदय आश्रम मील का वह पत्थर है जिसे भय्यू जी महाराज ने बड़ी ही मशक़्क़तों से उकेरा है, जो उनके ख्वाबों की ताबीर है. और, जो लाखों दीन-दुखियाओं का सहारा है. आश्रम में प्रवेश करते ही अद्‌भुत आध्यात्मिक अनुभूति होती है. देश के दूरदराज़ से आए भक्तों का समूह उम्मीदों से सराबोर दिखता है. लंबोदर की विशाल प्रतिमा आशीष देती-सी लगती है. मां सरस्वती, दुर्गा और भगवान शिव की अभयदान देती मुद्रा की प्रतिमाएं एक अलग लोक का निर्माण करती हैं. भय्यू जी में अगाध श्रद्धा रखने वाले ये लोग भय्यू जी को ईश्वर की विशेष संतान मानते हैं. हालांकि भय्यू जी ख़ुद इन बातों से इत्तफाक़ नहीं रखते. वह कहते हैं कि,

तेरी माटी से जन्मा, तुझमें ही समाऊंगा
जब-जब जन्म लूंगा मां, तुझ पर ही वारा जाऊंगा.

भय्यू जी कहते हैं कि हर नर में नारायण होते हैं. उन्हें महसूस करने की ज़रूरत है. मैंने ज्ञान, भक्ति और योग रूपी त्रिसूत्रीय सिद्धांतों पर मानवीय संवेदना जगाने का संकल्प लिया है. और, उन्हीं को ध्यान में रख कर राष्ट्र और समाज का अध्ययन कर कई व्यापक और परिणामकारी योजनाएं बनाईं. मैंने इन योजनाओं की सफलता के लिए ख़ुद को पूरी परह समर्पित कर दिया. व्यक्ति विकास, पर्यावरण विकास और शिक्षा विकास मेरे लिए सबसे अहम रहे.

> **भय्यू जी कहते हैं कि हर नर में नारायण होते हैं. उन्हें महसूस करने की ज़रूरत है. मैंने ज्ञान, भक्ति और योग रूपी त्रिसूत्रीय सिद्धांतों पर मानवीय संवेदना जगाने का संकल्प लिया है. और, उन्हीं को ध्यान में रख कर राष्ट्र और समाज का अध्ययन कर कई व्यापक और परिणामकारी योजनाएं बनाईं. मैंने इन योजनाओं की सफलता के लिए ख़ुद को पूरी परह समर्पित कर दिया. व्यक्ति विकास, पर्यावरण विकास और शिक्षा विकास मेरे लिए सबसे अहम रहे.**

दूसरों के दुख से द्रवित हो जाने वाले भय्यू जी महाराज का हमेशा एक मंत्र रहा-

स्वयं पीड़ा से जो दुखी, वह मानव कहलाए
परपीड़ा से जो दुखी, वह सद्‌गुरु कहलाए.

भय्यू जी ने अपना कोई शिष्य नहीं बनाया है. वह इस परंपरा के एकदम ख़िलाफ़ हैं. उनका मिशन है-ज़्यादा से ज़्यादा युवकों को जागरूक करना और उन्हें अपने अभियान से जोड़ना. ताकि देश से अशिक्षा, ग़रीबी और आतंकवाद का समूल नाश हो सके. सबसे ज़्यादा जो बात भय्यू जी को विचलित करती है, वह है कन्या भ्रूण हत्या. भय्यू जी कहते हैं कि जिस मां की कोख से आप जन्म लेते हैं, उसे आप कैसे मार सकते हैं. एक लड़की जो जननी है, जिससे सारे रिश्ते पैदा होते हैं, ख़ूबसूरत बनते हैं, उसकी हत्या कैसे की जा सकती है? भय्यू जी की एक बेहद प्यारी-सी बिटिया है-कुहू. वह कहते हैं कि मैंने दूसरी संतान इसलिए नहीं होने दी, क्योंकि मैं नहीं चाहता था कि मुझे बेटा हो. मेरी बेटी ही मेरे लिए सब कुछ है. मैं दुनिया को भी यही संदेश देना चाहता हूं. आज रिश्ते-नातों का महत्व ख़त्म हो चुका है. उनकी ख़ुशबू ख़त्म हो चुकी है. मानवीय संवेदना निराकार हो चुकी है. इसलिए ही समाज में अपराध का बोलबाला हो गया है. जिस दिन रिश्तों की ख़ूबसूरती लौट आएगी, समस्याएं अपने आप ख़त्म होने लगेंगी. भय्यू जी कहते हैं कि अंधेरे को कोसने के बजाय एक दिया जलाने की तो कोशिश करो, अंधेरा ख़ुद ब ख़ुद ख़त्म हो जाएगा. क्योंकि मनुष्य ही सत्य है और अगर मैं सत्य हूं तो मुझे कौन रोक सकता है ? अगर मैं ज्ञान हूं तो मेरी सीमा कौन बांध सकता है? और अगर मैं परमानंद हूं तो फिर मुझे परमानंद तक पहुंचने से कौन रोक सकता है? भोपाल से आए विशाल कहते हैं कि भय्यू जी तो साक्षात आनंद और प्रसन्नता की मूर्ति हैं. मेरी श्रद्धा तो उनमें पहले से ही थी, पर उनसे मिलने के बाद तो मैं उन्हें परमेश्वर सरीखा मानने लगा हूं. अकोला, महाराष्ट्र से आई सुरेखा बोरकर तो भय्यू जी से मिल कर निहाल हुई जा रही हैं. कहती हैं गुरु जी के दर्शन कर मुझे जो परमानंद की प्राप्ति हुई है उसे व्यक्त करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं.

मुंबई से आए महेंद्र चाटे कहते हैं कि वह हर आदमी भगवान होता है जिसके विचार अच्छे होते हैं, लेकिन अच्छे विचारों के साथ आचरण भी ज़रूरी होता है और यह प्रक्रिया निरंतर होनी चाहिए. ये सारी बातें मुझे गुरु जी में नज़र आती हैं. इसलिए वह सामान्य इंसान से ऊपर हैं. गुरु जी अपने अनुयायियों की भावनाओं की क़द्र तो करते हैं, पर ख़ुद को सामान्य इंसान ही मानते हैं. उन्होंने बग़ैर किसी साधन के शुरू किए अपने अभियान को जिस ऊंचे मुक़ाम तक पहुंचाया है, वह यक़ीनन अद्‌भुत है.

भय्यू जी ने अपने व्यापक दृष्टिकोण और मज़बूत मार्गदर्शन से विदर्भ के उन किसानों के लिए संजीवनी बन गए जो कर्ज़ और ग़रीबी के कारण आत्महत्या कर रहे थे. उन्होंने धरतीपुत्र सेवा अभियान और भूमि सुधार अभियान चलाया. अनाथ किसान पुत्रों को गोद लेकर उनकी परवरिश और शिक्षा-दीक्षा का पूरा ज़िम्मा लिया. उनकी ओर से जेल में क़ैदियों के लिए वाचनालय व कंप्यूटर प्रशिक्षण केंद्र, जीजामाता पूजन अभियान, संविधान जागरण अभियान, टेंकर फ्री व्हीलेज, एंटी पावर्टी मिशन, कन्या भ्रूण हत्या, एनर्जी पार्क, अन्नक्षेत्र, स्वस्थ आर्य कुपोषण उन्मूलन, चिकित्सा शिविर, तीर्थ क्षेत्र स्वच्छता अभियान, एंबुलेंस आदि लाभदायी परियोजनाएं शुरू हैं.

समाज में शैक्षणिक विकास की दृष्टि से सूर्योदय छात्रवृत्ति, उच्च शिक्षा सेवा, संस्कार क्रीड़ा व कला प्रबोधिनी, ज्ञानदीप गुरुकुल, इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर, वंदेमातरम नेशनल फाउंडेशन, विश्वनाथ शांति शोध व प्रसार केंद्र, महासिद्धपीठ ऋषि संकुल, कन्यादान योजना, सूर्योदय पारधी समाज, आदिवासी आश्रमशाला, एच.आई.वी. ग्रस्त बच्चों के लिए आवासीय पाठशाला, बंदियों का पुनर्वसन, बंदियों के बच्चों की आवासीय पाठशाला, बलीराजा ज्ञान प्रबोधन केंद्र, आयुर्वेदिक औषधि परियोजना, आरोग्य केंद्र, इंद्राक्ष, राष्ट्रचेतना पर्यावरण महायज्ञ, किसान बीज वितरण योजना इत्यादि परियोजनाएं भी सफलता-पूर्वक चल रही हैं.

विचार और आचारों के आधार पर नव समाज निर्माण में संतनगरी, नि:सर्ग साधना निकेतन, समाधि स्थान, मंदिर-मस्ज़िद जीर्णोद्धार, सर्व धर्म समभाव कार्यक्रम, बेरोज़गारों के लिए रोज़गार की उपलब्धता आदि परियोजनाएं भी निरंतर जारी हैं. निरंतर चलती हुई रोज़गार की उपलब्धता आदि परियोजनाओं को काफी सफलता भी मिल रही है. जनकल्याणकारी परियोजनाओं के माध्यम से निरंतर कार्यरत सद्‌गुरु की अमिट छवि राष्ट्र और समाज में स्पष्ट तौर पर उभर कर सामने आई है.

ruby.chauthiduniya@gmail.com

> **इंदौर के पंडित दीन दयाल उपाध्यायनगर, सुखलिया में स्थित सर्वोदय आश्रम मील का वह पत्थर है जिसे भय्यू जी महाराज ने बड़ी ही मशक़्क़तों से उकेरा है, जो उनके ख्वाबों की ताबीर है. और, जो लाखों दीन-दुखियाओं का सहारा है. आश्रम में प्रवेश करते ही अद्‌भुत आध्यात्मिक अनुभूति होती है. देश के दूरदराज़ से आए भक्तों का समूह उम्मीदों से सराबोर दिखता है. लंबोदर की विशाल प्रतिमा आशीष देती-सी लगती है. मां सरस्वती, दुर्गा और भगवान शिव की अभयदान देती मुद्रा की प्रतिमाएं एक अलग लोक का निर्माण करती हैं.**

दुनिया

मटीरियल मैनेजमेंट में करियर

जनसंख्या की बढ़ती दर के हिसाब से बहुमूल्य वस्तुओं के अभाव से मटीरियल मैनेजमेंट इन दिनों तेज़ी से बढ़ता हुआ आशाजनक करियर विकल्प है. चूंकि विश्व भर में चल रही आर्थिक मंदी से भारत भी प्रभावित हुआ है. इसलिए घरेलू कंपनियों में इस समय सबसे अधिक मांग मटीरियल मैनेजर्स की है. इस वजह से जॉब की असीम संभावनाओं के साथ यह एक बेहतरीन करियर के रूप में उभर रहा है और अच्छे वेतन की वजह से यह क्षेत्र युवाओं को आकर्षित भी ख़ूब कर रहा है. दिल्ली विश्वविद्यालय के अंतर्गत आनेवाले फैकल्टी ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज में ऑपरेशंस व सप्लाई मैनेजमेंट विभाग के रीडर डॉ. देवद्युति दास बताते हैं कि इस कोर्स में एजेंसियों व कंपनियों के लिए ख़रीद का काम, सरप्लस प्रॉपर्टी और उसके अधिग्रहण, ठेका, खरीददारी, भंडारण, रख-रखाव व सेवाओं की व्यवस्था करनी पड़ती है. इसके साथ ही कंपनी में अवतरण विश्लेषण व भौतिक अभिलेख का कार्य भी करना पड़ता है. किसी प्रकार की चूक के बिना कंपनी की वास्तविक ज़रूरत के हिसाब से सप्लाई के स्तर को उच्चतम होना चाहिए. इसी वजह से मटीरियल मैनेजर का विश्लेषनात्मक नज़रिया होना चाहिए. हर वक़्त यह ध्यान रखना होता है कि कंपनी की मूल मटीरियल मैनेजमेंट व सप्लाई चेन का काम किसी भी उद्योग की संपूर्ण सफलता में अपना महत्व-पूर्ण योगदान देता है. इस कोर्स में बेहतर परिणाम पाने के लिए विद्यार्थी को मूलत: कंप्यूटर की व्यापक जानकारी होना अनिवार्य है. इसके अलावा परिमाण तकनीक, माणक परिमाण और लागत, उत्पाद कार्यकलाप और अनुसंधान की जानकारी हो तो सोने पर सुहागा ही कहा जाएगा. साथ ही मटीरियल मैनेजर का संपर्क दफ़्तर के दूसरे विभाग और सप्लाई करने वाली कंपनियों के साथ मधुर होना चाहिए, ताकि किसी भी वक़्त, कैसी भी स्थिति में बिना किसी अवरोध के कार्य संपन्न हो सके.

इस विभाग में कई ब्रांच होते हैं-

1. डवलपिंग मटीरियल मैनेजमेंट सिस्टम
2. ऑप्टिमल लॉजिस्टीक्स एंड ट्रांसपोटेशन स्ट्रेटजीज
3. इंटीग्रेटेड इंवेन्ट्री मैनेजमेंट सिस्टम
4. प्रॉपर्टी डिस्पोजिसन
5. स्क्रैप डिसपोजल

इस कोर्स को करने से कई लाभ मिलते हैं. जैसे, यह वक़्त की बचत और लागत को कम करता है. इसके अलावा मैनेजमेंट की जानकारी प्रदान करता है. चीज़ों को संभाल कर रखने की क्षमता बढ़ाता है. सबसे आख़िरी और महत्वपूर्ण यह कि इससे पैसों की काफी बचत होती है.

कोर्स विन्यास- मटीरियल मैनेजमेंट विशेष तरह का करियर मैनेजमेंट प्रोग्राम है. इसकी शिक्षा देश के कई संस्थानों में दी जाती है. इस कोर्स में प्रवेश के लिए किसी भी विषय से स्नातक की डिग्री होना आवश्यक है. हालांकि कुछ संस्थानों में इस कोर्स में प्रवेश पाने की योग्यता इंजीनियरिंग है. इस कोर्स की तकनीकी संरचना को दखते हुए वे केवल इंजीनियरिंग के छात्रों को ही प्रवेश देते हैं.

संस्थान- इस कोर्स के लिए देश में ऐसे कई संस्थान हैं, जो एमबीए के अन्य कार्यक्रम जैसे फाइनेंस, मार्केटिंग इत्यादि के साथ ही एक शाखा के तौर पर इसे पढ़ाते हैं. जबकि इंस्टीट्यूट ऑफ मटीरियल मैनेजमेंट में यह अलग से एक कोर्स के रूप में उपलब्ध है. इस इंस्टीट्यूट की कई छोटे-बड़े शहरों को मिलाकर लगभग 40 शाखाएं हैं. इसके अलावा यह कोर्स दिल्ली विश्वविद्यालय के अंतर्गत फैकल्टी ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज, कॉलेज ऑफ मटीरियल मैनेजमेंट, जबलपुर- मध्य प्रदेश, मध्य प्रदेश भोज मुक्त विश्वविद्यालय-भोपाल, कॉलेज ऑफ वोकेशनल स्टडीज, दिल्ली व अन्य संस्थान में भी कराए जाते हैं. यह कोर्स उन छात्रों के लिए भी बहुत फ़ायदेमंद हैं जो एमबीए में दाख़िला लेने के बावजूद फाइनेंस, मार्केटिंग या दूसरे खंड में अव्वल नहीं हो पाते हैं. ऐसे में इस क्षेत्र में ऊंची कामयाबी हासिल की जा सकती है.

करियर संभावनाएं- इस कोर्स को करने के बाद पब्लिक व प्राइवेट सेक्टर में अनगिनत संभानाएं हैं. मटीरियल मैनेजर किसी भी कंपनी के परचेज, स्टोर और सप्लाई डिपार्टमेंट में काम कर सकते हैं. इस तरह के मैनेजर की ज़रूरत ख़ास तौर पर डिफेंस, रेलवे, पब्लिक ट्रांसपोर्ट इत्यादि विभागों में होती है. इसके अलावा औद्योगिक प्रतिष्ठानों, कॉरपोरेट दफ़्तरों, सप्लाई चेन इंडस्ट्रीज और निजी परिवहन विभाग में भी इनकी ज़रूरत पड़ती है.

अनुमानित वेतन- इस जॉब में वेतन निर्धारित नहीं होता है, ख़ास कर निजी कंपनियों में. इस विभाग में काम के आधार पर ही वेतन तय किया जाता है. कंपनियों के कंज्यूमर ड्यूरेबल्स, एफएमसीजी, स्टोर्स इत्यादि में काम कर रहे सप्लाई चेन मैनेजर या मटीरियल मैनेजरों के लिए अलग-अलग मासिक राशि निश्चित की जाती है. इसके अलावा काम कर रहे व्यक्ति के तकनीकी ज्ञान पर भी ख़ास ध्यान होता है, जो व्यक्ति की वेतन का ग्राफ ऊपर-नीचे करने में अहम रोल अदा करता है. सरकारी दफ़्तरों में शुरुआती दौर में वेतन दस हज़ार रुपये हो सकता है.

रीतिका सोनाली
ritika.chauthiduniya@gmail.com

फोटो- *प्रभात पाण्डेय*

बेहतर योजनाओं से मिलती है सफलता

परीक्षाओं और परिणामों का दौर ख़त्म हो चुका है. छात्र-छात्राओं ने अपने नामांकन भी करा लिए हैं. सबके भविष्य संवारने की कवायद भी शुरू हो चुकी है. ऐसे में ज़रूरी है कि अपने भविष्य के लिए योजनाएं तैयार कर ली जाए. शिक्षा सत्र की शुरुआत में ही संपूर्ण करियर की प्लानिंग कर लेने से राहें आसान हो जाती हैं. इसके लिए कुछ बातों का ध्यान रखना बहुत ज़रूरी है, ताकि आपकी दीर्घकालिक समस्याओं का समाधान हो सके. पेश है बेहतरीन करियर प्ल-ानिंग के कुछ टिप्स-

1. स्वयं का मूल्यांकन- करियर प्लानिंग करते समय सर्वप्रथम ज़रूरी है ख़ुद को जानना. अपनी रुचि, योग्यता, निजी विशेषता, अपेक्षित मान को जानकर अपने चुने हुए करियर और अपने बीच रिश्ता स्थापित करें. ऐसा करने से आपको पता चल पाएगा कि करियर की चुनी हुई राह में ज़रूरतें क्या हैं और रोड़े कौन-कौन से हैं. इसी तरह अपने करियर की ऊंचाइयों तक पहुंचने के लिए अपने अंदर की ख़ामियां भी दूर की जा सकती हैं.
2. लक्ष्य निर्धारण- करियर का लक्ष्य अपनी शैक्षिक योग्यता, प्राथमिकताएं, अपेक्षाएं के अनुसार ही निर्धारित करें. इसमें आप अपनी वर्तमान अकादमिक योग्यता का ध्यान रखें और यह देख लें कि जिस करियर ऑप्शन को आपने चुना, उसमें आपको आगे कौन सी और कितनी पढ़ाई करने की ज़रूरत है. सिर्फ़ सुनी-सुनाई या डिमांडिंग क्षेत्र वाला करियर न चुनें. एक बार यदि आप अपने लक्ष्य को समझ जाते हैं तो आप अपना लक्ष्य साधने का निर्णय ठीक तरह से कर पाएंगे और अपने उद्देश्य सिद्ध कर पाएंगे.
3. कार्य योजना- कुछ ख़ास कंपनियों और उद्योग क्षेत्र पर नज़र बनाए रखें. इनमें किस प्रकार की ज़रूरतें विकसित हो रही हैं, कैसे इनका संचालन हो रहा है और क्या चीज़ें पुरानी हो रही हैं. ध्यान रखने से आपको अपने करियर की राह में ज़्यादा परेशानियों का सामना नहीं करना पड़ेगा. यह भी प्लान कर लें कि आने वाले कुछ निश्चित वर्षों में आप अपने आप को कहां देखना चाहते हैं. इस तरह से योजनाबद्ध तरीक़े से काम करने पर आप अपनी मंज़िल को जल्द से जल्द पा सकेंगे. ऐसा करने से आपको किसी प्रकार का भटकाव या मार्गदर्शन की ज़रूरत नहीं पड़ेगी.
4. नए करियर व प्रशिक्षण विकल्पों का अन्वेषण करें- सूचनाएं हमेशा से ही सफलता और शक्ति का आधार रही हैं. कुछ सीखने और जानने के अवसरों को व्यर्थ न जाने दें, चाहे वह ज्ञान के तौर पर हो या औद्योगिक आधारित. करियर की योजना बनाने में निष्क्रिय स्वीकरण न होकर नए आसारों की खोज कर उन्हें सीखना-समझना और जानना संलग्न होता है. वक़्त रहते इन विकल्पों पर चिंतन करके इन्हें अपने ऊपर प्रयोग करके संभाव्य करियर में राहों को बेहद आसान बनाया जा सकता है.
5. मनबहलाव कार्यों और रुचियों का निरीक्षण करें- करियर योजना में अपने मनबहलाव के कार्यों और रुचियों के लिए काफी वक़्त मिलता है. इसका ध्यान रखने से आप यह समझ पाते हैं कि कितना वक़्त आपने करियर के लिए दिया और कितने वक़्त मनपसंद कार्य के लिए निकालते हैं. ऐसा करने के बाद देखें कि कितना वक़्त बचता है और कितने की बर्बादी होती है. इसका अंदाज़ा लगाना आसान है. इसके अलावा नियमित रूप से अपने शौक़ों पर वक़्त बिताने से इनमें माहिर हो जाते हैं और कभी-कभी ये अपने आप ही करियर का आयाम ले आते हैं. सभी कलात्मक करियर विकल्पों का आधार शौक़ ही होता है.

बीमारियां भी बरसती हैं मानसून में

रीतिका सोनाली

वर्षा की महिमा का कितना भी बखान क्यों न हो, लेकिन यह सच है कि जुलाई से अक्टूबर के बीच कई रोगों का आक्रमण भी बढ़ जाता है. इन दिनों ज़्यादातर बीमारियां पानी जमा होने या मच्छर के कारण फैलती हैं. ऐसी बीमारियों में आम है मलेरिया, डेंगू, चिकनगुनिया इत्यादि. दिल्ली स्थित महाराजा अग्रसेन अस्पताल में मेडिसीन विभाग की प्रमुख डॉ. ममता जैन के अनुसार बारिश के इन दिनों में लोगों को स्वास्थ्य के प्रति कुछ अधिक ही सचेत रहना चाहिए. बीमारियों से बचने के लिए अपने आस-पास पानी के बहाव और वातावरण की सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिए. उनके अनुसार मलेरिया, डेंगू, चिकनगुनिया और हैजे के लक्षण पहचान कर रोगी को वक़्त रहते दवा दिला देने में ही भलाई होती है. वर्ना ये काफी ख़तरनाक और जानलेवा भी हो सकती हैं. इन बीमारियों के लक्षण, बचाव व उपचार की जानकारी इस तरह है-

मलेरिया

बारिश के दिनों में ठंड लगने को गंभीरता से लें. उसे मौसम में बदलाव मानकर कोई ऐसी-वैसी दवा पर निर्भर न हों. सिरदर्द, बदन दर्द, उल्टी और कंपकंपी के साथ तेज़ बुख़ार हो और यह बुख़ार बार-बार चढ़ता-उतरता हो तो उसे अनदेखा न करें. यह मलेरिया का मुख्य लक्षण है, जो मच्छर के काटने से होता है. बारिश में कई जगहों पर पानी जमा होने से मच्छरों का जन्म होता है. मलेरिया प्लाजमोडियम नामक परजीवी से होने वाला रोग है. यह मादा एनोफिलीज मच्छर के काटने से फैलता है. मच्छर के काटने के बाद व्यक्ति के लीवर में ही परजीवी बढ़ने लगता है और एक गोलाकार तंत्र बनाता है जिसमें विभिन्न अवस्था होते हैं. इसी चक्र के प्रभाव में परजीवी के फैलने से शरीर का तापमान बढ़ता है और तेज़ बुख़ार आता है. तेज़ बुख़ार में आम तौर पर लोग सामान्य बुख़ार के लिए प्रचलित दवा क्रोसिन या कुछ और लेते हैं, जिससे लीवर में परजीवी का चक्र टूटता है और बुख़ार कम हो जाता है. पर जब दवा का असर ख़त्म होता है, तब बुख़ार फिर चढ़ जाता है. इसी प्रक्रिया में रोगी का बुख़ार उतरता-चढ़ता रहता है. ऐसे में तत्काल ही डॉक्टरी परामर्श से उपचार कराना चाहिए. यह एक साधारण बीमारी है जो अनदेखी की वजह से बढ़ जाने पर जानलेवा भी हो सकती है. कई व्यक्तियों को मलेरिया में दौरे भी पड़ते हैं. यदि किसी को प्लाजमोडियम फेल्सिपैरम यानी दिमाग़ी मलेरिया हो जाए, तो उसे दौरे पड़ सकते हैं और तब यह बीमारी अधिक जानलेवा होती साबित होती है.

डेंगू

यह रोग भी मानसून में सबसे अधिक फैलता है. कभी-कभी तो यह बीमारी महामारी का रूप ले लेती है. वर्ष 1996, 2003 और 2006 में इसने पूरे देश में महामारी का रूप लगभग ले भी चुकी है. उस दौरान इस बीमारी की चपेट में आने से कई लोगों की जान चली गई थी. जुलाई से अक्टूबर का महीना मच्छरों के पनपने के लिए उपयुक्त होता है, और इन्हीं दिनों में डेंगू फैलाने वाले एडीज मच्छर पैदा होते हैं. डेंगू बुख़ार से पीड़ित व्यक्ति के रक्त में डेंगू वायरस काफी मात्रा में होते हैं. एडीज मच्छर उसे एक व्यक्ति से दूसरे में फैलाने का काम करते हैं. डॉ. ममता जैन के अनुसार जिस दिन डेंगू वायरस से संक्रमित कोई मच्छर किसी स्वस्थ व्यक्ति को काटता है, तो इसके लगभग तीन से पांच दिनों के बीच उस व्यक्ति में डेंगू के लक्षण प्रकट हो सकते हैं. यह संक्रमण काल तीन से 10 दिनों तक का भी हो सकता है. इसके होने से व्यक्ति के शरीर में कुल रूधिर पट्टक गणना यानी ब्लड प्लैटलेट काउंट (टीपीसी) कम हो जाते हैं. टीपीसी कम हो जाने से रोगी के शरीर के किसी भी हिस्से से ख़ून निकलने लगता है. साथ ही उसके शरीर पर लाल-लाल चकत्ते उभर जाते हैं और चेहरा लाल हो जाता है. आदर्श टीपीसी डेढ़ लाख होती है, जबकि डेंगू के रोगी में यह घटकर हज़ार या इससे भी कम हो जाती है. ऐसे में रोगी को ख़ून चढ़ाया जाता है. चूंकि इस समय शरीर से रक्तस्राव की स्थिति चरम पर होती है, इसलिए किसी भी हाल में रोगी को किसी प्रकार का इंजेक्शन नहीं दिया जा सकता है. डेंगू से ग्रसित व्यक्ति आम तौर पर पेट के दर्द की शिकायत करते हैं, और इसकी ही दवा लेते हैं. जबकि इससे कोई फ़ायदा नहीं पहुंचता है और पेट दर्द क़ायम ही रहता है.

डेंगू बुख़ार तीन प्रकार का होता है. साधारण डेंगू बुख़ार, डेंगू हेमरेजिक बुख़ार, डेंगू शॉक सिंड्रोम. साधारण डेंगू में अचानक बुख़ार तेज़ हो जाता है. सिर, मांसपेशियों व जोड़ों में दर्द महसूस होना, आंखों के पिछले हिस्से में दर्द होना जो आंखों को दबाने या हिलाने से और बढ़ जाता है, अत्यधिक कमज़ोरी लगना, भूख में कमी, जी मितलाना, स्वाद का ख़राब होना, गले में हल्का दर्द होना, शरीर पर लाल-गुलाबी निशान पड़ जाना इसके प्रमुख लक्षणों में हैं. साधारण बुख़ार के लक्षणों के अलावा नाक, मसूढ़ों, शौच, उल्टी में ख़ून आना डेंगू हेमरेजिक के लक्षण हैं. शरीर में काफी कम प्लेटलेट्स बनने पर डेंगू हेमरेजिक होता है. इससे ख़ून के गाढ़े होने की प्रक्रिया प्रभावित होती है और शरीर के किसी भी भाग से रक्तस्राव इसका प्रमुख लक्षण है. इसमें त्वचा पर गहरे नीले-काले रंग के छोटे या बड़े चकत्ते भी पड़ जाते हैं.

डेंगू शॉक सिंड्रोम : रोगी का अत्यधिक बेचैन होना, तेज़ बुख़ार के बावजूद त्वचा ठंडी महसूस होना, रोगी का धीरे-धीरे होश खोना व रक्तचाप कम होना प्रमुख लक्षण हैं.

डॉ. ममता के अनुसार 2008 के मानसून में प्रतिदिन 75 से 100 डेंगू के रोगी अग्रसेन अस्पताल में दाख़िल हुए थे. उनमें से अधिकतर पानीपत व अन्य ग्रामीण क्षेत्रों से आए थे, जहां स्वस्थ साधनों की कमी आम है.

उपचार : डेंगू के शुरुआती उपचार में पैरासिटामॉल की खुराक देकर बुख़ार को कम किया जा सकता है. रोगी को डिस्प्रीन व एस्प्रीन जैसी दवा नहीं देनी चाहिए. यदि बुख़ार 102 डिग्री फॉरनहाइट हो तो दवा के साथ-साथ पानी की पट्टी अवश्य देनी चाहिए. सामान्य रूप से भोजन देना जारी रखें, क्योंकि बुख़ार में शरीर को और अधिक भोजन की आवश्यकता होती है. रोगी को पूरी तरह से आराम करने दें. यदि रोगी में हेमरेजिक बुख़ार या शॉक सिंड्रोम के लक्षण प्रकट हों तो उसे तत्काल डॉक्टर के पास ले जाएं, ताकि रोग को पहचान कर उचित उपचार किया जा सके.

चिकनगुनिया

डेंगू की तरह यह बीमारी भी एडीज मच्छरों के काटने से फैलती है और जुलाई से अक्टूबर तक इसका प्रकोप ज़्यादा होता है. इसमें रोगी को तेज़ बुख़ार, जोड़ों-मांसपेशियों व सिर में तेज़ दर्द, उल्टियां, जी मितलाना, कमज़ोरी जैसे लक्षण देखे जाते हैं. उपचार के लिए रोगी को तुरंत डॉक्टर के पास ले जाना अत्यंत आवश्यक होता है. हालांकि यह जानलेवा बीमारी नहीं है, पर इसका उपचार समय पर नहीं कराने से रोगी के शरीर में दीर्घकालिक समस्याएं हो सकती हैं.

मच्छर से होने वाली बीमारियों से बचाव के उपाय-

घर के आस-पास ऐसे टूटे-फूटे बर्तन न रहने दें जिनमें पानी जमा हो सके.

पानी की टंकी का ढक्कन बंद करके रखें.

गमलों की नियमित सफाई करें.

कूलर का पानी प्रतिदिन बदलें.

कोशिश करनी चाहिए कि मच्छर काटे ही नहीं. इसके लिए ज़रूरी है कि मच्छरों का लार्वा पनपने से रोका जाए. इसके लिए खुली नालियों की नियमित सफाई कराएं और गड्ढों में जमा पानी में मिट्टी का तेल डालें.

शरीर को पूरी तरह से ढंकने वाले कपड़े पहनें.

रात में मच्छरदानी लगाकर अथवा शरीर को ढक कर सोएं.

ritika.chauthiduniya@gmail.com

सिख दंगे का सबक़ याद रहेगा

अर्जुन भगत

इंदिरा गांधी की हत्या के तीन दिन बाद 31 अक्टूबर 1984, दिल्ली की तत्कालीन सरकार और प्रशासनिक तंत्र ने पूरी तरह से घुटने टेक दिए थे. गुस्साए हथियार से लैस और संगठित प्रदर्शनकारियों ने गलियों में आग लगा दी और सिखों की संपत्ति को लूटने लगे और 3000 बच्चों, औरतों और पुरुषों को मौत के घाट उतार दिया गया.

दिल्ली पुलिस ने सभी व्यावहारिक कारणों से इन घटनाओं को रोकने की अपनी ज़िम्मेदारी नहीं उठाई. सरकार के मुखिया राजीव गांधी शोक में थे और इसी वजह सरकार भी शायद कुछ न कर सकी. सेना की तैनाती बेहद धीमी रफ़्तार से की गई. क्रमबद्ध तैनाती सरकारी शब्दावली थी. सरकारी नियंत्रण वाले रेडियो और टीवी स्टेशनों पर शोक की धुन प्रसारित की जा रही थी. कोई भी बड़ी घोषणा नहीं हुई और न ही नरसंहार के बारे में अधिक जानकारी दी गई. 72 घंटों तक ऐसा लगा कि भारत में सरकार नाम की कोई चीज़ ही नहीं रही थी.

अगर दिल्ली जल सकती है, तो राज्यों का क्या हाल हुआ होगा. अब तक अलग-अलग राज्यों में सिखों के मौत की संख्या अनुमानित ही की जाती है. सच पूछिए तो केंद्रबिंदु हमेशा दिल्ली का नरसंहार बना रहा, जो कि होना भी चाहिए था. लेकिन अन्य राज्यों, ख़ास तौर से हिंदी भाषी क्षेत्रों में काफी क़त्लोगारत हुआ और हज़ारों सिखों को मार दिया गया.

उत्तर प्रदेश के कानपुर, लखनऊ, गाजियाबाद के अलावा दूसरे शहरों में भी सिखों को निशाना बनाकर उनकी हत्या की जा रही थी. *इंडिया टुडे* ने 30 नवंबर 1984 के अंक में लिखा कि इंदिरा गांधी की हत्या के बाद जो हिंसा और हत्या हुई, पुलिस इसे रोकने में असफल रही, जिसके लिए उन्हें दोषी ठहराया जाना चाहिए. उदाहरण के लिए लखनऊ में चारबाग स्टेशन पर सुबह से जमा प्रदर्शनकारी एक अफवाह से उत्तेजित हो गए कि पंजाब में सिखों द्वारा मारे गए हिंदुओं की लाशें पंजाब से आ रही हैं.

हालांकि सिख यात्रियों पर उपद्रवियों ने जो हमले किए थे, उसकी सूचना पुलिस को दी गई थी, लेकिन कोई मामला दर्ज़ नहीं किया गया और न ही कार्रवाई की गई. उस दोपहर ट्रेन जब 3:15 बजे अमृतसर से यहां पहुंची, तब नरसंहार को रोकने के लिए कोई नहीं था- पांच सिखों को ट्रेन से खींचकर पुलिस के आने से पहले मार दिया गया. पुलिस घटनास्थल पर एक से डेढ़ घंटे देरी से पहुंची और दिखावे के लिए केवल हवा में फायरिंग की. उत्तर प्रदेश में लगभग पांच सौ सिखों ने अपनी जान गंवाई.

अगर दिल्ली जल सकती है, तो राज्यों का क्या हाल हुआ होगा. अब तक अलग-अलग राज्यों में सिखों के मौत की संख्या अनुमानित ही की जाती है. सच पूछिए तो केंद्रबिंदु हमेशा दिल्ली का नरसंहार बना रहा, जो कि होना भी चाहिए था. लेकिन अन्य राज्यों, ख़ास तौर से हिंदी भाषी क्षेत्रों में काफी क़त्लोगारत हुआ और हज़ारों सिखों को मार दिया गया.

बिहार भी इससे अलग नहीं था. वास्तव में दिल्ली के बाद बिहार ही सिखों की हत्या के मामले में दूसरे स्थान पर रहा- पटना, जमशेदपुर, रांची, बोकारो, भागलपुर, डाल्टनगंज, मुजफ्फरपुर, हजारीबाग के साथ ही दूसरे शहरों में भी हिंसा भड़क उठी. इंदिरा गांधी की हत्या के कुछ घंटे बाद उग्र प्रदर्शनकारियों ने बोकारो में लूटपाट और लोगों को मारना शुरू कर दिया. आम तौर पर शांत रहने वाले बोकारो में शाम तक 60 सिखों को मौत के घाट उतार दिया गया. मुख्यमंत्री चंद्रशेखर सिंह राज्य छोड़कर दिल्ली के लिए रवाना हो गए. जब तक वह वापस आए तब तक क्षति हो चुकी थी. *इंडिया टुडे* ने लिखा कि बहुत मामलों में लूटपाट करने वाले उपद्रवियों का नेतृत्व स्थानीय नेता कर रहे थे. यह संदेह तब और पुख्ता हो गया जब मुख्यमंत्री ने एक स्थानीय नेता को पटना साहिब (गुरु गोविंद सिंह के जन्म स्थल) से गिरफ़्तार करने का आदेश दिया. पत्रिका में आगे लिखा गया- राजनीतिक दलों से भी ख़राब तो पुलिस की नाकामी थी. इन सबके बीच एक सीनियर पुलिस अधिकारी ने बिना किसी झिझक के यह कह दिया कि जो कुछ भी हो रहा था, वह तो प्राकृतिक प्रतिक्रिया थी. प्रशासन के रवैए और भूमिका के बारे में पत्रिका में लिखा गया है- कई घटनाओं में सेना को केवल काग़ज़ पर बुलाया गया था.

सेना ने केवल फ्लैग मार्च किया और बिना कोई ख़ास भूमिका निभाए वापस चली गई. यह ख़ास तौर पर पटना में हुआ, जहां सेना को मार्च का आदेश देने से पहले शायद ही ट्रकों से उतरने दिया गया. पत्रिका आगे बताती है- तीन दिनों तक चली इस बेरोकटोक हिंसा में केवल सात लोग ही पुलिस फायरिंग में मारे गए. बाक़ी सब की हत्या भीड़ ने की. हिंसा आख़िरकार तभी रुकी, जब पंद्रह शहरों में कर्फ्यू लगा दिया गया और सात में अंततः सेना की तैनाती की गई, लेकिन इसी बीच लगभग 600 से 800 सिखों की हत्या बिहार में कर दी गई थी. इससे कई गुणा तो घायल हुए थे.

दूसरा राज्य, जिसमें सिखों का भारी पैमाने पर संहार हुआ, वह मध्य प्रदेश था. लगभग हरेक शहर ने किसी न किसी रूप में हिंसा देखी. इनमें रतलाम, रीवा, सागर, सतना, भोपाल, मांडला, रायपुर, बैतूल, भिंड, होशंगाबाद और इंदौर वगैरह. असल में इंदौर सबसे अधिक प्रभावित था. शहर में हिंसा इंदिरा गांधी की हत्या के एक दिन बाद शुरू हुई. आधिकारिक तौर पर एक नवंबर 1984 को इंदौर में 22 सिखों की हत्या हुई. शहर के तत्कालीन जिलाधीश अजित जोगी ने बयान दिया कि वह असहाय थे-हरेक चीज़ अनियंत्रित थी. ऐसा लगता था, मानो शहर की पूरी आबादी गलियों में थी. लगभग 200 से 300 सिखों की हत्या मध्य प्रदेश में हुई.

हरियाणा और महाराष्ट्र जैसे राज्यों में भी बड़े पैमाने पर हिंसा और हत्याएं हुईं. मैं जब भी इंदिरा गांधी की हत्या के बाद सिखों के साथ हुई हिंसा के बारे में सोचता हूं, तो अचरज में पड़ जाता हूं कि एक देश और नागरिक के तौर पर हम अपना दुखद इतिहास क्यों भूल जाते हैं. हम कम से कम अपनी अंतरात्मा में क्यों नहीं झांकते और आख़िर दोषी को सज़ा क्यों नहीं देते? उसे क़ानून के सामने नंगा क्यों नहीं करते? हम क्यों छोटी, तुच्छ और बेकार की बातों पर बहस कर उसे बस खींचते रहते हैं.

क्या मीडिया इतिहास की धारा को कृत्रिम बनाने का ज़िम्मेदार है, या हम ख़ुद दोषी हैं, क्योंकि हम वह सब कुछ पचा ले जाते हैं, जैसे ही हमें वास्तविकता से फंतासी की दुनिया में जाने का मौका मिलता है. जहां कारगिल का कोई महत्व नहीं है, लेकिन करीना और सैफ का है. ख़ैर, यह तो विषयांतर है. मैं तो बस एक बात यह बताना चाहता हूं कि भारत ने उसकी बड़ी क़ीमत चुकाई है-सिखों के नरसंहार के बदले. पंजाब में आतंकवाद ने कम से कम 25,000 लोगों की जान ले ली. क्या हम अपने कल से कुछ भी सीख लेंगे? क्या हमारे राजनीतिक दल अब अधिक बेहतर और मज़बूत बनेंगे? मेरा ख़याल है, नहीं. याद कीजिए, शूगेट (जरनैल सिंह नामक पत्रकार का चिदंबरम पर जूता फेंकना). आख़िर, उसका विरोध तो कांग्रेस के दो उम्मीदवारों के ख़िलाफ़ ही था. यह घटना कुछ महीने पहले की ही है. क्या हम उम्मीद करें कि इतिहास का सबक़ हमारे नेताओं को याद होगा?

feedback.chauthiduniya@gmail.com

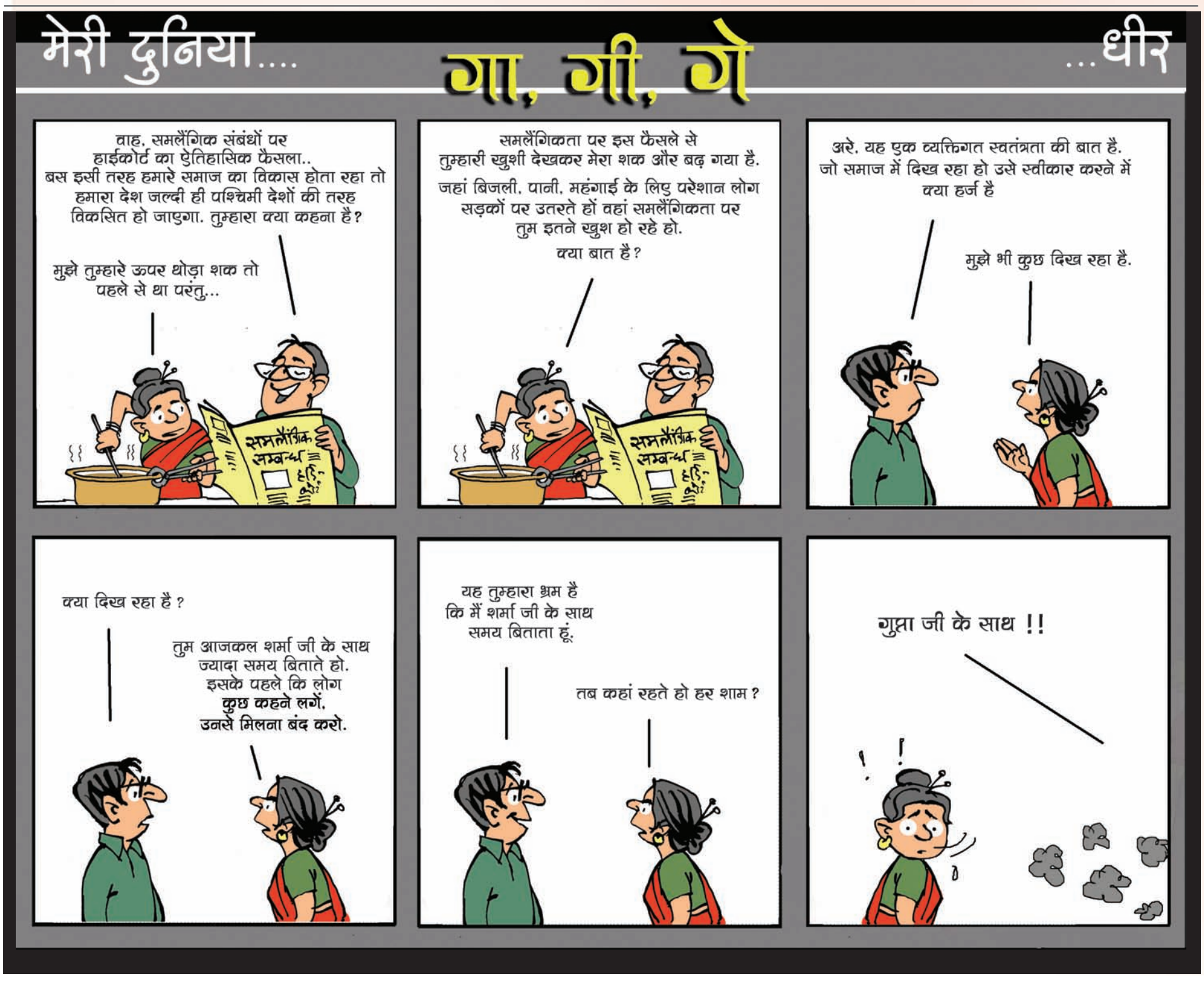

राशिफल

(13 जुलाई से 19 जुलाई तक)

मेष (21 मार्च से 20 अप्रैल)
इस सप्ताह आपके लिए अचानक से धन मिलने का योग है. किसी संबंधित अधिकारी और परिवार वालों का सहयोग मिलेगा. आपका संबंधियों से मधुर व्यवहार रहेगा. साथ ही पत्राचार करते समय सावधानी बरतें. संतान के दायित्व पूरे होंगे.

वृष (21 अप्रैल से 20 मई)
इस सप्ताह आप अधिक व्यस्त रहेंगे. आप रुपए-पैसे के लेन-देन में सतर्कता बनाए रखें. कुछ कारण हैं, जिनकी वजह से आपको लाभ नहीं मिलेगा. जो प्रार्थना की, जो मन्नत मांगी, वह पूरी होगी. उदर विकार होने का योग बना हुआ है.

मिथुन (21 मई से 20 जून)
सावधानी से काम लें. कुछ ऐसा काम न करें जिससे किसी परेशानी का सामना करना पड़े. संबंधियों और प्रियजनों से आपका मिलना हो सकता है. आपके पास काम अधिक हो सकता है, जिसके कारण व्यस्त रहेंगे. पत्र-व्यवहार में सावधानी बरतें.

कर्क (21 जून से 20 जुलाई)
कोई काम जल्दबाज़ी में न करें और न ही कोई फ़ैसला लें. यह जल्दबाज़ी आपको परेशानी में डाल सकती है. अगर आप मांगलिक कार्यों के लिए योजना बना रहे हैं, तो उसमें सफलता मिलेगी. परिवार वालों, ख़ास कर ननिहाल पक्ष से भरपूर सहयोग प्राप्त होगा.

सिंह (21 जुलाई से 20 अगस्त)
कुछ ऐसा होगा, जो आपने सोचा नहीं होगा. उसमें आपको धन और सम्मान मिलेगा. अधूरे काम पूरे हो जाएंगे. आप कहीं दूर यात्रा पर जाने का प्रयास करेंगे, जिसमें सफलता मिलेगी. वैसे इस सप्ताह उदर विकार या किसी अन्य व्याधि से पीड़ित हो सकते हैं.

कन्या (21 अगस्त से 20 सितंबर)
आपको रोज़गार के संदर्भ में बढ़िया ख़बर मिल सकती है. ज़रूरी है कि आप धैर्य बना कर चलें. छोटी-छोटी बातों पर गुस्सा होना आपके लिए हानिकारक हो सकता है. परिवार में किसी भी बात पर लड़ाई-झगड़ा हो सकता है. इसलिए वाणी और संबंधों में मधुरता पर ध्यान दें.

तुला (21 सितंबर से 20 अक्तूबर)
यह सप्ताह आपके लिए अच्छा रहेगा. आपके किसी भी संबंधित अधिकारी या परिवार वालों का भरपूर सहयोग प्राप्त होगा. आप जो यात्रा करने जा रहे हैं वह भी मनोरंजक रहेगी. संतान के संबंध में भी आपको ख़ुशी मिलेगी.

वृश्चिक (21 अक्तूबर से 20 नवंबर)
काम अधिक रहेगा जिसके कारण आप अधिक व्यस्त रहेंगे. आप भोजन के मामले में सतर्क रहें, क्योंकि अधिक भोजन आपके स्वास्थ्य को बिगाड़ सकता है. लेन-देन में सफलता मिलेगी. व्यवसाय में आपके लिए आय के नए रास्ते बनेंगे.

धनु (21 नवंबर से 20 दिसंबर)
यह सप्ताह व्यस्तता का रहेगा. परिवार वालों का पूरा सहयोग मिलेगा. पिता से वैचारिक मतभेद भी समाप्त हो जाएंगे. अगर किसी नई योजना को बनाएंगे तो उसमें सफलता भी मिलेगी. आप रचनात्मक कार्य करने का प्रयास कर रहें हैं, तो उसमें सफलता मिलेगी.

मकर (21 दिसंबर से 20 जनवरी)
आपके जो विवादित मामले चल रहे हैं, उसमें आपको सफलता मिलेगी. आपके भाग्य के कारण कोई अधूरा काम भी जल्द ही संपन्न हो जाएगा. अगर आप किसी प्रतियोगी परीक्षा के लिए मेहनत कर रहे हैं तो मेहनत रंग लाएगी. किसी वजह से कुछ तनाव भी मिल सकते हैं.

कुंभ (21 जनवरी से 20 फरवरी)
इस सप्ताह आपके धन, सम्मान, पद, प्रतिष्ठ में बढ़ोतरी होगी. अचानक ही कहीं अनचाही यात्रा भी करनी पड़ सकती है. आलस्य रहेगा. वाहन चलाते समय सावधानी बरतने की आवश्यकता है, नहीं तो दुर्घटना होने की स्थिति बनी हुई है.

मीन (21 फरवरी से 20 मार्च)
यह सप्ताह आपको लाभ के साथ-साथ सफलता दिलाने वाला बना हुआ है. रुके हुए कार्य पूरे होंगे. आप कहीं जाएं तो अपने सामान की सुरक्षा के प्रति सचेत रहने की आवश्यकता है. कहीं से उपहार और सम्मान के लाभ की स्थिति बनी हुई है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

आत्मकथा से हड़कंप

अनंत विजय

हाल के दिनों में हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श के नाम पर जो खेल खेला जा रहा है और देह मुक्ति के नाम पर श्रद्धेय के प्रति समर्पण का जो रूप सतह के नीचे दिखाई देता है, उसे विमर्श के अलावा कोई और नाम दिया जा सकता है. आप चाहें तो व्यभिचार का विमर्श कह सकते हैं. यह व्यभिचार सिर्फ़ विमर्श के नाम पर नहीं हो रहा है. धर्म, आस्था, विश्वास, कर्म के नाम पर भी यह खेल खेला जा रहा है. चाहे वह बाल विधवा आश्रम हो या नारी निकेतन या जैन आश्रम या फिर चर्च या उससे जुड़ी संस्थाएं. हर जगह पर धर्म के आवरण में चकलाघर चलता है. हर जगह नारी मुक्ति के नाम पर, धर्म की आड़ लेकर यौन शोषण की ख़बरें बाहर निकलती रहती हैं. तमाम क़ानूनी बंदिशों के बावजूद दक्षिण भारत में देवदासी प्रथा अब भी बदस्तूर जारी है, जहां लड़कियों को मंदिर को समर्पित कर दिया जाता है, जहां भगवान के नाम पर उन लड़कियों का जमकर यौन शोषण किया जाता है. देश के कई इलाक़ों में आज़ादी के बाद वर्षों तक यह परंपरा रही कि जब लड़की का विवाह होता था तो उसे पहली रात विवाह कराने वाले पंडित के साथ गुज़ारना होता था. पूजनीय पंडित जी धर्म और भगवान के नाम पर पहले उस कुंवारी कन्या को शुद्ध कर आशीर्वाद देते थे. हद तो तब हो जाती थी, जब एक पंडित एक साथ कई लड़कियों की शादी कराता था. ऐसे में वह अलग-अलग लड़कियों के शुद्धिकरण के लिए अपने कुनबे को इकट्ठा करता था और धर्म के नाम पर सब लोग मिलकर लड़कियों की अस्मत से खेलते थे.

ऐसा नहीं है कि ये सब कुरीतियां सिर्फ़ हिंदू धर्म में ही मौजूद हैं. कुछ दिनों पहले कोलकाता की लेखिका मधु कांकरिया के उपन्यास- सेज पर संस्कृत- में जैन धर्म में संस्था और आस्था के नाम पर महिलाओं के शोषण को साहसपूर्वक सामने लाया गया था. अब सिस्टर जेसमी की आत्मकथा- आमीन- एन ऑटोबॉयोग्राफी ऑफ अ नन- ने चर्च और उससे जुड़ी संस्थाओं की पोल पट्टी खोलकर रख दी है . मलयाली भाषा में प्रकाशित इस उपन्यास के दो महीनों में ही तीन संस्करण प्रकाशित हो गए थे. अब पेंग्विन प्रकाशन ने इसे अंग्रेजी में छापा है और हिंदी समेत कई भाषाओं में प्रकाशित होने की प्रक्रिया में है. लगभग पैंतीस साल कांग्रेगेशन में गुज़ारने के बाद सिस्टर जेसमी 2007 में वहां से बाहर निकलती हैं. ग़ौरतलब है कि इन पैंतीस सालों में जेसमी ने 26 साल बतौर नन गुज़ारे. इस आत्मकथा के प्रकाशन के बाद कैथोलिक चर्च और उससे जुड़ी संस्थाओं में हड़कंप है.

दरअसल यह आत्मकथा एक ऐसी लड़की की कहानी है, जो एक ऐसे परिवार से आती है जहां बेटी की स्कूल फीस भरने के लिए उसकी मां को ज़बरदस्त संघर्ष करना पड़ता है. यह वह दौर होता है, जब जेसमी बारहवीं की छात्रा थी. उस वक्त त्रिसूर के बिशप जोसेफ कुंडुकुलम ने जेसमी की मदद की थी. जब भी फीस के लिए के लिए जेसमी को पैसे की ज़रूरत होती थी, तो वह बिशप हाउस चली जाती थी. सेंट थॉमस कॉलेज के पास की तंग गलियों से बिशप हाउस तक जाने का भी बेहद दिलचस्प वर्णन है. किस तरह से कॉलेज के लड़के उस पर काग़ज़ की हवाई जहाज रूपी मिसाइलें फेंका करते थे और किस तरह से चर्च के प्रीस्ट उसको खा जाने वाली नज़रों से घूरा करते थे. घबराहट के बीच जेसमी बिशप से पैसे लेकर बग़ैर धन्यवाद दिए भाग आती थी. तमाम घटनाओं के बीच जेसमी परिवार को सन्न कर देने वाला फ़ैसला लेती है और खुद को यीशू समर्पित करने का फ़ैसला लेती है.

ईसा मसीह को समर्पित होने के बाद जब वह कन्फेशन के लिए जाती है तो उसको अपने चारों ओर एक रहस्यमय चुप्पी नज़र आती है. आसपास चल रही खुसफुसाहट को जब वह ध्यान से सुनती है तो उसके होश उड़ जाते हैं. उसकी साथी कुसुम और मारिया ने बताया कि जो भी लड़की कन्फेशन के वक़्त अंदर कमरे में जाती है उसको वहां मौजूद प्रीस्ट किस करता है. जब जेसमी कन्फेशन के लिए जाती है तो फादर उससे भी किस करने की इजाज़त मांगता है, जिससे जेसफी

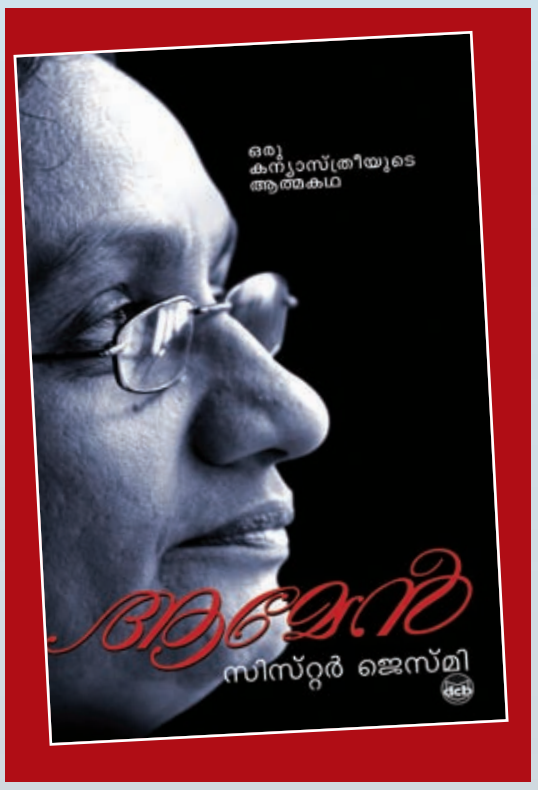

साफ इंकार कर देती है. बेहद दबाव में दूसरी बार जेसमी को उसी प्रीस्ट के पास भेजा जाता है तो अंदर जाकर वह फादर को आगाह करती है. कन्फेशन रूम में किस को लेकर कांग्रेगेशन की लड़कियों में बेहद रोष है. लेकिन डर से कोई भी मुंह खोलने को तैयार नहीं है. फादर का उत्तर बेहद दिलचस्प ही नहीं, हैरान करने वाला भी है- मैंने हर किसी से किस करने की इजाज़त ली है और जिसने मना किया है उसको मैंने किस नहीं किया. और यह सब तो जीजस और बाइबिल की आत्मा के अनुरूप है.

इस घटना से फादर बेहद विचलित हो जाते हैं और एडोरेशन-कम हीलिंग सेशन को जल्द से ख़त्म करने का हुक्म सुना देते हैं. वह भी एक हल्के से बहाने से. इस सेशन के बाद फादर के हुक्म से जेसमी को उनके कमरे में भेजा जाता है. वहां फादर बाइबिल के पन्ने खोलकर होली किस के कोट्स पढ़कर सुनाते हैं- सेंट पॉल ने कहा कि, एक-दूसरे का अभिवादन पवित्र चुंबन से करें. पीटर कहते हैं- एक-दूसरे को प्यार के चुंबन से विश करो, आदि आदि .

चर्च के शुरआती दिनों में जेसमी को सिर्फ़ फादर के किस का ही सामना नहीं करना पड़ता है, उसका वास्ता मलयालम पढ़ाने वाली टीचर विम्मी से भी पड़ता है, जो समलैंगिक है. उस टीचर की नज़र जैसे ही जेसमी पर पड़ी, उसका दिल बल्लियों उछलने लगा और पहली नज़र में प्यार वाले हालात पैदा हो गए. विम्मी ने जेसमी को लंबे-लंबे प्रेमपत्र लिखकर अपने प्यार का इज़हार किया . हैरान और परेशान जेसमी को तब तो करंट सा झटका लगा, जब एक पत्र में विम्मी ने उसके साथ समलैंगिक रिश्ते बनाने की इच्छा ज़ाहिर की. जब विम्मी को जेसमी मना कर देती है तो वह उसके ख़िलाफ़ षड्यंत्र रचने में जुट जाती है. जेसमी पर जब चौतरफा दबाव बढ़ा तो उसने विम्मी के आगे समर्पण कर दिया. रात में विम्मी उसके बिस्तर में घुस आती थी और उसके साथ लेस्बियन रिश्ता कायम करती थी. जब वह यह संबंध बना रही होती तो हमेशा जेसमी के कान में कहती, गर्भ के झंझट से बचने का सबसे सुरक्षित तरीक़ा यही संबंध है. जेसमी लंबे समय तक इस संबंध को झेलती रहती है, लेकिन जब इंतहा होने लगती है तो वह मदर प्रोवेंशियल से दया की भीख मांगती है और किसी तरह वहां से अपना तबादला करा लेती है. जब उसका ट्रांसफर ऑर्डर आता है तो विम्मी उसे बुरी तरह से धमकाती और प्रताड़ित करती है. कहती है कि वह उसे चैन से रहने नहीं देगी, जो कालांतर में सच भी साबित होती है.

नन के लिए सबसे बड़ी सज़ा यह होती है कि उसे कोई काम नहीं दिया जाए. तबादले के बाद यह खेल जेसमी के साथ शुरू होता है. पहले उसका सामाजिक बहिष्कार किया जाता है और फिर उसे मानसिक तौर पर बीमार साबित करने के लिए तमाम दंद-फंद रचे जाते हैं. मदर प्रोवेंशियल क्लोडिया उसे पागल करार देना चाहती है. ये तमाम षड्यंत्र चीख़-चीख़ कर इस बात की गवाही देते हैं कि किस तरह से ननरी में कुछ लोग मिलकर एक सिंडिकेट की तरह ऑपरेट करते हैं और यौन शोषण के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाने वाले को पागल करार देकर नरक में धकेल देते हैं .

इस आत्मकथा में जीसस और बाइबिल के नाम पर दैहिक शोषण और फादर और नन के बीच अवैध देह संबंध बनाने की कोशिशों का भी पर्दाफाश किया गया है. सिस्टर जेसमी की इस आत्मकथा ने कैथोलिक समुदाय के बीच एक सन्नाटे जैसी स्थिति पैदा कर दी है और चर्च को इस पर आधिकारिक प्रतिक्रिया देते नहीं बन रहा. शायद बाइबिल से कोई उद्धरण खोजा जा रहा होगा, ताकि उसके आधार पर सिस्टर को माफ किया जा सके . वैसे क्रिश्चियनिटी में कई विडंबनाएं हैं और सबसे बड़ी विडंबना तो यह है कि अगर कोई कुंवारी लड़की मां बनती है और उसके बाद शादी करना चाहती है तो उसकी शादी चर्च में नहीं हो सकती. यहां यह बताते चलें कि ईसा मसीह का जन्म मेरी नाम की कुंवारी कन्या से ही हुआ था.

इन सबसे इतर अगर हम इस आत्मकथा को हिंदी में प्रकाशित और चर्चित आत्मकथाओं के बरक्स रखकर देखें तो एक बुनियादी फ़र्क़ नजर आता है. इसमें जो सेक्स प्रसंग हैं, वे कथा के साथ सहजता से आते हैं और वास्तविकता का अहसास कराते हैं, जबकि हिंदी की आत्मकथाओं में ज़बरदस्ती ठूंसे गए प्रतीत होते हैं.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

सनातन दर्शन का बौद्ध धर्म पर प्रभाव

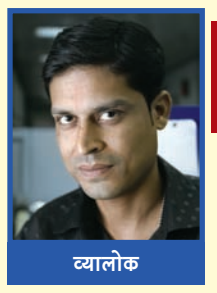
व्यालोक

हम यह पहले भी बता चुके हैं कि सनातन धर्म सदा अपने ही अंदर सुधार करता रहता है. यह भी सच है कि इसके अंदर जितने आंदोलन हुए, सुधार के जितने भी प्रयास हुए, उन पर भी सनातन धर्म का प्रभाव रहा ही है. यही बात बौद्ध और जैन धर्म के साथ भी लागू होती है. इन दोनों मतों की गणना भी नास्तिक दर्शन में की जाती है, जबकि यह सत्य से परे है.

आख़िर सनातन धर्म की तरह ही बौद्ध दर्शन का भी तो यही विश्वास है कि मानव का यही जीवन आख़िरी पड़ाव नहीं है. वहां भी ईश्वर और अवतार की अवधारणा तो है ही. जैन धर्म में भी महावीर के पहले 23 तीर्थंकर हो चुके थे. वर्द्धमान महावीर आख़िरी तीर्थंकर थे. अगर सही मायनों में नास्तिकता की कसौटी पर कसा जाए, तो सिवाय चार्वाक के किसी भी दर्शन को नास्तिक नहीं माना जा सकता. हां, विभाजन का स्तर सगुण और निर्गुण के आधार पर तो किया जा सकता है, किंतु किसी भी तरह इन्हें नास्तिक की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता है. दरअसल, इस ग़लतफ़हमी के पीछे वजह यही है कि नास्तिक का अर्थ वेदों की निंदा करने वाले से लगाया जाता है. अब बौद्ध और जैन, दोनों ही धर्म चूंकि वेदों के ख़िलाफ़ थे, इसलिए उनको भी नास्तिक शाखाओं में गिन लिया गया.

दरअसल, बौद्ध और जैन धर्म का उत्थान सनातन धर्म में पुरोहितों के बढ़ते वर्चस्व और कर्मकांड की प्रधानता के विरोध में था. ब्राह्मणों ने दरअसल धर्म के मूल तत्व को ग़ायब कर उसकी जगह केवल यज्ञों और कर्मकांड को ही प्रधानता दे दी. यज्ञों में हिंसा ही प्रधान हो गई. यही वजह रही कि बौद्ध धर्म ने अहिंसा पर इतना ज़ोर दिया. ब्राह्मणों के विरोध का ही नतीजा रहा कि वर्ण व्यवस्था में पहले पायदान पर क्षत्रिय आ गए. कई बौद्ध ग्रंथों में इस तरह की बात कही गई है कि क्षत्रिय का स्थान वर्ण-व्यवस्था में सबसे ऊंचा है (इस पर चर्चा विस्तार से अगले अंक में). जातकों में तो यह भी वर्णन है कि जब बुद्ध का अवतार होने वाला था, तो देवगणों ने उनसे पूछा था कि वह किस वर्ण में जन्म लेंगे. पहले बुद्ध का अवतार ब्राह्मणी के गर्भ से होने वाला था, लेकिन ब्राह्मणों को हीन मानकर ही फिर बुद्ध का जन्म क्षत्राणी माता के गर्भ से कराया गया. क्या यह अचरज की बात नहीं कि सनातन धर्म के दशावतारों (वैसे कुल अवतार तो चौबीस माने गए हैं) में केवल दो ही ब्राह्मण हैं. परशुराम और वामन का ही जन्म ब्राह्मण कुल में हुआ था, बाक़ी सभी अवतार भी क्षत्रिय ही हैं. यह सोचने की बात तो है ही.बौद्ध धर्म ने कोई वर्ण-व्यवस्था का विरोध नहीं किया,न ही उसने वर्ण को ख़त्म करने के लिए ही कुछ किया. उसने कुछ किया, तो बस ब्राह्मण की जगह क्षत्रिय को शीर्ष पर बिठा दिया.

मूल तौर पर बौद्ध और जैन धर्म का एक ही लक्ष्य था. वह था सनातन धर्म में आई विकृतियों को हटाना और ब्राह्मणों की सत्ता को जड़ से उखाड़ फेंकना. इसीलिए ब्राह्मणों के ख़िलाफ़ कठोरतम शब्दों का प्रयोग किया गया. *मज्झिमनिकाय* में कहा गया है- वेदपाठ करता हुआ ब्राह्मणों का समूह दरअसल कुत्तों का समूह है, जिसमें हरेक पिछला कुत्ता अगले की पूंछ मुंह में दबाए और आसमान की तरफ़ मुंह कर के ऊं, ऊं का उच्चारण कर रहा है. बौद्धों और ब्राह्मणों के परस्पर विरोध और विद्रोह जैसे व्यापक विषय पर विस्तार से चर्चा अगले अंकों में.

vyalok.chauthiduniya@gmail.com

पिछले अंक में आपने पढ़ा कि प्रतिद्वंद्विता की वजह से एक बार पिटने के बाद इक़बाल ने शराब के धंधे से ख़ुद को अलग कर लिया. आगे क्या हुआ, पढ़िए इस अंक में...

मुसलमान

इससे कोई शायद यह सोचे कि मेरे चाचा को जैकपॉट लगा होगा. बारह सौ रुपये माहवार उसकी तनख्वाह थी और स्वभाव था हातिमताई का. इसी कारण कभी-कभी उनकी तनख्वाह घड़ियाल गोदी से घर तक पहुंचते आधी हो जाती थी. इसके बावजूद हम सुखी थे.

अब मेरी मां को पड़ोसियों के काम करने की ज़रूरत नहीं रही. हमारे घर की गाड़ी पटरी पर चढ़ गई थी. हम दाल-रोटी खा सकते थे, इक़बाल के भाग्य में यह भी नहीं लिखा था.

सांप-सीढ़ी के खेल में आप पासा फेंकिए और सीढ़ी आए तो ऊपर चढ़ जाइए. इक़बाल ने पिछली बार पासा फेंका था तो एक छोटी सीढ़ी चढ़ा था. कुछ दिनों तक उसने यह सुख भोगा था. यहां से आगे बढ़ने पर वह जबड़ा फैलाकर बैठे सांप के मुंह में फंस गया था. वह नीचे धकेल दिया गया था. वह फिर वहीं आ गया था, जहां से उसने शुरुआत की थी.

अलबत्ता, अब वह बालक नहीं रह गया था. खाकी आधी चड्ढी तथा सफ़ेद शर्ट, स्कूल की उसकी यह पोशाक स्कूल के साथ छुट गई थी. वह जवान हो गया था और जवानों को शोभा दे, ऐसे उजले वस्त्र पहनता था. लंबी बांह की सफ़ेद शर्ट और पैंट उसकी पसंदीदा पोशाक थी.

देखने में भले वह पहलवान जैसा न हो, किसी भी रुस्तम को ललकारने जितनी ताक़त वह रखता था. उसका बदन इकहरा पर ठोस था, स्नायु कसे थे, रगों में गरम लहू बह रहा था.

उसका अस्थमा का रोग भी भूतकाल बन गया था. (शराब उतारने का काम उसने तुरंत बंद किया न होता तो निश्चित रूप से यह रोग घर कर कर जाता). स्कूली-जीवन यादें बन गया था. खट्टी-मीठी गोलियां तथा लाल बेर बेचने के उसके दिन पीछे छूट गए थे. उन दिनों की छाया के रूप में कुछ बचा हो तो वह थी भूख.

कॉलेज के पहले महीने उसके पास डोंगरी से चौपाटी तक जाने के लिए बस-भाड़ा भी नहीं था. (हजारीमल सोमानी कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड साइंस यानी कि भवंस कॉलेज जो चौपाटी के पास है) वह रोज़ घर से पैदल जाता और पैदल ही वापस आता.

एक दिन मैं कॉलेज से भूखा-प्यासा घर लौटा... सूफ़ी कह रहा था, और मुझे मालूम हुआ, मेरे घर चूल्हा नहीं जला था. मेरे दोनों छोटे भाई जो अभी स्कूल में पढ़ते थे, भूखे सो गए थे. मां सूनी-सूनी आंखों से मुझे देख रही थी.

इक़बाल (सूफ़ी) को आश्चर्य नहीं हुआ. वह जानता था, देर-सबेर घर में अकाल की यह परिस्थिति पैदा होने वाली है. पर इतनी जल्द पैदा होगी, इसकी कल्पना उसे नहीं थी.

कॉलेज की पुस्तकें रखकर उसने सुराही में से पानी पिया और वापस नीचे आकर नमाज़ पढ़ने मस्ज़िद चला गया. ख़ोजा मस्ज़िद घर के बगल में होने के कारण वह वहीं नमाज़ पढ़ना पसंद करता था. दूसरे, मस्ज़िद का पवित्र वातावरण मन की शांति के लिए उत्तम स्थान था. (हुसेनअली भी जब कोई उलझन महसूस करते तो यहीं आकर बैठते.) इस बात में इक़बाल पिता के नक़्शे-क़दम पर चला था.

इशा की नमाज़ के बाद वह लंबे समय तक मस्ज़िद के खुले सेहन में बैठा रहा, भूखे पेट भविष्य के विषय में सोचता रहा.

रात के दस बजे. उसने लगभग दो घंटे यहां बिताए थे. अभी तक उसे दिशा नहीं सूझी थी. वह खड़ा होकर बाहर आया. रशीद परकार, जो सामने फूलवाले की दुकान पर खड़ा था, दौड़ आया.

क्या साले! मुल्ला बनने का विचार है? इक़बाल की ओर देखकर उसने मज़ाक किया, फिर बताया, तेरे घर गया तो तेरी मां ने बताया कि तू मस्ज़िद में होगा. अंदर देखा तो तू नमाज़ पढ़ रहा था. तभी से तेरी राह देखता यहीं रुका हूं.

(समानांतर परिस्थिति में हु-सेनअली की मुलाक़ात एक परिचित से हुई थी, जिसने लिंक-बाज़ार की नौकरी के बारे में बताया था और दूसरे दिन उन्हें वह नौकरी मिल गई थी.)

डॉक में किनारे पर नावें तथा स्टीम लांच लंगर डाले थी. समुद्र शांत था. जहाजों में जलती लालटेनों के प्रतिबिंब पानी में डोल रहे थे. माहौल में अंधेरा था. बरसात की शुरुआत के दिन थे. करवटें बदलते घने बादल आकाश में दौड़ रहे थे. रशीद आगे बढ़ा, पीछे गैंग चला (इसमें चार भाई भी शामिल थे.) कुछ क़दम चलकर सब जेट्टी तक पहुंचे. नीचे पानी था, नौकाएं थीं, जो पानी की मंद-मंद थपिकयों में डोल रही थीं.

इक़बाल रशीद परकार से परिचित था. वे पांच भाई थे. रशीद उनमें सबसे बड़ा था. वहीं पालागली में स्थित रणमल बिल्डिंग में वे पांचों भाई एक साथ रहते थे और तस्करी के धंधे में इक़बाल से मीलों आगे निकल चुके थे.

रशीद से उसने मुद्दे का सवाल किया, काम क्या है ?

पानी लाना है.

अंडरवर्ल्ड की भाषा में पानी माने शराब. शराब की बड़े पैमाने पर तस्करी के लिए रशीद को एक और भरोसेमंद आदमी की ज़रूरत थी. काम था हेल्पर का (कहा जा सके तो कुली का.) ज़रूरत थी थोड़ी बुद्धि की. इक़बाल ने अब तक अपनी विश्वसनीयता और साहस का सिक्का डोंगरी इलाक़े में जमा दिया था, वर्ना रशीद ख़ुद चलकर उससे संपर्क न साधता.

कितना मिलेगा? इक़बाल ने दूसरा प्रश्न किया.

एक फेरे के दो सौ रुपये.

उसे घर याद आया. भूखी बैठी मां याद आई. भूखे सो गए दोनों भाई याद आए और उसने कह दिया, आधे पैसे एडवांस लूंगा.

आप किसी कुली को रोकें और वह आपसे कहे कि आधा पैसा पेशगी लूंगा तो आपको शायद ताज्जुब होगा.

या आप इसे मज़ाक़ समझकर हंस देंगे.

रशीद ठठाकर हंस पड़ा.

काइकू मज़ाक करता है, साले! कहते हुए उसने इक़बाल को धौल जमाई, सुन कल रात में आना.

एडवांस लिए बिना मैं नहीं आऊंगा.

यार, तू जानता है कि अपने धंधे में...

ठीक है, उसने थोड़ी छूट दी, सौ नहीं तो पचहत्तर दे दे.

अंत में पचास रुपये में समझौता हुआ. रशीद ने उसे दस-दस के पांच नोट थाम दिए.

वह अपने रास्ते चला गया. इक़बाल क़रीब के होटल में गया, वहां से बिरयानी के चार पैकेट बंधवाए और घर आया. उसने देखा तो पूरे दिन की भूखी मां भी सो गई थी.

एक बड़े थाल में बिरयानी के पैकेट खाली कर उसने एक-एक करके सबको जगाया और सबके साथ वह भी खाने बैठा. देखते-देखते बिरयानी का थाल सफ़ाचट हो गया.

चौके में हाथ-मुंह धोकर पोंछा और मां के हाथ में उसने बाक़ी के बचे तीस रुपये रख दिए, कल के ख़र्च के लिए. बस, उसने आगे कुछ नहीं कहा.

उसकी मां को पूछना था, ये रुपये कहां से आए? पर उसने होंठ न खोले. अब तक उसने वास्तविकता को उसके नग्न रूप में स्वीकार कर लिया था. मुंडागली की गटर पर रहते परिवारों को दुर्गंध के बारे में फ़रियाद करने का अधिकार नहीं होता.

दूसरे दिन रात नौ बजे इक़बाल घर से निकलकर पालागली के मुहाने पर आया. दो एंबेसेडर कारें उसकी राह देखती वहां खड़ी थीं. पहली में ड्राइवर सहित छह आदमी बैठे थे, दूसरी में पांच. रशीद ड्राइवर के पास बैठा था. उसने कार का दरवाज़ा खोला. रशीद की बगल में वह अगली सीट पर जम गया. दोनों कारें तुरंत शुरू होकर घड़ियाल गोदी की ओर आगे बढ़ीं. रात के इस समय ट्रैफिक कम होने के कारण बंदरगाह पहुंचने में सिर्फ़ सात मिनट लगे. ड्राइवर को छोड़कर बाक़ी दस लोग बाहर निकल गए. दोनों कारें समय पर वापस यहीं हाज़िर होने वाली थीं.

इक़बाल के लिए यह नया अनुभव था. इस तरह सुनियोजित ढंग से होने वाले काम का नेटवर्क वह यहां समझने वाला था. तस्करी की दुनिया में वह एक क़दम और आगे बढ़ने वाला था. दलदल में वह कमर तक उतरने वाला था. घुटनों तक तो पहले ही फंस चुका था.

डॉक में किनारे पर नावें तथा स्टीम लांच लंगर डाले थी. समुद्र शांत था. जहाजों में जलती लालटेनों के प्रतिबिंब पानी में डोल रहे थे. माहौल में अंधेरा था. बरसात की शुरुआत के दिन थे. करवटें बदलते घने बादल आकाश में दौड़ रहे थे.

रशीद आगे बढ़ा, पीछे गैंग चला (इसमें चार भाई भी शामिल थे.) कुछ क़दम चलकर सब जेट्टी तक पहुंचे. नीचे पानी था, नौकाएं थीं, पानी की मंद-मंद थपिकयों में डोल रही थीं.

एक स्टीम लांच में से लकड़ी की फल्ली सरककर ऊपर आई. रशीद एक तरफ़ खड़ा हो गया. एक के पीछे एक गैंग के सदस्य सावधानी से फल्ली पर क़दम रखते लांच में उतर गए. अंत में रशीद आया और फल्ली खींच ली गई. घरघराहट के साथ लांच शुरू होकर अंधेरे में आगे बढ़ गई.

(अगले अंक में जारी)

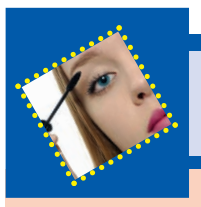

नोकिया लाया एन 86

मोबाइल यूजर्स के लिए अच्छी ख़बर यह है कि नोकिया ने अपना बहुप्रतिक्षित मोबाइल एन 86 को भारत में लांच कर दिया है. इसका महत्वपूर्ण फीचर मैमोरी के साथ कैमरा और उसकी स्क्रीन है. वैसे तो एन सीरीज़ के एन 97 की लांचिंग के साथ ही नोकिया ने अपने इरादे को स्पष्ट कर दिया था कि वह आगे चल कर टच स्क्रीन और कैमरा वाले मोबाइल फोन को लांच कर लोगों को चौंकाने वाला है. इस 8 एमपी शीर्ष मोबाइल, नोकिया एन 86 की तुलना सैमसंग इनोवा8 और सोनी एरीक्सन सी905 से की जा सकती हैं. दरअसल नोकिया ने बाज़ार में इसे इन्हीं के मुक़ाबले में उतारा है. इसलिए उन्हीं फीचर्स को ध्यान में रखकर इसे बनाया गया है. भारत में हालांकि यह अब लांच हुआ है, लेकिन अंतरराष्ट्रीय स्तर पर इसका लांच जून के पहले सप्ताहे में ही कर दिया गया था. नोकिया 86 में 8 जीबी मैमोरी इनबिल्ट है. कंपैटिबल माइक्रो एसडी कार्ड से आप इसकी मैमोरी क्षमता 16 जीबी तक बढ़ा सकते हैं. इसका सबसे महत्वपूर्ण फीचर कैर्ल जेस्स टेसेर लेंस से लैस एक 8 एमपी का कैमरा है. यह नोकिया का 8एमपी श्रृंखला का पहला मोबाइल है. 3.9 घंटे टॉक टाइम के साथ 3जी और जीएसएम नेटवर्क पर 6.3 घंटे विल्स नोकिया एन 86 द्वारा यूजर्स को उपलब्ध कराए जा रहे हैं. क़ीमत 27,359 रुपये रखी गई है.

अब माइकल जैक्सन का वायरस

पॉप स्टार माइकल जैक्सन की लोकप्रियता को भुनाने में कई लोग लगे हुए हैं. रिश्तेदार से लेकर मित्र और प्रमोटर तक. लेकिन इसमें कंप्यूटरों तक वायरस पहुंचाने वाले भी शामिल हो गए हैं. इसलिए कि लोग इन दिनों माइकल जैक्सन से संबंधित चीज़ों को धड़ाधड़ डाउनलोड कर रहे हैं. वायरस पहुंचाने वालों के लिए इससे मुफीद बात और क्या हो सकती है. लिहाजा, जैक्सन के नाम पर वे भी लग गए हैं. यही कारण है कि इन दिनों माइकल जैक्सन के नाम का एक वायरस लोगों के कंप्यूटर को करप्ट कर रहा है. ख़बरों के मुताबिक जैक्सन के नाम के वायरस को कंप्यूटर तक ई-मेल के ज़रिए पहुंचाया जा रहा है. दरअसल इस ई-मेल के साथ एक जिप-फाइल भेजी जा रही है, जिसे डाउनलोड करते ही लोगों का कंप्यूटर वायरस से संक्रमित हो रहा है. यानी माइकल जैक्सन के प्रशंसकों के लिए यह दोहरा सदमा है. एक तो उनका पसंदीदा पॉप स्टार अब इस दुनिया में नहीं रहा, दूसरे उसके नाम पर उनके कंप्यूटरों को करप्ट भी किया जा रहा है. सोफोज नाम की कंप्यूटर कंपनी के सीनियर तकनीकी सहयोगी ग्राहम क्यूले के मुताबिक यह ई-मेल सारा *माइकल जैक्सन डॉट कॉम* साइट के ज़रिए लोगों के कंप्यूटर तक पहुंच रहा है.

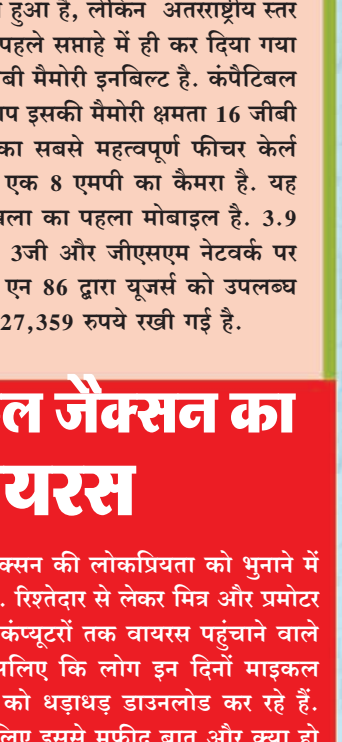

दुनिया

प्रतिबंधित हो गए बिना आईएमईआई नंबर वाले मोबाइल

जिनके पास बिना आईएमईआई नंबर वाले मोबाइल फोन अब भी हैं, वे उसे शोपीस बना कर ही रख सकते हैं. उस फोन से अब बात नहीं हो सकती है. इसलिए कि पूर्व सूचना के अनुसार कार्रवाई करते हुए सरकार ने ऐसे मोबाइल फोनों पर प्रतिबंध लगा दिया है. ऐसा सुरक्षा कारणों से किया गया है. वैसे सरकार ने आईएमईआई नंबर लेने के लिए 30 जून तक का समय दिया था. जिन्होंने इस छूट का फ़ायदा नहीं उठाया, वे अब ऐसे मोबाइलों से अपने बच्चे को बहला सकते हैं.

बिना आईएमईआई नंबर वाले मोबाइल फोन देश की सुरक्षा के लिहाज़ से काफी ख़तरनाक साबित हो रहे थे. इसीलिए पहली जुलाई से सरकार ने ऐसे मोबाइल फोनों के आयात पर ही प्रतिबंध लगा दिया. ग़ौरतलब है कि 15 अंकों का यह नंबर मोबाइल फोन की बैटरी पर लिखा होता है. वर्तमान समय में भारतीय बाज़ार में क़रीब 25 मिलियन मोबाइल बिना आईएमईआई नंबर के हैं, जो देश की सुरक्षा के लिए ठीक नहीं है. देखा जा रहा था कि आतंकवादी अपने नापाक इरादे में कामयाब होने के लिए बिना आईएमईआई नंबर वाले फोनों का इस्तेमाल कर रहे हैं. ऐसे में इस पर प्रतिबंध लगाना अनिवार्य हो गया था. वैसे यह क़दम चीन और ताईवान से आने वाले मोबाइल फोनों को रोकने के लिए ही उठाया गया है. इसलिए कि इन दोनों से आयातित फोन देश भर में चोरी छिपे धड़ल्ले से बेचे जा रहे हैं.

अब ऑपरेटर्स बिना आईएमईआई नंबर वाले मोबाइल फोन को पहचानकर उसे नेटवर्क तक पहुंचने से रोक सकता है. कुल मिलाकर अब सिर्फ़ सही मोबाइल को ही नेटवर्क तक पहुंचने के लिए स्वीकृत किया जाएगा और अन्य मोबाइल के ग़ैरक़ानूनी उपयोग को हर हाल में रोका जाएगा.

प्रतिबंध जैसा कठोर क़दम उठाने से पहले दूरसंचार विभाग ऑपरेटरों को बिना आईएमईआई नंबर वाले मोबाइल फोन को डिसकनेक्ट करने के लिए चेतावनी दे चुका था. कहा गया था कि जिनके मोबाइल फोन में आईएमईआई नंबर नहीं हैं, वे मोबाइल सहायता केंद्र से 30 जून तक इस नंबर को प्राप्त कर लें. इसके लिए पूरे देश में 1600 मोबाइल सहायता केंद्र स्थापित किए गए थे.

क्या है आईएमईआई

इंटरनेशनल मोबाइल इक्यूपमेंट आईडेंटिटी (आईएमईआई) एक यूनिक नंबर है, जो सभी जीएसएम, डब्ल्यूसीडीएमए और आईडीईएन मोबाइल फोन के साथ ही सैटेलाइन फोन में होता है. वैसे यह नंबर मोबाइल की बैटरी पर लिखा होता है. इसे आप अपने मोबाइल के स्क्रीन पर भी देख सकते हैं. इसके लिए आपको अपने मोबाइल पर यह *#06# नंबर डायल करना होगा. आईएमईआई नंबर का उपयोग जीएसएम नेटवर्क द्वारा वैध मोबाइल को पहचानने के लिए किया जाता है. यह चोरी वाले फोन को नेटवर्क तक पहुंचने से रोक सकता है. इसे इससे समझा जा सकता है किअगर किसी का मोबाइल फोन खो जाए, तब उसका मालिक नेटवर्क प्रोवाइडर को आईएमईआई नंबर का उपयोग कर बैन लगाने के लिए कह सकता है. इससे उसका फोन बेकार हो जाएगा. सिम बदलने पर भी उस सेट का इस्तेमाल करने वाले का पता लगाया जा सकता है. आईएमईआई नंबर का उपयोग सिर्फ़ मोबाइल को पहचानने के लिए किया जाता है. इसका उपभोक्ता से सीधे या परोक्ष संबंध नहीं होता है. बल्कि उपभोक्ता की पहचान आईएमएसआई नंबर के ट्रांसमिशन से होता है, जो सिम कार्ड में स्टोर रहता है. इसे किसी भी हैंडसेट पर हस्तांतरित किया जा सकता है. हालांकि उपभोक्ता बहुत से नेटवर्क और सुरक्षा फीचर को मोबाइल के अनुसार सक्रिय करते रहते हैं.

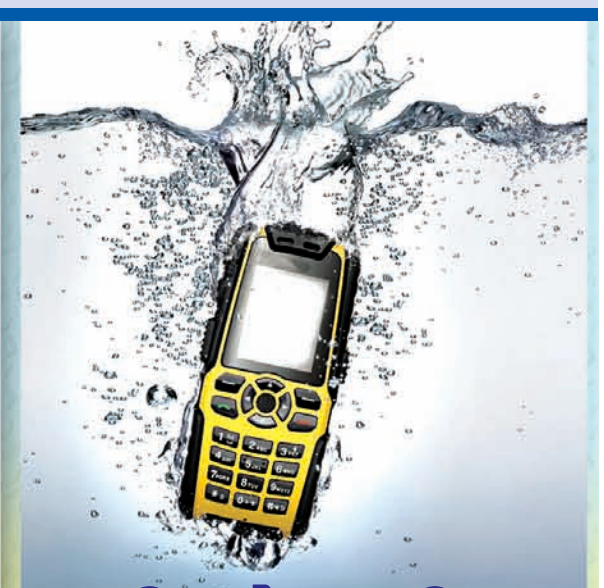

पानी को पानी कर देने वाला मोबाइल

हल्की बारिश भी हुई तो सब अपने मोबाइल फोन को लेकर चिंतित हो उठते हैं-कहीं भींग कर ख़राब न हो जाए. लेकिन घबराने की कोई ज़रूरत नहीं है. इसलिए कि भारत में भी ऐसा मोबाइल आ गया है, भींगने की बात ही छोड़िए, डूबने पर भी ख़राब नहीं होगा. अब तक ऐसे दृश्य फिल्मों में या कल्पना में ही देखने को मिलते थे. पर अब यह हक़ीक़त है. ऐसा चमत्कार कर दिखाया है सैमसंग ने. इस मामले में सोनी एरिक्सन, नोकिया, एलजी, टाटा आदि कंपनियों को पीछे छोड़ सैमसंग आगे निकल गई है. उसने भारतीय बाज़ार में एक ऐसा मोबाइल लांच किया है जो पानी में ग़लती से डूबने पर ख़राब नहीं होता है. अगर इस फोन को एक मीटर गहरे पानी में 30 मिनट के लिए छोड़ दिया जाए, तब भी इस पर कोई असर नहीं पड़ेगा और वह काम करता ही रहेगा. यह अच्छी खासी उठापटक भी झेल लेता है. फोन की केंसिग एंटी शॉक यूरेथेन मटीरियल की वजह से यह गिरने पर या धूल या पानी से ख़राब नहीं होता. एक बात ओर है. वह यह कि बरसात, नमी या कोहरे का भी इस पर कोई असर नहीं पड़ेगा. बहुत गर्म या ठंडे मौसम के लिए भी यह फोन बिल्कुल उपयुक्त है. इन सभी ख़ासियत की वजह से ही तो इस फोन को आउडटोर फोन कहा जाता है. इतनी सारी ख़ासियत होने के अलावा इसमें लाउड एक्सटर्नल स्पीकर है और फ्लैश लाइट भी हैं. साथ ही 1.3 मेगापिक्सल कैमरा, कैमकॉर्डर, एफएम रेडियो, म्यूज़िक प्लेयर और 8जीबी तक एक्सपेंडेबल मेमोरी, ब्लूटुथ और यूएसबी सपोर्ट भी हैं. बाज़ार में यह फोन केवल लाल और हरे रंग में है. सैमसंग कंपनी ने दावा किया है ऐसा फोन भारत में पहली बार आया है. इसकी क़ीमत 7,030 रुपये रखी गई है, यानी आपकी जेब के अनुकूल. तो देर किस बात की, उठिए और मानसून का मज़ा बढ़ाने के लिए सैमसंग का यह मोबाइल ले आइए.

अब मुर्ग़ी के बग़ैर भी सिकेंगे अंडे

बिमलेश झा

विकास का चक्र अपनी रफ़्तार से घूम रहा है. समय के साथ हर क्षेत्र में तकनीक का प्रयोग ज़्यादा से ज़्यादा हो रहा है. हो भी क्यों नहीं, आख़िर लोग अधिक से अधिक मुनाफ़ा जो कमाना चाहते हैं. ऐसे में मुर्ग़ीपालन क्यों पीछे रहे. मुर्ग़ी पालन व्यवसाय से जुड़े लोग भी समय, पैसा और श्रम की बचत के लिए तकनीक का प्रयोग अधिक से अधिक करना चाहते हैं. ताकि अधिक लाभ अर्जित किया जा सके. ऐसे में इस व्यवसाय से जुड़े लोगों के लिए अच्छी ख़बर यह है कि वे अब इंक्युबेटर्स मशीन के ज़रिए अंडा और चूजे को पूरी तरह सुरक्षित रख सकते हैं. इसके लिए उन्हें मेहनत भी कम करनी पड़ेगी.

ग़ौरतलब है कि आज़ादी के बाद से मुर्ग़ी पालन क्षेत्र में काफी विकास हुआ है. ख़ासतौर से पिछले दो दशकों. इस दौरान भारतीय मुर्ग़ी पालन क्षेत्र में 15 से 20 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है. पहले मुर्ग़ी पालन व्यवसाय से जुड़े लोगों को अंडा और चूजे को लेकर काफी परेशानियों का सामना करना पड़ता था.

अंडे के रखरखाव से लेकर अन्य पक्षियों से चूजे को बचाने तक में उन्हें पसीने-पसीने होना पड़ता था. इसलिए उनकी देखरेख के लिए हमेशा काफी लोगों की ज़रूरत पड़ती थी, लेकिन इस समस्या का समाधान अब हो गया है. अब उन्हें और परेशान होने की ज़रूरत नहीं है. इसलिए कि उनकी आवश्यकता को देखते हुए वीजे ग्रुप ने वीजे इंक्युबेटर्स एंड हैचर्स नाम से एक मशीन बनाई है. यह निश्चित रूप से मुर्ग़ी पालन व्यवसाय से जुड़े लोगों के लिए फ़ायदेमंद साबित होगा. इससे तीन महत्वपूर्ण चीज़ें जैसे समय, पैसा और श्रम की बचत होगी. साथ ही अंडा और चूजा भी सुरक्षित रहेगा.

वैसे तो एक इंक्युबेटर्स में सेटर और हैचर दो पार्ट हो भी सकते हैं और नहीं भी. अगर इंक्युबेटर्स में दो पार्ट नहीं हैं तो उसके सेटर में जहां आप 14,112 अंडे रख सकते हैं, वहीं हैचर में 9,408 अंडे. अगर सेटर और हैचर दोनों एक इंक्युबेटर्स में हैं तो अंडा रखने की क्षमता कम हो सकती है. जब मुर्ग़ी अंडा देती है, तो उसके तुरंत बाद अंडे को सेटर में रख दिया जाता है. ताकि वह सुरक्षित रह सके. सेटर में रखे अंडे को वैसा ही टेंपरेचर और वातावरण मिलता है, जो उसे मुर्ग़ी द्वारा सेंकने के दौरान मिलता है. इतना ही नहीं, यह हर घंटे में एक बार ऊपर-नीचे होता है. इसके तीन दिन बाद सेटर से अंडे को निकालकर हैचर में रख दिया जाता है. हैचर में ही अंडे से चूजा बाहर निकलता है. इसमें चूजा पूरी तरह सुरक्षित रहता है. इसके बाद चूजे की देखरेख करने की भी ज़रूरत नहीं पड़ती है.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

मेकअप उतारने के तरीक़े

जब हम पार्टी में जाते हैं तो बड़ी ही तसल्ली और आराम से मेकअप करते हैं. लेकिन जब घर लौटते हैं तो मेकअप उतारने में आलस्य करने लगते हैं. बोरियत महसूस होने लगती है. मेकअप उतारना एक ऐसा काम है, जिसमें प्रायः हर किसी को पसीना आने लगता है. जबकि त्वचा की सुरक्षा के लिए मेकअप उतारना बेहद ज़रूरी होता है. इसलिए कि कॉस्मेटिक्स में मौजूद कैमिकल हमारी त्वचा को नुक़सान पहुंचा सकते हैं. अगर मेकअप नहीं उतारेंगे तो त्वचा ख़राब होने का डर रहता है. मेकअप हटाने के लिए बाज़ार में कई कंपनियों के रिमूवर आ गए हैं. इनसे आप आसानी से अपना मेकअप उतार सकती हैं. यदि कभी आपके पास रिमूवर ख़त्म हो जाता है या नहीं हैं तो घबराने की ज़रूरत नहीं है. आप घरेलू चीज़ों का उपयोग करके भी मेकअप उतार सकती हैं. घरेलू मेकअप रिमूवर के तौर पर आप कच्चा दूध, बादाम का तेल, ऑलिव ऑयल आदि का उपयोग कर सकती हैं. जब मेकअप उतारने या हटाने की बारी आती है, तो सबसे पहले इसकी शुरुआत आंखों से करनी चाहिए. आंखों के आस-पास व पलकों पर रूई के फोहे पर आई मेकअप रिमूवर लेकर उसे लगाएं और हल्के हाथों से मसाज करें. फिर साफ रूई लेकर रिमूवर को पोछें. आंखों के बाद चेहरे का मेकअप उतारने के लिए आप क्लीजिंग मिल्क का प्रयोग करें. क्लीजिंग मिल्क को रूई की सहायता से पूर चेहरे पर लगाएं, फिर कुछ देर बाद चेहरे को ठंडे पानी से धो लें. अब चेहरे पर हल्के हाथों से मॉश्चराइज़र लगाएं. होठों का मेकअप उतारने के लिए कोल्डक्रीम का इस्तेमाल करना सबसे अच्छा रहता है. इसके लिए आप रूई पर थोड़ी-सी कोल्ड क्रीम लेकर होठों पर लगी पूरी लिपस्टिक उतर जाए तब होंठों पर मॉश्चराइज़र लगाएं. इससे आपके होंठ कोमल बनेंगे.

आसान है बालों से रूसी हटाना

बालों को सुंदर के साथ-साथ स्वस्थ रखना बहुत ज़रूरी होता है. अगर सिर में रूसी हो जाए तो बाल सुंदर नहीं दिखते हैं. वैसे रूसी होना आम समस्या है. इससे प्रायः हर कोई परेशान रहता है. जब रूसी हद से ज़्यादा बढ़ जाती है तो वह कपड़ों पर भी गिरने लगती है. इसके कारण दूसरों के सामने शर्मिंदा भी होना पड़ जाता है. आजकल विज्ञापनों में कई कंपनियों के दिखाए जाने वाले महंगे और रूसी हटाने का दावा करने वाले शैंपुओं से हमारे रूसी तो नहीं जाती, लेकिन बचे-खुचे बाल ज़रूर चले जाते हैं. यानी रूसी होने से नुक़सान ही नुक़सान है. इससे बाल तक झड़ने लग जाते हैं. उनका बढ़ना प्रभावित हो जाता है.

रूसी के कारण : बालों में तेल नहीं लगाना, कई दिनों तक सिर नहीं धोना, सिर की त्वचा में संक्रमण होना आदि.

उपचार : वैसे तो बाज़ार में रूसी हटाने के लिए कई तरह के और सस्ते-महंगे प्रोडक्ट उपलब्ध हैं, लेकिन घरेलू उपचारों से भी रूसी को हटाया जा सकता है.

रूसी हटाने के उपाय

1. आंवला, रीठा, शिकाकाई तीनों की बराबर मात्रा लेकर इससे तीन गुणा पानी में ख़ूब उबालें. जब पानी पहले से आधा हो जाए, तो उस पानी को छानकर शैंपू के रूप में इस्तेमाल करें.
2. केस्टर ऑयल और जैतून का तेल दोनों को बराबर मात्रा में लेकर गुनगुना करके बालों की जड़ों में लगाएं और मसाज करें.
3. भोजन में सलाद, फल व हरी सब्जियों को अवश्य शामिल करें.
4. जैतून के तेल में शहद व दालचीनी पाउडर मिलाकर सिर की त्वचा पर लगाने से रूसी व बाल झड़ने की समस्या दूर हो जाती है.
5. रात को तेल से मसाज करने के बाद सुबह एक चम्मच आंवला पाउडर में एक अंडा मिलाकर बालों की जड़ों में आधे या एक घंटे लगाकर छोड़ दें. इसके बाद बाल धो लें.
6. मेथीदाना हमारे पेट व बाल दोनों के लिए लाभकारी होता है. रात को मेथीदाना पानी में भिगोकर सुबह उसे पीस लें. फिर उस पेस्ट को बालों की जड़ों में अच्छी तरह लगाकर कुछ देर बाद बाल धो लें. इससे रूसी तो दूर होती ही है, बाल चमकदार व काले भी बन जाते हैं.
7. जैतून या नारियल के तेल को थोड़ा गर्म करके उसमें नींबू का थोड़ा सा रस डालकर लगाने से भी रूसी दूर होती है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

टी-20 के आगे घरेलू क्रिकेट की ऐसी-तैसी

सुनील गावस्कर को तमाम मुद्दे उठाने के लिए सीसीआई से बेहतर जगह नहीं मिल सकती थी. मुंबई में सीसीआई का नाम क्रिकेट की परंपरा के लिए जाना जाता है. परंपरा को बरकरार रखना इस जगह की ख़ासियत में शुमार होता है. लेकिन यहां देश के सबसे बड़े सलामी बल्लेबाज ने कुछ ऐसी बातें कहीं, जो सोचने पर मजबूर करती हैं. कुछ ऐसी भी, जो ये सवाल उठाती हैं कि क्या वाकई गावस्कर ऐसा ही सोचते हैं? या कहीं ऐसा तो नहीं कि प्रोफेशनल मजबूरी के चलते उन्होंने कुछ ऐसा कहा हो? लेकिन वह दिन ऐसा ज़रूर था, जिससे देश के हर क्रिकेट प्रेमी को जुड़ना चाहिए. गावस्कर ने उस दिन मुद्दा उठाया देश के लिए खेलने का. उन्होंने कहा कि युवा खिलाड़ी देश के बजाय अब आईपीएल खेलने पर ध्यान देंगे, क्योंकि वहां चकाचौंध ज़्यादा दिखाई दे रही है. यह मुद्दा वाकई सोचने पर मजबूर करता है. लेकिन वह एक बात और कह गए. उनका कहना था कि देवधर ट्रॉफी बंद होने से कोई ख़ास फ़र्क़ नहीं पड़ेगा, क्योंकि देश में तमाम और घरेलू टूर्नामेंट होते हैं.

इन दोनों मुद्दों को एक साथ देखे जाने की ज़रूरत है. आईपीएल वाकई घरेलू क्रिकेट के लिए ख़तरा बनकर आया है क्या, यह देखने की ज़रूरत है. इसमें कोई शक़ नहीं कि आईपीएल युवा क्रिकेटरों के लिए कुबेर का ख़ज़ाना साबित हुआ है. याद है पिछले साल डेक्कन चार्जर्स के लिए खेले विजय कुमार की कहानी. विजय उस टीम में आने से पहले फाइव स्टार का मतलब चॉकलेट समझते थे. उन्हें नहीं पता था कि फाइव स्टार होटल क्या होता है. उन्होंने कहा था कि इस होटल का बाथरूम इतना बड़ा है कि मेरे दो घर इसमें आ जाएं. ऐसे घर से वह निकले थे. अचानक फेम यानी शोहरत मिली. मक़बूलियत मिली. लेकिन घरेलू स्तर पर आज वह कहां हैं?

ऐसे तमाम क्रिकेटर मिलेंगे, जो अचानक आईपीएल में दिखाई दिए. उसके बाद वे कहां हैं, कोई नहीं जानता. सवाल यही है कि क्या कुछ खिलाड़ी आईपीएल से आईपीएल तक ही दिखाई देंगे. या देश का घरेलू क्रिकेट ऐसा होगा, जहां आईपीएल की चकाचौंध के बाद खिलाड़ी को बेहतर बनाने की कोशिशें हों? सवाल यह भी है कि अगर कोशिशें होती भी हैं, तो क्या वे कामयाब होंगी? क्योंकि जैसा गावस्कर ने कहा, तब तक तो पैसों का ऐसा चश्मा चढ़ चुका होगा, जिसमें आईपीएल के अलावा सब बड़े छोटे और छिछले नज़र आ रहे होंगे.

गावस्कर ने मुद्दा आईपीएल और देश का उठाया था. लेकिन ज़्यादा बड़ा मुद्दा आईपीएल और राज्य का है. दिल्ली के कई क्रिकेट कोच इस बात की शिकायत करते नज़र आते हैं कि अब हर बच्चे को टी-20 खेलना है. और, उनके मां-बाप एक साल में आईपीएल खिला देने की उम्मीद लिए आते हैं. उन्हें इससे कोई लेना-देना नहीं कि बच्चे के बेसिक्स कैसे हैं. उन्हें अब राहुल द्रविड़ नहीं बनना. उन्हें सुरेश रैना बनना है, जिनकी कलई ज़रा सी उछाल भरी पिच पर अपनी ख़राब तकनीक की वजह से खुल जाती है. लेकिन इससे क्या, जब पिच माकूल हो, तो आईपीएल जितने रन भी तो बनते हैं. शोहरत वहां है ही. पैसे इतने कि कई पुश्तें खा सकें. ऐसे में क्यों घरेलू क्रिकेट में मेहनत करनी?

यह भी जान लेना ज़रूरी है कि भारत में घरेलू क्रिकेट का ढांचा है कैसा. यक़ीनन मज़बूत दिखाई देता है. लेकिन एक घरेलू क्रिकेट मैच में सिर्फ़ दो क्रिकेट टीमें, चंद अधिकारी, कुछेक पत्रकार, जो मैच कवर करते हैं और खिलाड़ियों के दो-एक दोस्त या रिश्तेदार मौजूद होते हैं. इनके अलावा कुछ कुत्ते ज़रूर धूप सेंकते हुए नज़र आ जाएंगे. इस माहौल के बीच आईपीएल की चकाचौंध है. ऐसे कई खिलाड़ी, जो अपने राज्य की संभावितों में भी नहीं आ सकते, वे आईपीएल खेल गए. उन्हें बेहतर रक़म भी मिल गई. वे क्यों घरेलू क्रिकेट झेलेंगे, जहां अब भी रुकने के लिए कई बार बहुत ही छोटे होटल होते हैं? वहां टीवी चैनल्स नहीं होते. डांस करती चीयर गर्ल्स नहीं होतीं. सुबह अख़बारों की सुर्खियों में नाम नहीं होता. किसी किनारे स्कोर छपा होता है. और, पैसे तो कम मिलते ही हैं. यह घरेलू क्रिकेट का ख़तरा है, जो आईपीएल के मार्फ़त आया है. लेकिन इसके लिए ज़िम्मेदार बीसीसीआई ही है.

गावस्कर ने मुद्दा आईपीएल और देश का उठाया था. लेकिन ज़्यादा बड़ा मुद्दा आईपीएल और राज्य का है. दिल्ली के कई क्रिकेट कोच इस बात की शिकायत करते नज़र आते हैं कि अब हर बच्चे को टी-20 खेलना है. और, उनके मां-बाप एक साल में आईपीएल खिला देने की उम्मीद लिए आते हैं. उन्हें इससे कोई लेना-देना नहीं कि बच्चे के बेसिक्स कैसे हैं. उन्हें अब राहुल द्रविड़ नहीं बनना.

देवधर ट्रॉफी के लिए चंद दिन निकालना उसके लिए मुमकिन नहीं हो पाया. लेकिन आईपीएल में जब चंद दिन कम करने की बात आई, तो पूरा बीसीसीआई केंद्र सरकार से टकराने को तैयार हो गया. सिर्फ़ इसलिए कि देवधर ट्रॉफी का व्यावसायीकरण नहीं हो पाया है. वह कभी कमाऊ पूत नहीं बन पाया. तभी उसकी जगह टी-20 के टूर्नामेंट ने ले ली. सवाल यही उठता है कि आज तो सिर्फ़ एक टूर्नामेंट की बात है, लेकिन क्या यह जल्द ही बाक़ी जगहों पर लागू नहीं होगा? सिर्फ़ इसी मुल्क में नहीं, पूरी दुनिया में क्रिकेट का समय कम करने की कोशिश हो रही है. तभी चार दिन के टेस्ट की बात की गई. दिलचस्प है कि आईसीसी में भी सलाह देने के नाम पर गावस्कर का ही नाम आता है. चार दिन के टेस्ट का मतलब है कि आप अब दोनों पारियां नहीं खेलने देना चाहते. एक-एक पारी, और फिर शायद सीमित ओवर. लेकिन क्या यह सिलसिला यहीं थम जाएगा? क्या यह फिर पहली और दूसरी पारी में ओवर तय होने तक नहीं आएगा? क्या फिर टेस्ट क्रिकेट सिकुड़ता नहीं जाएगा? कोशिश ही वही है.

देवधर ट्रॉफी बंद करना महज़ एक टूर्नामेंट ख़त्म करना नहीं है. यह इस सोच का प्रतीक है, जहां क्रिकेट को छोटे से छोटा बनाया जा रहा है. आज दिलीप या रणजी ट्रॉफी पर ख़तरा नज़र नहीं आता. लेकिन क्या अगले चार-पांच साल में भी ऐसा ही होगा. ख़ासतौर पर अगर आईपीएल की मक़बूलियत बनी रही, तो? तब क्या गावस्कर यह कहेंगे कि रणजी ट्रॉफी की भी ज़रूरत नहीं. बहुत से टूर्नामेंट हैं, लेकिन तब टूर्नामेंट के नाम पर क्या बचेगा? सिर्फ़ टी-20? सोचिएगा ज़रूर.

राकेश चतुर्वेदी

feedback.chauthiduniya@gmail.com

फेडरर ग्रैंड स्लैम के शिखर पर

फोटो-*पीटीआई*

रिवस खिलाड़ी रोजर फेडरर और अमेरिकी पीट सैंप्रास के बीच महानता को लेकर अब शायद ही किसी के पास किंतु-परंतु रह गया हो. बीते रविवार को लंदन की हरी-घसियाली पट्टी पर विश्व टेनिस में दोनों के साथ इतिहास जुड़ गया. 14 ग्रैंड स्लैम जीतने वाले सैंप्रास इतिहास में समा गए, तो उनका रिकार्ड तोड़ फेडरर ने नई इबारत लिख दी. इस ऐतिहासिक क्षण के गवाह दोनों बने. रोजर सेंटर कोर्ट में थे, तो सैंप्रास दर्शक दीर्घा में. अपने खेल से फेडरर ने दिखाया कि टेनिस का महान खिलाड़ी कोई कैसे बनता है. पूरे टूर्नामेंट में उन्होंने एक बार फिर अपनी संघर्ष क्षमता, धैर्य और मानसिक दृढ़ता का लोहा मनवा लिया. कितनी अजीब बात है कि राफेल नडाल के उदय के साथ जिस खिलाड़ी को लोगों ने ख़त्म हुआ मान लिया था, उसने पूरी दुनिया को ग़लत ठहरा दिया. वह भी अपनी सदाबहार लजीली मुस्कान के साथ. उन्होंने लगातार ताक़त का खेल बन रहे टेनिस में हुनर का जादू फिर बिखेर दिया.

फाइनल में अमेरिकी खिलाड़ी रॉडिक को 3-2 से हराते ही उनके विंबलडन ख़िताबों की संख्या छह हो गई. साथ ही वह रैंकिंग में भी फिर से टॉप पर आ गए. फेडरर और रॉडिक के बीच ऐसा यादगार मुक़ाबला खेला गया, जो टेनिस प्रेमी वर्षों याद रखेंगे. फेडरर ने शुरुआती सेट 5-7 से हारने के बाद अगले दो सेट टाइब्रैक में 7-6, 7-6 से जीते. लेकिन अमेरिकी खिलाड़ी ने चौथा सेट 6-3 से जीतकर मुक़ाबले में 2-2 की बराबरी कर ली और मैच को निर्णायक सेट में खींच दिया. निर्णायक सेट में दोनों खिलाड़ियों ने सांसों को रोक देने वाला रोमांचक संघर्ष किया. किसी की सर्विस नहीं टूट रही थी और मुक़ाबला गेम दर गेम आगे बढ़ता चला जा रहा था. आख़िरकार 30वें गेम में फेडरर ने मैच में पहली बार रॉडिक की सर्विस तोड़ी और ख़िताब अपने नाम करने के साथ ही 15 ग्रैंड स्लैम जीतने का नया विश्व रिकॉर्ड बना लिया.

रॉडिक और फेडरर के बीच यह 21वां मुक़ाबला था. इससे पहले खेले गए बीस मुक़ाबलों में वह 18 बार रॉडिक को हरा चुके थे. रॉडिक के लिए विंबडलन के फाइनल में फेडरर से हारने का यह तीसरा मौका था. इससे पहले 2004 और 2005 के विंबलडन में भी फेडरर उन्हें हरा चुके थे. इसके अलावा 2006 के अमेरिकी ओपन के फाइनल में भी रॉडिक उनसे हार चुके हैं. फेडरर विंबलडन के फाइनल में लगातार सातवीं बार और कुल मिलाकर 21वीं बार किसी ग्रैंड स्लैम के ख़िताबी राउंड में पहुंचे हैं. वैसे विंवडलन में इस बार एक और इतिहास बनते-बनते रह गया. महिला सिंगल्स में सेरेना ने अपनी बड़ी बहन वीनस विलियम्स को लगातार तीसरा विंबलडन जीतने नहीं दिया. अगर वीनस ऐसा कर जातीं तो वह स्टेफी ग्राफ की बराबरी कर लेतीं. वैसे विंबडलन में अबकी रूसी सुंदरियों का जादू नहीं चला. विलियम्स बहनों ने सिंगल्स और डबल्स दोनों वर्गों में ख़िताब जीत लिया.

क्रिकेट में भारत ने फिर दिखाया दम

धोनी के धुरंधरों ने बरसाती मौसम में वेस्ट इंडीज को वाकई धो दिया. चार एक दिवसीय मैचों की सीरीज़ 2-1 से जीत कर अपनी क्रिकेट टीम ने ट्वेंटी-20 विश्वकप के सुपर आठ से ही बाहर होने के ग़म को भी कम कर दिया. ऐसा करना ज़रूरी भी था, क्योंकि अगर यह सीरीज़ भी हार जाते तो मीडिया द्वारा प्रायोजित धरना-प्रदर्शन सभी क्रिकेटरों के घर के सामने होना तय था.

कैरिबियाई सरज़मीं पर भारत ने दूसरी बार वन-डे सीरीज़ जीती है. इससे पहले 2002 में सौरभ गांगुली की कप्तानी में पांच मैचों की सीरीज़ हमने 2-1 से जीती थी. इस सीरीज़ की तरह उस पर भी बारिश छाई रही. बारिश के कारण अबकी आख़िरी वन डे ही नहीं पूरा हो पाया, जबकि 2002 में दो मैच रद्द करने पड़े थे. वैसे भारतीय टीम ने वेस्ट इंडीज़ से अब तक कुल पांच वन डे सीरीज़ जीत चुकी है. इस बार जीतने का मज़ा पहले से कुछ अलग और ख़ास इसलिए है कि अबकी टीम नए खिलाड़ियों की थी. सचिन, सहवाग और ज़हीर ख़ान जैसे क्रिकेटरों के बग़ैर और ट्वेंटी-20 विश्व कप में शर्मनाक प्रदर्शन के कारण गिरे हुए मनोबल के साथ वहां गई थी. इस टीम में अधिकतर खिलाड़ी ऐसे थे, जो खेलने के लिए पहली बार वेस्ट इंडीज़ गए थे. भारत ने सबीना पार्क किंग्सटन में खेला गया पहला मैच 20 रन से जीता था, लेकिन दूसरे मैच में उसे आठ विकेट की करारी हार झेलनी पड़ी थी. उछाल लेती पिच पर भारतीय बल्लेबाज जिस तरह ता-ता थैया करते नज़र आए थे, उससे तो सीरीज़ हारना तय ही माना जाने लगा था. लेकिन बारिश से प्रभावित तीसरा मैच डकवर्थ-लुईस पद्धति से छह विकेट से जीतकर भारत ने सीरीज़ में 2-1 की बढ़त बना ली, जो अंत तक रही.

कप्तान महेंद्र सिंह धोनी के लिए यह सीरीज़ बहुत फ़ायदेमंद साबित हुई. धोनी ने चार मैचों में 91 के औसत से 182 रन बनाए. वह मैन ऑफ द सीरीज़ रहे. इसके अलावा तीसरे मैच में बार-बार संशोधित होते लक्ष्य के दबाव के बीच 34 गेंद पर 46 रन की मैच जिताऊ पारी खेलने वाले वह ऐसे पहले विकेटकीपर बन गए, जिसने कैरिबियाई सरजमीं पर 40 से अधिक रन बनाए और तीन खिलाड़ियों को आउट करने में मदद की. धोनी ने इस मैच में 50 से अधिक की औसत हासिल कर ली. इसके साथ ही वह एक दिवसीय मैचों में 4000 रनों के सफ़र में 50 की औसत रखने वाले दूसरे खिलाड़ी बन गए. भारतीय कप्तान से पहले आस्ट्रेलिया के माइकल बेवन ने 232 मैचों में 53.58 के औसत से 6912 रन बनाए थे.

धोनी अब तक वन डे मैचों की 124 पारियों में 50.18 के औसत और 90.88 के स्ट्राइक रेट से 4567 रन बना चुके हैं. इनमें चार शतक और 31 अर्धशतक हैं. धोनी अब तक 54 वन डे में कप्तानी कर चुके हैं. इनमें से भारत ने 33 जीते और 17 हारे, जबकि चार मुक़ाबले बेनतीजा रहे. भारतीय ओपनर गौतम गंभीर और दिनेश कार्तिक ने तीसरे मैच में 84 रन की साझेदारी की. वेस्टइंडीज में पिछले 12 सालों में एक दिवसीय मैचों में यह भारत की पहले विकेट के लिए हुई सर्वश्रेष्ठ साझेदारी रही. आशीष नेहरा ने इस मैच में 21 रन पर तीन विकेट लेकर विंडीज के ख़िलाफ़ अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन किया. चार साल के बाद भारतीय टीम का हिस्सा बनने वाले आशीष नेहरा ने चार मैचों में 19.16 के औसत से छह विकेट प्राप्त किए, जबकि ईशांत शर्मा तीन मैचों में दो ही विकेट ले सके.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

पाक को मिला ख़तरनाक ग्रुप

मौजूदा ट्वेंटी-20 विश्वकप चैंपियन पाकिस्तान को अगले वर्ष वेस्ट इंडीज में होने वाले इस टूर्नामेंट में ख़तरनाक ग्रुप मिला है, जबकि पूर्व चैंपियन भारत के लिए सुपर आठ में पहुंचने की राह आसान है. पाकिस्तान को ऑस्ट्रेलिया और बांग्लादेश के साथ ग्रुप-ए में रखा गया है. इसे ग्रुप ऑफ डेथ भी कहा जा रहा है. उधर पूर्व चैंपियन भारत को दक्षिण अफ्रीका और एक क्वालीफायर टीम के साथ ग्रुप-सी में रखा गया है. भारत इस वर्ष इंग्लैंड में हुए टी-20 विश्वकप के सुपर आठ दौर से ही बाहर हो गया था. इसके अलावा गत उप विजेता श्रीलंका को भी कठिन ग्रुप मिला है. उसे न्यूजीलैंड और जिम्बाब्वे के साथ ग्रुप बी में रखा गया है. मेजबान वेस्ट इंडीज, इंग्लैंड और एक क्वालीफायर के साथ ग्रुप-डी में है. उधर अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट परिषद (आईसीसी) ने वेस्ट इंडीज में होने वाले टी-20 क्रिकेट विश्वकप के आयोजन स्थलों की भी घोषणा कर दी है. ये मैच वेस्ट इंडीज के चार मैदानों बारबाडोज, गुयाना, सेंट लूसिया और सेंट किट्स में खेले जाएंगे. टूर्नामेंट के पहले मैच में एक मई को मौजूदा विश्व चैंपियन पाकिस्तान बंगलादेश के ख़िलाफ़ अपने अभियान की शुरूआत करेगा. टूर्नामेंट एक मई से 16 मई तक चलेगा. ग़ौरतलब है कि वेस्ट इंडीज में इससे पहले 2007 का वनडे विश्वकप भी हो चुका है.

अनुष्का का अंदाज़

पिछले साल की फिल्म *रब ने बना दी जोड़ी* वाली अनुष्का शर्मा आपको याद हैं? शायद अभी हों, लेकिन अगर उनकी दूसरी फिल्म में इसी तरह देरी होती रही, तो लोगों को उन्हें भूलते वक़्त नहीं लगेगा. पर सवाल है कि वह इसमें कर भी क्या सकती हैं? अनुबंध उन्हें यशराज बैनर के बाहर कोई फिल्म करने की अनुमति ही नहीं देता. अनुबंधों के हिसाब से उन्हें यशराज की दो और फिल्में करनी ही पड़ेंगी. लेकिन इस चक्कर में उनका क़ीमती समय निकलता जा रहा है. शाहिद कपूर के साथ उनकी जोड़ी बना कर एक नई फिल्म फ्लोर पर ले जाने की बात चली थी, पर बात आगे नहीं बढ़ी. यह दूसरी बात है कि अनुष्का इन सब बातों की शिकायत नहीं कर सकतीं, क्योंकि तब उन्हें लेने के देने पड़ जाएंगे. महिमा चौधरी ने एक बार सुभाष घई के साथ अनुबंध के ख़िलाफ़ क़दम उठाने की कोशिश की थीं, जिसके नतीजे में उन्हें फिल्में ही कम मिलने लगीं. पर लगता है कि अनुष्का समझदार हैं. तभी तो कहती हैं कि *रब ने...* में आदित्य चोपड़ा और शाहरुख़ ख़ान से काफी कुछ सीखने को मिला था. जिन लोगों ने मुझे फिल्म का एबीसीडी सिखाया है, उनसे भला क्या शिकायत. यूं उनके अंदर मॉडलिंग का कीड़ा भी कुलबुलाता है. वह इस बारे में सोचती भी बहुत गंभीरता से हैं. पर बात है कुछ ऐसी कि...

दुनिया

बड़ा बनता छोटा पर्दा

सोनिका अग्रवाल

वक़्त लगा, लेकिन वही होकर रहा जिसकी आशंका थी. दशक भर में बड़े पर्दे के लिए छोटा पर्दा वाकई विकल्प बन गया है. सिनेमाघरों में दर्शक लगातार कम होते जा रहे हैं, लेकिन टीवी चैनलों की संख्या बढ़ती ही जा रही है. तमाम सर्वे भी साबित करते हैं कि घरों में रहते हुए लोग सबसे अधिक समय टीवी के सामने गुज़ारते हैं. टीवी की यह बढ़ती ताक़त ही है कि बॉलीवुड के तमाम बड़े सितारे अपने सभी गुमान भूल कर छोटे पर्दे पर किसी न किसी बहाने अवतरित होने लगे हैं. इसमें सबसे अधिक काम आ रहे हैं-रियलिटी शो.

पहले तो इसे महज़ टीआरपी बढ़ाने का ज़रिया माना जाता था, लेकिन आजकल के अधिकतर रियलिटी शो पब्लिसिटी शो अधिक बन गए हैं. क्योंकि इसमें आए दिन जो सेलिब्रेटिज़ आते रहते हैं, वे अपनी आने वाली फिल्मों को प्रमोट करते हैं. सोनी टी.वी पर दोबारा शुरू हुए दस का दम तो इसके लिए सबसे अच्छा मंच ही बन गया है. एक ज़माना वह भी था, जब सलमान ख़ान टीवी को टीबी तक कहते थे. लेकिन आज देखिए कि लगातार पिटती अपनी फिल्मों से घबरा कर दोबारा दस का दम लेकर हाज़िर हैं. सलमान के इस शो में फिल्म प्रमोट करने वालों की लाइन लगी रहती है. यही कारण है कि यहां लोग कम, स्टार ज़्यादा खेलते हुए दिखाई दे रहे हैं. अभी कुछ दिनों पहले इस शो में कैटरीना कैफ़ और नील नितिन मुकेश अपनी नई फिल्म *न्यूयॉर्क* का प्रचार करते दिखाई दिए थे. अब लव आज कल की पब्लिसिटी के लिए सैफ फिल्म की हीरोइन दीपिका पादुकोण की जगह करीना कपूर के साथ नज़र आएंगे. सैफ और दीपिका कुछ दिनों पहले अपनी इस फिल्म का प्रचार करने के लिए इंग्लैंड में हुए ट्वेंटी-20 वर्ल्ड कप में भी गए थे.

इससे पहले कई रियलिटी शो, जैसे सारेगामापा, लिटिल चैंप्स, झलक दिखला जा और वॉयस ऑफ इंडिया आदि में स्टार मेहमान के रूप में आते थे. वे प्रतियोगियों का तो हौसला बढ़ाते ही थे, साथ में अपनी फिल्म की पब्लिसिटी भी करते थे. इन रियलिटी शो से जहां कई सितारों के डूबते करियर को सहारा मिला, कई का करियर नए सिरे बना. इसके सबसे अच्छे उदाहरण तो सदी के महानायक अमिताभ बच्चन ही हैं. जब उनके पास कोई फिल्म नहीं रह गई तो स्टार प्लस पर वह *कौन बनेगा करोड़पति* लेकर हाज़िर हुए और इतिहास बन गए. उनकी नक़ल करते हुए किंग खान यानी शाहरुख़ भी *पांचवीं पास* के ज़रिए मैदान में उतरे, जिसमें फेल हो गए. फिर भी वह आए दिन किसी न किसी रियलिटी शो में दिख ही जाते हैं. और कुछ नहीं, तो पुरस्कार देने ही सही. और तो और, *गजनी* की पब्लिसिटी के लिए आमिर ख़ान तक छोटे पर्दे का सहारा लेते देखे गए. बेहतरीन अभिनेता होते हुए भी अन्नू कपूर फिल्मों से कुछ ख़ास हासिल नहीं कर सके. लेकिन अंत्याक्षरी जैसा रियलिटी शो पेश कर वह हर घर में पहचाने जाने लगे. अब तो अपने डगमगाते करियर को संभालने के लिए कई गायक भी टीवी की शरण में आ गए हैं. सुरेश वाडेकर, कुमार शानू , सोनू निगम, उदित नारायण, अभिजीत, शान से लेकर कविता कृष्णमूर्ति और अलका याज्ञनिक तक विभिन्न चैनलों पर जब-तब दिखते रहते हैं. शान जितने लोकप्रिय *सारेगामापा* और *वॉयस ऑफ इंडिया* प्रस्तुत कर हुए हैं, उतने *फना* और *सांवरिया* आदि फिल्मों में ख़ूबसूरत गाने गाकर भी नहीं हुए. और तो और, भूले-बिसरे तो कुछ जमे-जमाए संगीतकारों ने भविष्य को देख कर रियलिटी शो के ज़रिए टीवी को नया ठिकाना बना लिया है. वैसे इसमें कोई दो राय नहीं कि टीवी नित नए स्टार पैदा कर रहा है. कह सकते हैं कि टीवी पर प्रतिभाओं की एक तरह से खेती ही हो रही है. बड़े तामझाम वाले सिनेमा से उलट टीवी आम नागरिकों के सबसे क़रीब पहुंच गया है. अब तो सीरियलों के नाम भी फिल्मी रखे जाने लगे हैं, जैसे-बालिका वधू, बंदिनी, राजा की आएगी बारात, सीता और गीता आदि. और तो और, सीरियलों के बीच फिल्मों की तरह नाच-गाने भी होने लग गए हैं. ऐसे में सोच कर देखिए कि क्या छोटे पर्दे को अब बड़ा नहीं मान लेना चाहिए?

sonika.chauthiduniya@gmail.com

लखीमपुर की पहचान बने अभिजीत

जी टीवी पर बच्चों का प्रोग्राम-लिटल चैंप्स-फिर शुरू हो गया है. यह पहला मौका है, जब किसी रियलिटी शो के सारे प्रतियोगी इतने प्रतिभावान हैं. मशहूर गायक कैलाश खेर के अनुसार, सब उम्दा. आला दर्जे के कलाकार. गा तो इस तरह रहे हैं, मानो उन सबके अंदर कोई न कोई महान गायक बैठा हो. ऐसे शो में लखीमपुर (खीरी) की शान बढ़ा रहे हैं अभिजीत. उम्र सिर्फ़दस साल, पर गायकी परिपक्व. फिल्मी से इल्मी गायकी तक में बेजोड़. क्या सुगम क्या शास्त्रीय-अभिजीत की गायकी ऐसी हो रही है, जैसे वह अभी से गया जीत. वह जनपद खीरी के नगर लखीमपुर के हाथीपुर मोहल्ले में रहने वाले मनोज श्रीवास्तव का पुत्रा है. मनोज श्रीवास्तव लोक निर्माण विभाग में सहायक अभियंता हैं. दस वर्षीय अभिजीत स्थानीय सेंट डॉन बॉस्को में कक्षा सात का छात्र है. वह न केवल गायन में, बल्कि पढ़ाई और खेलकूद में भी अव्वल. उसके घर में पड़े तमाम प्रमाणपत्र और पदक इसे साबित भी करते हैं. अभिजीत की दो बहनें हैं. सबसे बड़ी बहन पारूल बारहवीं, दूसरी शिवांगी ग्यारहवीं में पढ़ती हैं. एक छोटा भाई-सहज-भी है, जो छठी का छात्र है. सभी डॉन बॉस्को में ही पढ़ते हैं.

अभिजीत में गायन की कला पैतृक विरासत के रूप में आई है. उसके दादा सतीश चंद्र श्रीवास्तव भी लोक निर्माण विभाग में कार्य करते थे, पर 47 वर्ष की अवस्था में ही उनका निधन हो गया. उन्हें गानों का शौक़ था. उन्हें गायन में दक्षता हासिल थी. पिता मनोज श्रीवास्तव ने अपने पिता की जगह नौकरी प्राप्त कर ली. उन्हें भी गाने का शौक़ है. यह पूछने पर कि कॉन्वेंट का छात्र होने पर भी गीत-संगीत की दुनिया में कैसे आ गए, बड़े तर्क एवं विनम्र शैली में अभिजीत ने कहा कि संस्कार तो घर में मिलते हैं. इसे बाज़ार में नहीं ख़रीदा जा सकता. मैंने आज जो कुछ भी अर्जित किया है, वह अपने परिवारीजनों के मध्य में रहकर ही. गायन में बाबा स्व. सतीश श्रीवास्तव और उसके बाद पिता मनोज श्रीवास्तव ही मेरे लिए सबसे बड़े प्रेरणास्रोत हैं.

इसके बाद डॉन बॉस्को के फादर मि. जेराल्ड लोगो से भी मुझे प्रेरणा मिली, जिन्होंने मुझे स्कूल से छुट्टी देकर ऐसी प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए मेरा मनोबल बढ़ाया. महात्मा गांधी और लाल बहादुर शास्त्री को अपना आदर्श मानने वाला अभिजीत के मुताबिक गायन से तो वह हमेशा जुड़ा रहेगा, लेकिन करियर के रूप में वह भारतीय प्रशासनिक सेवा को चुनेगा. वह आईएएस अफसर बनना चाहेगा. ताकि देश में गहरी जड़ें जमा चुके भ्रष्टाचार के ख़िलाफ़ लड़ सके. वह भ्रष्टाचार को बहुत बड़ा वायरस मानता है, जो देश को खोखला कर रहा है.

श्रुति को देखिए और सुनिए भी

कमल हासन की गिनती भारतीय सिनेमा के महान नहीं तो बड़े अभिनेताओं में तो होती ही है. एक फिल्म (दशावतरम) में दस भूमिकाएं करने वाले विश्व के वह इकलौते अभिनेता हैं. पिछले दिनों हिंदी फिल्म *अ वेन्सडे* से वह इतने प्रभावित हुए कि तमिल में भी उसे *रूप उन्नई पोल ओरूवन* नाम से बना डाली. इसमें नसीर वाली भूमिका वह ख़ुद कर रहे हैं, जबकि अनुपम खेर वाली भूमिका में मोहन लाल हैं. लेकिन इस सबसे बड़ी ख़बर यह है कि इस फिल्म में संगीत कमल हासन की पुत्री श्रुति दे रही हैं. श्रुति हासन ने इस फिल्म में ख़ुद गाया भी है. वैसे बता दें कि श्रुति इससे पहले बतौर नायिका लक में भी काम कर चुकी हैं. यह फिल्म शीघ्र ही प्रदर्शित होने वाली है. श्रुति ने एक गाना लक में भी गाया है. यानी प्रतिभा के मामले में वह अपने पिता से कतई कम नहीं हैं. इस मामले में श्रुति वाकई लकी हैं कि लक में अभिनय के साथ उनकी गायन प्रतिभा का भी इस्तेमाल किया गया. सोहम शाह निर्देशित लक एक रोमांचक एक्शन थ्रिलर है. देखने में मां सारिका जैसी लगने वाली श्रुति एक साथ अनेक रूप में करियर शुरू कर रोमांचित हैं. वैसे कमल हासन और सारिका भी अपनी बेटी की सफलता से कम ख़ुश नहीं हैं, पर एक टीस भी उन्हें हैं. ग़ौरतलब है कि कमल हासन और सारिका अब साथ नहीं रहते. बावजूद इसके, श्रुति ने दोनों से समान संबंध बना रखा है. पिता की पुरानी फिल्मों से अभिनय के टिप्स लेने वाली श्रुति को सारिका की गीत गाता चल जैसी फिल्में भी बेहद पसंद हैं.

सोनाक्षी भी सलमान के साथ

बॉलीवुड से बाहर सलमान ख़ान की चाहे लाख ख़राब छवि हो, लेकिन अपनी बिरादरी में उनका काफी सम्मान है. यही कारण है कि अधिकतर नई अभिनेत्रियों ने करियर की शुरुआत सल्लू मियां के साथ ही की है. फिल्मी परिवारों से ताल्लुक रखने वाली अभिनेत्रियां तो ख़ास तौर पर सलमान के साथ ही पहली फिल्म करना चाहती हैं. रवीना टंडन से लेकर सोनम कपूर तक इसकी अनगिनत उदाहरण हैं. इस कड़ी में नया नाम जुड़ने जा रहा है सोनाक्षी सिन्हा का. सोनाक्षी भाजपा सांसद और अपने ज़माने के मशहूर अभिनेता शत्रुघ्न सिन्हा की लाड़ली हैं. इस तरह बेटे के बाद बिहारी बाबू की बेटी का भी बॉलीवुड में पदार्पण होने जा रहा है. हालांकि बेटे लव की पहली फिल्म- सदियां- पूरी हो चुकी है, जबकि सोनाक्षी की अभी फ्लोर पर भी नहीं गई है. लव को मशहूर निर्माता-निर्देशक राज कंवर लांच कर रहे हैं. सदियां में लव के साथ ऋषि कपूर, हेमा मालिनी और रेखा भी हैं. ये सभी शत्रुघ्न सिन्हा के पुराने मित्र हैं. इसी तरह सलमान के पिता सलीम ख़ान से भी शॉटगन की पुरानी मित्रता रही है. यही कारण है कि जब बेटी को लांच करने की बात आई तो सलीम साहब से ही स्क्रिप्ट लिखाई गई. कहानी पारिवारिक क़िस्म की है. सलमान की भूमिका मुख्य तो है ही, लेकिन सोनाक्षी के लिए भी करने को बहुत कुछ है.

कहीं खो न जाएं स्टार

बॉलीवुड में नाम देख कर ही कंपनियां बड़े-बड़े दांव लगा देती थी. राजेंद्र कुमार से लेकर जीतेंद्र तक न जाने कितने ऐसे स्टार हुए, जो सामान्य प्रतिभा के होते हुए भी अपने नाम से ही फिल्मों को हिट करा देते थे. लेकिन अब ज़माना बदल गया है. आज नाम नहीं, काम बिकने लगा है. साधारण लुक वाले अभिनेताओं की फिल्में सिर्फ़ बेहतर काम के कारण ज़बर्दस्त चलने लगी हैं. इनके सामने बड़े-बड़े स्टार फुसफुसिया बम की तरह बेकार साबित होने लगे हैं. अब वह दौर गया, जब श्याम बेनेगल और गोविंद निहलानी अच्छी फिल्में बनाने के लिए पैसे नहीं जुटा पाते थे और कोई मसाला फिल्में बनाने वाला बजट से अधिक पैसा जुटा लेता था.

वक़्त कितना बदल गया है, इसे इससे समझा जा सकता है कि टॉप स्टार्स की मेगा बजट फिल्मों को मनचाही प्राइस नहीं मिल रही है. भारी बजट को देखकर बड़े-बड़े वितरक हाथ खींच रहे हैं. यह हैरानी की बात इसलिए है कि जिन स्टारों की फिल्मों का यह हश्र हो रहा है, कभी उनकी फिल्में फ्लोर पर जाने से पहले ही लोग लाइन में लग जाते थे.

वितरकों के ठंडे रुख़ से अगले कुछ महीनों में रिलीज़ होने वाली कई फिल्मों का भविष्य अधर में लटक गया है. ये फिल्में हैं सलमान ख़ान की *लंदन ड्रीम्स*, अक्षय कुमार की *ब्लू* और आमिर ख़ान की *थ्री इडियट्स*. इन मेगा बजट फिल्मों के निर्माताओं ने अपनी फिल्मों की क़ीमत 110 से 125 करोड़ के बीच लगाई है. जबकि पिछले साल आमिर ख़ान की मेगा बजट फिल्म *गजनी* लगभग 90 करोड़ रुपये में बिकी थी. उसे ख़रीदने वाली कंपनी इस साल *थ्री इडियट्स* के लिए 100 करोड़ रुपये से अधिक का दांव खेलने को तैयार नहीं है. प्रोड्यूसर एंथोनी डिसूज़ा की फिल्म *ब्लू* में अक्षय कुमार लीड रोल में हैं, लेकिन कोई वितरक इसके राइट्स हासिल करने के लिए 125 करोड़ रुपये देने को तैयार नहीं है. सबसे बुरा हाल तो सलमान ख़ान, अजय देवगन, आसिन स्टारर *लंदन ड्रीम्स* का है. इसके निर्देशक विपुल शाह है. *सिंह इज किंग* को मिली कामयाबी से उत्साहित विपुल *लंदन ड्रीम्स* के वर्ल्ड राइट्स के लिए 110 करोड़ रुपये तक की उम्मीद कर रहे हैं. इतनी रक़म देने को कोई तैयार नहीं हो रहा है. हो भी कैसे? आख़िर सलमान ख़ान फ्लॉप जो हो रहे हैं. ऐसा नहीं है कि वितरकों ने धंधा बदल लिया है. नहीं, वे दर्शकों के मिज़ाज को देखते हुए सिर्फ़ अच्छी फिल्मों में पैसे लगाना चाहते हैं. यही कारण है कि छोटे बजट में बनी अच्छी फिल्मों को वे हाथों हाथ ले रहे हैं. अच्छी होने के कारण छोटे बजट की फिल्में अक्सर बड़ा मुनाफ़ा दिलाती हैं. पिछले दिनों कुणाल खेमू और सोहा अली की फिल्म- 99-सिर्फ़ 12 करोड़ में बनी थी और उसने अच्छी कमाई कर ली थी. इसी तरह अभय देओल की *देव डी* 20 करोड़ रुपये में बनी थी. इन सभी फिल्मों ने अपने निर्माताओं को ख़ूब कमा कर दिया. इस तरह पहले दर्शकों की रुचि बदलने के बाद वितरकों के भी रंग बदल लेने से डर है कि बॉलीवुड के टॉप स्टार कहीं खो न जाएं.